UPHIN/2016/67435 | ISSN–2456–0413
जनवरी – मार्च 2024 | मूल्य ₹ 100/-

पीयर रिव्यूड हिन्दी तिमाही पत्रिका

पतहर

बौद्ध शिक्षा दर्शन विशेषांक

बौद्ध शिक्षा दर्शन विशेषांक

छाया चित्रों में संगोष्ठी

पतहर ISSN–2456–0413 जनवरी-मार्च 2024

पीयर रिव्यूड हिन्दी तिमाही पत्रिका

पतहर

वर्ष 09 अंक 01
जनवरी – मार्च 2024
पृष्ठ 92 मूल्य ₹100

ISSN-2456-0413

प्रबन्ध सम्पादक
चक्रपाणि ओझा
सम्पादक
विभूति नारायण ओझा
सहायक सम्पादक
डॉ. कमलेश कुमार यादव

सम्पादक मण्डल

- डॉ. उन्मेष कुमार सिन्हा
- डॉ. विजय आनंद मिश्र
- डॉ संदीप कुमार सिंह

संपादन सहयोग

- डॉ. अपर्णा मिश्रा
- डॉ. इतेन्द्रधर दुबे

Email-hindipatahar@gmail.com

Mob. : 09450740268

http://patahar.blogspot.com/?m=1
www.notnul.com

दिल्ली सम्पर्क

स्वदेश सिन्हा
103 B, पाकेट ए- 1,
मयूर विहार फेज़ - 3, दिल्ली -110096

पतहर, स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं सम्पादक विभूति नारायण ओझा द्वारा ज्योति ऑफसेट प्रेस सलेमपुर देवरिया से मुद्रित एवं कार्यालय ग्राम बहादुरपुर पोस्ट बड़हरा (खुखुन्दू) जिला देवरिया से प्रकाशित।

सम्पादक- विभूति नारायण ओझा

प्रकाशित सामग्री से सम्पादक/ प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवादास्पद मामले देवरिया न्यायालय के अधीन होगा।

UPHIN/2016/67435

पीयर रिव्यूड टीम

- **प्रो. चितरंजन मिश्र,**
  पूर्व प्रति कुलपति, हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा।
- **प्रो. मुरली मनोहर पाठक,**
  कुलपति , श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
- **प्रो. रामदरश राय,**
  कृतकार्य आचार्य, हिंदी विभाग एवं निदेशक पत्रकारिता संस्थान, गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर।
- **डॉ विक्रम मिश्र,**
  सेवानिवृत्त उपाचार्य, हिंदी विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर।
- **प्रो. अरविंद त्रिपाठी,**
  कृतकार्य आचार्य, हिंदी विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर।
- **प्रो. चन्द्रेश्वर,**
  कृत आचार्य, एम.एल.के.पी.जी. कॉलेज, बलरामपुर
- **प्रो. अंजुमन आरा,**
  अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, रेवेंशा विश्वविद्यालय, कटक, उड़ीसा।
- **प्रो. अजय कुमार शुक्ला,**
  अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर।
- **डॉ. सचिन गपाट,**
  सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय मुंबई।
- **डॉ. मधुसूदन सिंह,**
  सहायक आचार्य, दिग्विजय नाथ एलटी प्रशिक्षण महाविद्यालय, गोरखपुर।
- **डॉ. बसुंधरा उपाध्याय,**
  सहायक आचार्य, हिंदी, राजकीय महाविद्यालय, पिथौरागढ़, उत्तराखंड।
- **डॉ. लक्ष्मी मिश्रा,**
  सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर।
- **डॉ. अजीत प्रियदर्शी,**
  सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, डीएवी पीजी कॉलेज लखनऊ।
- **डॉ. प्रकाश कुमार अग्रवाल,**
  सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, खड़गपुर कॉलेज पश्चिम बंगाल।
- **डॉ. प्रदीप त्रिपाठी,**
  सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक, सिक्किम।
- **डॉ बिपिन कुमार यादव,**
  सहायक आचार्य, जेएलएन पीजी कालेज, महराजगंज।

खाता विवरण – पतहर, खाता सं. : 98742200010701
IFSC : CNRB0019874, केनरा बैंक, खुखुन्दू, देवरिया

खाता विवरण – विभूति नारायण ओझा, खाता सं. : 98742200042158,
IFSC Code : CNRB0019874, केनरा बैंक, खुखुन्दू, देवरिया

सदस्यता शुल्क विवरण पृष्ट सं. 09 पर देखें

इस अंक में

❖ **सम्पादकीय** 3

❖ **संगोष्ठी संयोजिका की कलम से** 4

❖ **शोध आलेख**

- **आधुनिक परिप्रेक्ष्य में थेरी गाथा के वैचारिक दर्शन की प्रासंगिकता** 6
  – संजय यादव
- **बौद्ध धर्म एवं वैश्विक शांति** 10
  – डॉ० विजय लक्ष्मी सिंह
- **नरेंद्र मोदी एवं आध्यात्म** 19
  – श्रीमती स्वप्निल पाण्डेय
- **बौद्ध-मूर्तिकला में भाव, लावण्य और दर्शन** 24
  – डॉ. रेखा रानी शर्मा
- **बौद्ध रामकथा: स्वरूप एवं प्रतिपाद्य** 55
  – प्रो. बीर पाल सिंह यादव

❖ **शोध पत्र**

- **आधुनिक शिक्षा में बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता एवं उपादेयता** 11
  – तेज बहादुर /प्रो. उमेश प्रसाद यादव
- **बौद्ध दर्शन में नागार्जुन के शून्यवाद की अवधारणा** 14
  – सन्तोष कुमार प्रजापति/प्रो. (डॉ.) अर्चना मिश्रा
- **वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षा की प्रासंगिकता** 21
  – स्मिता दूबे/डॉ. रश्मि श्रीवास्तव
- **वर्तमान भारतीय परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता** 27
  – पप्पू/प्रो. (डॉ.) अर्चना मिश्रा
- **बौद्ध दर्शन में राजनीतिक चिन्तन** 31
  – डॉ. प्रीति त्रिपाठी
- **बौद्ध दर्शन की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में प्रांसगिकता** 35
  – डॉ. नीरू श्रीवास्तव
- **आधुनिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षा** 37
  – निकिता गुप्ता
- **पालि धम्मपदट्ठकथा में अभिव्यक्त बौद्ध शिक्षा एवं दर्शन का आधुनिक संदर्भ में मूल्यांकन** 41
  – कृष्ण कुमार शाह
- **बौद्ध कालीन शिक्षा दर्शन और योग शिक्षा** 45
  – कुँवर रिपुदमन सिंह
- **बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं उसकी वर्तमान में उपयोगिता** 48
  – डॉ० फूलचन्द यादव
- **बौद्धकालीन शिक्षा की आधुनिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता** 50
  – अनुप्रिया सिंह
- **मानव उत्थान हेतु बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं संतुलित दृष्टिकोण** 52
  – आराधना श्रीवास्तव

❖ **Research Paper**

- **Contribution of Buddhism to the Indian Culture** 58
  – Ranjana Singh/Prof. M.C. Shrivastava
- **Buddhist Perspectives On Environmental Ethics** 60
  – Anant Kumar Pathak
- **Buddhism And its Relevance in Modern World** 66
  – Sneha Yadav
- **Relevance and Applicability of Buddhist Principles In Modern Education** 69
  – Gulsheen Parvez
- **Buddhist Educational Philosophy : Challenges And Solutions** 73
  – Dr. Madhurima Tiwari/Dr. Mamata Tiwari
- **Role of Buddhism in the Development of Indian Education** 76
  – Anshika Jaiswal
- **Buddhist Education Phylosophy and Balanced Approach** 80
  – Khushi Singh
- **Buddhist philosophy an ideal source of world peace** 83
  – Tahreem Fatima

❖ **Seminar Report** 86
  – Dr. Mamta Tiwari

सम्पादकीय

ऐसे समय में जब समूची दुनिया हिंसा, युद्ध और नफरत के दौर से गुजर रही है। हथियारों की खरीद-फरोख्त बढ़ गई है, प्रेम और अहिंसा जैसे मूल्य संकट में हैं, मातृभाषाओं पर अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है । दुनिया भर में दु:ख और गरीबी बढ़ रही है, खुशहाली का रास्ता लगातार घट रहा है। वर्तमान व्यवस्था लोगों के दुखों को समाप्त कर पाने में असमर्थ हो चुकी है। दुनिया भर में पूंजीवादी साम्राज्यवादी शक्तियां युद्ध का वातावरण बना रही हैं, सीमाओं पर तनाव व्याप्त है। हथियारों का बाजार काफी बढ़ चुका है तब हमें शताब्दियों पूर्व के उस महामानव महात्मा बुद्ध के महान विचारों और शिक्षाओं से प्रेरणा लेकर आगे बढ़ने की जरूरत है। हमारे समय की गंभीर चुनौतियों से निपटने में बौद्ध दर्शन निश्चित रूप से सहायक सिद्ध होगा।

कपिलवस्तु के विशाल राजमहल को त्याग देने वाले सिद्धार्थ (बुद्ध) ने सर्वप्रथम दु:ख, भूख और गरीबी को पहचानने का न सिर्फ काम किया था बल्कि उसके कारणों को भी बताया और दुख से मुक्त होने का मार्ग भी सुझाया । जिसे अष्टांगिक मार्ग के नाम से हम सब जानते हैं। सदियों पूर्व महात्मा बुद्ध के परिवर्तनकारी विचारों ने पूरी दुनिया को प्रभावित किया था। हजारों वर्ष बीतने के बाद भी उनके विचारों को मानने वाले अनुयायी भारत समेत पूरी दुनिया में फैले हैं। बुद्ध ने अपने समय के आडम्बरों, कर्मकांडों, हिंसा आधारित यज्ञ आदि की जगह एक ऐसा धर्म स्थापित किया जिसके केंद्र में अहिंसा, करुणा, दया, बराबरी जैसे मूल्य थे। बौद्ध धर्म की शिक्षा व्यवस्था में सभी के लिए दरवाजे खुले थे। बौद्ध काल में जनभाषा में शिक्षा देने की व्यवस्था दिखलाई पड़ती है। आज शिक्षा में अंग्रेजी के वर्चस्व को स्थापित किया जा रहा है तब बुद्ध कालीन उस शिक्षा व्यवस्था की तरफ देखना जरूरी लगता है कि कैसे उस समय संस्कृत जैसी वर्चस्व वाली भाषा के सामने जन भाषा में सभी के लिए समान शिक्षा की बात कही गई थी। उनकी शिक्षा व्यवस्था में जाति, धर्म, लिंग तथा किसी भी तरह की गैर बराबरी नहीं दिखती है। जबकि हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था गैर बराबरी से ग्रस्त है। बच्चों पर असमानता का दुष्प्रभाव सीधे तौर पर देखा जा सकता है। बौद्ध कालीन शिक्षा व्यवस्था से हम बहुत कुछ आज सीख सकते हैं। हमारा समाज प्रेम और करुणा पर आधारित रहा है। हम आज नफरत और संवेदनहीनता के दौर से गुजर रहे हैं। हर रोज समाज में नफरत व द्वेष की खबरें सुनाई दे रही हैं। संवेदनहीनता इस कदर हावी है कि आए दिन क्रूरता की हदें पार कर देने वाली हृदयविदारक घटनाएं मन को विचलित कर दे रही हैं। सहनशीलता की क्षमता लगातार कम होती जा रही है। बच्चे, बच्चियां, महिलाएं, पुरुष, वनस्पतियां, नदी, पहाड़, पशु-पक्षी सब इन क्रूरताओं की भेंट चढ़ते जा रहे हैं। नजदीकी मानवीय रिश्ते भी हर पल कलंकित होते हम देख सकते हैं। आखिर ऐसा क्यों है? ऐसा शायद इसलिए है कि हमने बुद्ध के विचारों और शिक्षाओं को पढ़ना छोड़ दिया है।

हमने उनको भी अनेक भगवानों की तरह मंदिरों में पूजा करने के लिए बंद कर रखा है। जबकि बुद्ध ने हमेशा मूर्ति पूजा और कर्म-कांड का पुरजोर विरोध किया था। उन्होंने अपने अनुयायियों को कहा था कि मेरे उपदेशों पर विश्वास रखो, बुद्धि से उन्हें समझने की कोशिश करो और हर एक उपदेश को अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करो। ऐसे क्रूर और अमानवीय होते समय में हमारे सामने बुद्ध जैसे महामानव के क्रांतिकारी विचार एक मशाल की तरह हमारे मार्ग को मनुष्यता के करीब ले जाने में सहायक सिद्ध होंगे। ऐसे में हमें बुद्ध के महान विचारों को अपने अध्ययन और अध्यापन का हिस्सा बनाते हुए जीवन में धारण करने की आवश्यकता है। तभी हम सच्चे अर्थों में बुद्ध की इस धरा को और ज्यादा मानवीय बना पाएंगे। आज भी जीवन यापन के लिए अधिकांश आबादी सरकारी योजनाओं पर ही निर्भर है । वर्ल्ड इनइक्वलिटी लैब (विश्व असमानता रिपोर्ट) के अनुसार 2022-23 में देश की अमीरी और गरीबी के बीच की खाई पिछले सौ साल में सबसे ज्यादा बढ़ी है। परिणाम स्वरुप देश की व्यापक आबादी बुनियादी जरूरतों के लिए भी संघर्षरत है। इस माहौल में बुद्ध की सम्यक दृष्टि प्रासंगिक दिखती है। जहां वे यह मानते हैं कि दु:ख तो है लेकिन अकारण नहीं है,दु:ख दूर किया जा सकता है और इसके उपाय भी हैं। बुद्ध के दिखाएं मार्ग पर चलकर हमें हर तरह की समस्याओं के समाधान के लिए तैयारी करनी होगी । साथ ही सत्य, अहिंसा, करुणा, न्याय, प्रेम और बंधुता आदि मानवीय मूल्यों की रक्षा करने के लिए हमें बुद्ध के महान विचारों से प्रेरणा ग्रहण करते हुए एक ऐसी दुनिया बनानी होगी जहां जाति, धर्म के नाम पर नफरत ना हो मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण ना हो। सबको बराबरी और सम्मानजनक जीवन उपलब्ध हो, हमारा समाज प्रगतिशील एवं मानवीय मूल्य वाला बने तथा मनुष्यता के करीब हो तभी हम सच्चे अर्थों में महात्मा बुद्ध और उनके विचारों को बचा पाएंगे।

पतहर पत्रिका का यह अंक महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी की उपलब्धियों को सहेजने का एक प्रयास है। चंद्रकांति रमावती देवी आर्य महिला पीजी कॉलेज गोरखपुर व राजकीय बौद्ध संग्रहालय गोरखपुर के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित दो दिवसीय इस राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय महत्व की संगोष्ठी में आए विद्वतजन के विचारों को संग्रहित कर छात्र-छात्राओं, अध्येताओं के लिए एक उपयोगी अंक तैयार करने में मिले सहयोग के लिए महाविद्यालय परिवार, आयोजन समिति और सभी शुभचिन्तको के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हुए यह उम्मीद की जाती है कि आप सभी पाठक इस विशेष अंक के बारे में अपनी राय से हमें अवगत कराएंगे । इस अंक को तैयार करने में जिन प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष व्यक्तियों, संस्थाओं ने सहयोग किया है सबके प्रति पुनः पतहर परिवार की तरफ से कोटिश: आभार।

• **विभूति नारायण ओझा,** सम्पादक

संगोष्ठी संयोजिका की कलम से

डॉ. अपर्णा मिश्रा

आधुनिक विश्व के गतिशील परिदृश्य के बीच बौद्ध शिक्षा दर्शन के सिद्वांत संतुलित विश्व की वकालत करते हुए जटिल चुनौतियों का समाधान करने हेतु एक आकर्षक रुपरेखा प्रदान करते हैं। बुद्ध की शिक्षाओं पर आधारित यह दर्शन समकालीन समस्याओं से निवारण के लिये आवश्यक स्तम्भों के रूप में अर्न्तसम्बन्ध नैतिक आचरण और आन्तरिक सद्भाव को रेखांकित करता है। प्रौद्योगिकी के प्रसार पर्यावरणीय संकट और सामाजिक जटिलताओं के साथ बौद्ध शिक्षा दर्शन के सिद्धांत, जागरुकता, करुणा एवं समग्र विकास को विकसित करने के लिये व्यापक मार्ग दर्शन प्रदान करते हैं। आज जागरूकता और सहानुभूति के महत्व पर जोर देते हुए यह दर्शन ज्ञान और लचीलेपन के माध्यम से समसामयिक मुद्दों से जुड़ने के लिये प्रोत्साहित करता है। पारम्परिक बौद्ध ज्ञान को समकालीन शैक्षिक पद्धतियों के साथ एकीकृत करके, इस दर्शन का उद्देश्य व्यक्तियों के आधुनिक युग की जटिलताओं को उद्देश्य एवं अवबोध के साथ पथ-प्रदर्शित करते हुए एक संतुलित दृष्टिकोण एवं आन्तरिक शान्ति को बढ़ावा देने पर जोर देना है।

आज विश्व में हिंसा और भेदभाव बढ़ रहा है, मनुष्य विचारों से हिंसात्मक होता जा रहा है। आतंकवाद या फिर दो देशों के बीच युद्ध जैसे हालात हैं। ऐसी विकट परिस्थिति में बौद्ध दर्शन कहीं ज्यादा प्रासंगिक हो जाता है। व्यक्ति के विनाशकारी विचारों को बदलना और उन पर नियंत्रण रखना बहुत जरूरी है। लगभग ढाई हजार साल पहले बुद्ध ने मानवीय प्रवृत्तियों का विश्लेषण करते हुए कहा था कि मनुष्य का मन ही कर्मो का नियंता है। इसलिये मानव की गलत प्रवृतियों को नियंत्रित करने के लिये उसके मन में सदविचारों का प्रवाह कर उसे सद्मार्ग पर ले जाना जरूरी है। उन्होंने यह सद्मार्ग बौद्ध धर्म के रूप में दिया था। अतः आज मानव-मात्र की कुप्रवृतियों, जैसे-हिंसा, शत्रुता, द्वेष, लोभ आादि मुक्ति पाने के लिये बौद्ध दर्शन को समझने की जरुरत है।

इन्हीं उपर्युक्त समस्याओं के विचार विमर्श, चिन्तन-मनन एवं समाधान हेतु संस्कृति विभाग उ०प्र० द्वारा अनुदानित द्वि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन 16-17 दिसम्बर 2023 को "बौद्ध शिक्षा दर्शन: आधुनिक विश्व की जटिल चुनौतियाँ एवं संतुलित दृष्टिकोण" विषय पर चन्द्रकान्ति रमावती देवी आर्य महिला पी०जी० कॉलेज गोरखपुर और राजकीय बौद्ध संग्रहालय के संयुक्त तत्वावधान में बी०एड्० विभाग, चन्द्रकान्ति रमावती देवी आर्य महिला पी०जी० कॉलेज, गोरखपुर परिसर में किया गया। इस संगोष्ठी का उद्देश्य–

- छात्रों को गम्भीर चिन्तन के लिये प्रोत्साहित करना।
- सभी जीवित प्राणियों के प्रति करुणा, सहानुभूति समझ एवं परोपकारिता की संस्कृति को बढ़ावा देना।
- ज्ञान से परिपूर्ण सोच को बढावा देना।
- आत्म जागरुकता एवं आध्यात्मिक विकास द्वारा आंतरिक शान्ति की खोज हेतु मार्ग दर्शन करना।
- विश्वस्तरीय सम्बन्ध और परस्पर निर्भरता की समझ को बढावा देना।

इस द्वि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में मुख्य-विषय से सम्बन्धित निम्नलिखित उपविषयों तथा अन्य अध्ययनों पर विचार- विमर्श किया गया -

- आधुनिक शिक्षा में बौद्ध सिद्धांतों की प्रासंगिकता एवं प्रयोज्यता।
- आधुनिक शिक्षा प्रणाली में बौद्ध दर्शन के सिद्धांतों की अनुकूलता का विश्लेषण।
- बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं संतुलित दृष्टिकोण।
- बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं समकालीन चुनैतियॉ।
- आधुनिक शिक्षा की चुनौतियॉ एवं बौद्ध दर्शन।
- सामाजिक समानता एवं समरसता के परिप्रेक्ष्य में बौद्ध दर्शन एवं विश्वशांति।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परि-प्रेक्ष्य में बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता।

राष्ट्रीय संगोष्ठी के प्रस्ताव, प्रेषण, आयोजन की स्वीकृति, स्मारिका, मुद्रण, संगोष्ठी संचालन एवं कार्यवृत्त के प्रकाशन की सफलता परिणति तक मार्गदर्शन, सहयोग, उत्साहवर्द्धन करने वाले सभी विद्वतजन एवं सहयोगियों के प्रति हृदय से आभारी हूँ। जिनकी प्रेरणा से राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन एवं कार्यवृत्त के रूप में इस

शोध जर्नल के प्रकाशन का अवसर प्राप्त हुआ। राष्ट्रीय संगोष्ठी कार्यक्रम की रूपरेखा निम्नलिखित है-

मैं राष्ट्रीय संगोष्ठी के संसाधन व्यक्तियों के रूप में प्रथम दिवस उद्घाटन सत्र में, कार्यक्रम अध्यक्ष प्रोफेसर पूनम टण्डन (कुलपति, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपर) मुख्य अतिथि प्रो. हरिकेश सिंह पूर्व कुलपति, जयप्रकाश विश्वविद्यालय छपरा, बिहार, संगोष्ठी में आधार वक्तव्य प्रो० द्वारकानाथ, पूर्व अध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर, डॉ. धर्मव्रत तिवारी, पूर्व आचार्य, प्रौढ सतत् एवं प्रसार शिक्षा विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर एवं श्री पुष्पदंत जैन, अध्यक्ष, प्रबन्ध समिति, चन्द्रकान्ति रमावती देवी आर्य महिला पी.जी. कालेज, गोरखपुर, डॉ. यशवंत सिह राठौर, उप निदेशक, राजकीय बौद्ध संग्रहालय, गोरखपुर, प्रथम तकनीकी सत्र में प्रो. राजेश सिंह, आचार्य, शिक्षा संकाय, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर, प्रो. विपुला दुबे, पूर्व अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर। द्वितीय तकनीकी सत्र में प्रो. सरिता पाण्डेय, शिक्षाशास्त्र विभाग, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर, डॉ. आसुतोष मिश्र, अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय महाविद्यालय, चन्द्रबदनी, नैखरी, टिहरी गढवाल, उत्तराखण्ड, द्वितीय दिवस में, मुख्य वक्ता प्रो. सुषमा पाण्डेय, आचार्य, शिक्षा संकाय, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर, प्रो. नरेश प्रसाद भोक्ता, पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षा-संकाय, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर, विश्वविद्यालय, गोरखपुर, प्रो. रमेश प्रसाद पाठक, पूर्वविभागाध्यक्ष, लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत केन्द्रिय विश्वविद्यालय, नई दिल्ली एवं डॉ. बृजेश कुमार पाण्डेय, प्राचार्य,

रामजी सहाय महाविधालय, रूद्रपुर, देवरिया के सारगर्भित व्याख्यान एवं आशीर्वाद के लिये हृदय से आभारी हूँ।

मैं कुलपति, प्रो. संजीत कुमार गुप्त, जननायक चन्द्रशेखर विश्वविद्यालय बलिया, डॉ. विभ्राट चन्द्र कौशिक, अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, बुद्ध स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कुशीनगर, डॉ. पूर्णेश नारायण सिंह, अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, एच.आर.पी.जी. कालेज, खलीलाबाद, सिद्धार्थनगर, डॉ. उमेश प्रसाद यादव, अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, जवाहरलाल नेहरू पी.जी. कालेज, महराजगंज, डॉ. के.डी. तिवारी, अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, बी.आर. डी. पी.जी. कालेज, देवरिया, डॉ. अर्चना मिश्रा, अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, रतनसेन डिग्री कालेज, बॉसी के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने राष्ट्रीय संगोष्ठी के समापन अवसर पर अपना सारगर्भित व्याख्यान एवं आशीर्वाद प्रदान किया।

मैं महाविद्यालय परिवार के सभी सदस्यों प्रबन्धक डॉ. विजयलक्ष्मी मिश्रा, प्राचार्य डॉ. सुमन सिंह, उप प्राचार्य, श्रीमती स्वपनिल पाण्डेय, संगोष्ठी के समन्वयक डॉ. रेखा श्रीवास्तव सह समन्वयक डॉ. ममता तिवारी, आयोजन सचिव डॉ. इतेन्द्र धर दूबे, डॉ. विकास कुमार श्रीवास्तव सदस्य डॉ. वीरेन्द्र कुमार गुप्त, डॉ. प्रीती तिवारी, डॉ. निशा श्रीवास्तव, श्रीमती देवता पाण्डेय, डॉ. पवन कुमार, डॉ. धीरज कुमार, डॉ. सारिका पाण्डेय, डॉ. अनिता सिंह, डॉ. अमिता अग्रवाल, डॉ. रेखा रानी शर्मा, डॉ. आस्था प्रकाश, डॉ. शिवानी श्रीवास्तव, सुश्री सुमनलता यादव, श्रीमती श्वेता सिंह, श्री अनन्त कुमार पाठक, श्री शैलेन्द्र कुमार राव, श्रीमती ऋचा दूबे, श्रीमती पूजा गुप्त, सुश्री आकृति सिंह, श्री शंकर थापा, श्रीमती अंजली शुक्ला, श्री नरेन्द्र कुमार रावत, श्री शैलेश कुमार यादव, श्रीमती मन्जू दूबे एवं राजकीय बौद्ध संग्रहालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति हृदय से आभारी हूँ जिनके सहयोग से मुझे यह अवसर प्राप्त हो सका।

इस संगोष्ठी के आयोजन में अपने शोध पत्र/लेख प्रदान कर बहुमूल्य सहयोग प्रदान करने वाले सभी विद्वानों, शोधार्थियों, लेखकों के प्रति आभारी हूँ। राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन के समाचार से लेकर संगोष्ठी में दो दिनों तक विद्वतजन, संसाधन व्यक्तियों, प्रतिभागियों के विचारों को जन-जन पहुँचाने में योगदान करने वाले समाचार पत्रों, सभी व्यूरों चीफ, मीडिया प्रतिनिधियों के प्रति हृदय से आभार एवं कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ।

राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन में प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष सहयोग करने वाले सभी के प्रति कृतज्ञ तथा आभारी हूँ, जिनके नाम का उल्लेख नहीं हो सका है।

• संयोजिका, राष्ट्रीय संगोष्ठी
अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग,
चन्द्रकाति रमावती देवी आर्य महिला
पी.जी. कालेज, गोरखपुर

ISSN–2456–0413

शोध आलेख

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में थेरी गाथा के वैचारिक दर्शन की प्रासंगिकता

संजय यादव

थेरी गाथा बौद्ध भिक्षुणियों के जीवनानुभवों को व्यक्त करने वाला काव्य है, जहाँ उन्होंने अपने जीवन काव्य को गाया है। इसमें पाँच सौ चौबीस गाथाओं (पालि श्लोकों का संग्रह है, जिसमें तिहत्तर बौद्ध भिक्षुणियों के उद्गार सन्निहित हैं। उनकी भाषा अत्यंत संगीतात्मक, आत्माभिव्यंजनात्मक गीतिकाव्य की शैली के आधार पर देखी जा सकती है। थेरी गाथा को बौद्ध साहित्य के अंतर्गत सुत्त पिटक के खुद्दक निकाय के नवें खंड के रूप में संकलित किया गया है।

महावंस के अनुसार ईसा पूर्व 29 राजा 'वट्टगामिनी अभय के संरक्षण में एक चौथी संगीति की बैठक हुई, जिसमें सम्पूर्ण त्रिपिटक लिपिबद्ध कर लिया गया। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि थेरी गाथा का पूर्ण रूप से संपादन इसी काल में हुआ होगा। थेरी गाथा का प्रथम रोमन संस्करण हरमेन ओल्डेन वर्ग तथा आर पिशेल द्वारा 1883 ई. में सम्पादित किया गया। प्रथम हिन्दी अनुवाद भरत सिंह उपाध्याय द्वारा सन् 1947 ई. में हिन्दुस्तानी एकेडमी की तिमाही पत्रिका हिन्दुस्तानी के अप्रैल, सितम्बर अंक में निकला था।

पालि का थेर शब्द संस्कृत के स्थविर शब्द से निकला है। इस प्रकार थेरी गाथा शब्द स्थविरों अर्थात् वृद्ध, पुराने या प्राथमिक बौद्धों के गीतों का बोधक है। इसी प्रकार प्राथमिक बौद्ध साधिकाओं के गीत थेरी गाथा कहलाते हैं। थेरवाद सम्प्रदाय से संबंधित होने के कारण भी इन भिक्षुणियों को थेरी कहा गया तथा इनकी कविताओं का संकलन थेरी गाथा कहलाया।

बौद्ध साहित्य में नारी की स्थिति का जो चित्रण हुआ है वह मुख्यतः 500 ई0 पू0 से लेकर 500 ई0 की कालावधि का है। लगभग एक हजार वर्षों की इस लम्बी अवधि में भारतीय समाज की स्थिति में अनेक परिवर्तन हुए इसी अवधि में यवनों का आक्रमण हुआ और वक्षु, वैक्ट्रीया से लेकर कश्मीर और उत्तरी पंजाब तक सैकड़ों वर्षों तक उनका शासन बना रहा। यवनों ने अपनी यूनानी सभ्यता का भारतीय समाज पर असर डाला। तदनन्तर शकों, हूणों, पल्लवों, कुषाणों के आक्रमण हुए। इनमें से शकों और कुषाणों ने कतिपय शताब्दियों तक भारत पर राज किया। उन्होंने भी अपनी परम्परागत सामाजिक मान्यताओं से भारतीय समाज को प्रभावित किया।

नारी का योगदान विश्व की विभिन्न संस्कृतियों के निर्माण में रहा है। किसी भी राष्ट्र की संस्कृति का मुख्य मापदंड भी नारी की स्थिति ही रही है। स्त्रियों की स्थिति में युग के अनुरूप परिवर्तन देखा जा सकता है। वैदिक युग से लेकर पूर्व मध्य युग तक उनकी स्थिति में आरोह अवरोह की स्थिति बनी रही है तथा उनके अधिकारों में भी निरंतर परिवर्तन होते रहे हैं। प्राचीन भारतीय संस्कृति में स्त्रियों की स्थिति अत्यंत उन्नत एवं परिष्कृत थी। वैदिक काल से लेकर ईस्वी शताब्दी के प्रारम्भ तक कन्या का वेदाध्यन, उपनयन संस्कार से प्रारम्भ होता था। स्त्रियाँ वेदों का अध्ययन तथा मंत्रोच्चारण भी करती थीं। "पूर्व वैदिक काल में लोपामुद्रा, विश्वावारा, सिकता तथा घोषा आदि अनेक विदुषी स्त्री कवियों ने वैदिक मंत्रों की रचना भी की थी।

उत्तर वैदिक काल में समाज का विस्तार इतना अधिक हो गया था कि उसको कुछ गोत्रों, कुलों की सीमा में बद्ध रखना संभव नहीं था। इस काल में जनपदों और नगरों का विकास हुआ, जिनमें परिवारों की व्यवस्था सुदृढ़ हो गयी थी। परिवार में स्त्रियों का स्थान उत्तरोत्तर गृहकार्यों तक ही सीमित होता गया। अब वे सामाजिक दृष्टि से पुरुष के समान अधिकार वाली नहीं रह गयीं। उनका कार्य केवल संतानोत्पत्ति करना और गृहस्थी सम्भालना ही रह गया। इस तरह बौद्ध युग के प्रारम्भ के ठीक पूर्व तक के समाज में नारी का स्थान वैदिक काल की तुलना में पर्याप्त निम्नस्तरीय हो चुका था। वह पुरुष की अर्द्धांगिनी होते हुए उसके समान अधिकारों वाली नहीं रह गयी थी।

उत्तर वैदिक काल स्त्रियों की अवनति के आरम्भिक काल के रूप में देखा जा सकता है। जिसका प्रमुख कारण सामाजिक संकीर्णता का आरम्भ होना तथा राजनीतिक अस्थिरता को माना जा सकता है। महाजनपद काल 600 ई0 पू0, 325 ई0 पू0 विभिन्न धार्मिक आंदोलनों का काल था। जिसमें जैन, बौद्ध, वैष्णव, शैव आदि प्रमुख धर्मों का उदय हो रहा था। जैन काल में नारी के माता रूप को सम्मान प्राप्त था। जैन धर्म में चौबीसवें तीर्थंकरों में उन्नीसवें तीर्थंकर के रूप में मल्लीनाथ नामक स्त्री का नाम लिया जाता है। वहीं दूसरी ओर नारी को कामवासना का साधन और मोक्ष प्राप्ति में बाधक बताते हुए उसे त्यागने योग्य भी कहा गया है। रामधारी सिंह दिनकर के शब्दों में "जैन धर्म का यही विश्वास था कि मोक्ष संन्यास के बाद ही मिल सकता है। यही कारण है कि श्वेताम्बर पन्थ वालों ने साफ घोषणा कर दी थी कि मुक्ति नारियों के लिए नहीं है। नारियों को चाहिए कि वे सीमित धर्म का पालन

ISSN-2456-0413

करें जिससे अगले जन्म में वह पुरुष जन्म ग्रहण कर सकें, क्योंकि मोक्ष लाभ के समीप आने पर उन्हें पुरुष होकर जन्म लेना पड़ेगा।

नारी के प्रति ऐसे दृष्टिकोण के बाद भी उच्च कुल की नारियों के लिए शिक्षा का अच्छा प्रबंध था तभी जैन धर्म के साहित्य को समृद्ध बनाने वाली स्थूल भद्र की सात बहनों के नाम विशेष रूप से मिलते हैं। बौद्ध साहित्य में नारी के पारिवारिक जीवन का जो रूप चित्रित हुआ है वह उत्तर वैदिक काल जैसा ही है। बुद्ध द्वारा आरम्भ किए गये बौद्ध धर्म में बिना किसी भेदभाव के सभी को निर्वाण प्राप्त करने का अधिकार था। बौद्ध धर्म के संस्थापक महात्मा बुद्ध ने धर्म द्वार सभी नारियों के लिए खोल दिए थे। अधिकांश प्रताड़ित नारियाँ बौद्ध संघ में दीक्षित हो जाती थीं। इस युग में नारी शिक्षा को उचित रूप में नियोजित किया गया था। भिक्षुणियों द्वारा रचित थेरी गाथा इस बात का प्रमाण है। धार्मिक कार्यों में स्त्रियाँ समान रूप से सम्मिलित होती थीं। प्रो0 सुगम आनंद के अनुसार "सयुंक्त निकाय में ऐसी भिक्षुणियों के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है, जो भाषण देने की कला के लिए विख्यात थीं। सुभद्रा, कुंडल केशा इत्यादि ऐसी ही प्रसिद्ध भिक्षुणियाँ थीं जो धर्म दर्शन में पारंगत थीं। स्त्रियाँ शिक्षिकाएँ होती थीं और लघु उद्योगों में कार्यरत थीं।

थेरी गाथा में विभिन्न वर्गों एवं वर्णों की महिलाएँ शामिल हैं, जिन्होंने भिक्षुणी बन अपने जीवन के संचित अनुभवों को इन गाथाओं में गाया है। थेरियों में काफी विविधता देखने को मिलती है। थेरी गाथा में विभिन्न वर्गों एवं वर्णों की महिलाएँ शामिल हैं, जिन्होंने भिक्षुणी बन अपने जीवन के संचित अनुभवों को इन गाथाओं में गाया है। खेमा, सुमना, शैला और सुमेधा कोसल, मगध और आलवी राजवंशों की महिलाएँ थीं। महाप्रजापति गौतमी, तिश्या, अभिरूपा नन्दा ,सुन्दरी नन्दा ,जेन्ती सिंहा, धीरा, मित्रा, भद्रा, उपशमा और अन्यतरा आदि थेरियाँ शाक्य और लिच्छवी सामंतों की कन्याएँ थीं। बौद्ध धर्म के पतन के पश्चात् नारी शिक्षा की प्रगति भी अवरुद्ध हो गयी।

स्त्रियों का परिवार में महत्वपूर्ण योगदान समझा जाता था। नारियाँ स्वामी के प्रति निष्ठा वाली होती थीं। उसके कार्यों में भाग लेती थीं। तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ अपने पति के सुख में अपना सुख समझती थीं। वे पति को प्रसन्न रखने का भरपूर प्रयास करती थीं। पति के द्वारा अर्जित किए हुए धन का उचित उपयोग करती थीं जिससे परिवार की मर्यादा बढ़े। साथ ही साथ यह भी ज्ञात होता है कि स्त्रियां परिवार की सुख एवं समृद्धि के लिए निरंतर तत्पर रहती थीं। परिवार में इनका स्थान सम्मान जनक था। इनका पारिवारिक जीवन सुखमय था, क्योंकि इनकी इच्छाओं पर ही परिवार के कार्य सम्पादित होते थे।

परिवार में लड़कियों का जन्म हेय नहीं माना जाता था। कन्या के उत्पन्न होने पर आनंद के साथ सम्पूर्ण संस्कार किए जाते थे। इनके विवाह के सम्बन्ध में बुद्ध नाति उग्ग से पूछने पर वह कुमारियों को उपदेश देते हैं तुम पति की सेवा करो, उसके कार्यों में हाथ बंटाये, आये हुए अतिथियों का सत्कार करो एवं सुरा आदि पीने वाली न बनो। इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि परिवार में विवाह के पूर्व कन्याओं को समुचित उपदेश देकर उनके विवाह संस्कार संपन्न होते थे।

तत्कालीन समाज में स्त्रियों का पारिवारिक जीवन महत्वपूर्ण स्थान रखता था। वे परिवार में रहकर पशुओं का भरण पोषण पुत्रवत करती थीं। आये हुए अतिथियों का स्वागत स्त्रियाँ स्वयं करती थीं और परिवार में आये हुए अतिथियों, मित्रों के पैर भी धोती थीं। इससे परिवार की महत्ता और श्रेष्ठता स्पष्ट होती है। इनका योगदान परिवार के प्रत्येक कार्य में रहता था। स्त्री पति के साथ परिवार के कार्यों में हाथ बंटाती थी। वह गृहस्थी के कर्म में दक्ष हुआ करती थीं। इस प्रकार इनका पारिवारिक जीवन सुखमय एवं प्रमोद जनक था। थेरी गाथा के अंतर्गत मुत्ता भिक्षुणी कोशल जनपद की दरिद्र ब्राह्मण कन्या थी। उसका विवाह दरिद्र कुबड़े पति से हुआ। उसने पति से निवेदन किया कि गृहस्थाश्रम में रहना मेरे लिए संभव नहीं है। वह ज्ञान प्राप्ति के उल्लास में स्वायत्त भाव के साथ गाने लगी।

सुमुत्ता सधुमुत्ताम्हि,
तीहि खुज्जेहि मुत्तिया।
उदक्खलेन मुसलेन,
पतिना खुज्जकेन च।
मुत्ताम्हि जातिमरणा,
भवनेन्ति समहता ति ।।

मैं सुमुक्त हो गयी! भली प्रकार से विमुक्त हो गयी। तीन समस्याओं से मैं भली विमुक्त हो गयी। ओखली से, मूसल से और अपने कूबड़ स्वामी से मैं भली प्रकार मुक्त हो गयी हूँ। किन्तु इससे भी एक और महान मुक्ति मुझे मिल गयी कि मैं जरा और मरण से ही मुक्त हो गयी! मेरी भव रज्जु ही कट गयी।

मुत्ता अपनी स्वायत्तता को लेकर अत्यंत प्रसन्न है साथ ही वह अपनी मुक्ति को लेकर अत्यंत उत्साहित भी है। वह कहती है कि मुझे तीन समस्याओं से मुक्ति मिल गयी है, जिस कारण मुझे कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था। वह तीन समस्याएँ थीं जिनमें दो समस्याएँ ओखली तथा मूसल से संबंधित थीं। इन दोनों समस्याओं के कारण मुत्ता का जीवन केवल घरेलू कार्यों तक ही सीमित रह गया था तथा यह कार्य अत्यंत परिश्रम वाला भी था, जिस कारण मुत्ता इन दोनों से मुक्ति चाहती थी। तीसरी समस्या उसका कुबड़ा स्वामी था जो उसे कोई महत्त्व नहीं देता था इसलिए वह गृहत्याग देती है। गृहत्याग के पश्चात् मुत्ता भिक्षुणी बन जाती है तथा कहती है कि मैं वृद्धावस्था तथा मृत्यु से मुक्त हो गयी हूँ क्योंकि उसे लगता है कि इस कारण उसने सांसारिक बन्धनों को त्याग दिया है। इसलिए वह भव रज्जु शब्द का प्रयोग करती है क्योंकि यह मोह रुपी रज्जु ही है जो मनुष्य को इस सांसारिक बन्धनों से जोड़े रखती है। आज भी हम भारतीय नारी को वेमेल विवाह के कारण उन्हें अपने जीवन में अप्रसन्न होते हुए देखते हैं तथा साथ ही

वे घरेलू हिंसा की भी शिकार होती हैं। यह स्थिति आज भी हमारे समाज में विद्यमान है जिस कारण भारतीय नारी की स्थिति और भी दयनीय होती जाती है। भद्दाकापिलानी नामक भिक्षुणी अद्रत्व प्राप्त करके अपने पूर्व गृहस्थ आश्रम के पति और अब के कल्याण मित्र भिक्षु महाकश्यप स्थविर के गुणों के वर्णन के साथ-साथ अपने कार्यों का भी चित्रण करते हुए कहती है -

दिस्वा आदिनवं लोके,
उभो पब्बजिता मयं।
त्यम्ह खीणासवा दंता,
सीतिभूतम्ह निब्बुता ति।।

सांसारिक जीवन के दोषों और दुष्परिणामों को देखकर हम दोनों ने संसार से संयास ले लिया। आज हम दोनों ही आत्म विजयी हैं, सर्वथा निष्पाप हैं, निर्वाण प्राप्त कर हम दोनों परम शांत हैं! निर्वाण की परम शांति का हमने साक्षात्कार कर लिया है।

भद्दाकापिलानी तथा उसके पति ने सांसारिक मोह-माया को त्यागकर इस संसार से संयास ले लिया। वह आत्म गौरवपूर्ण भाव से कहती है कि हम दोनों अब आत्म विजयी हैं अर्थात् इन्द्रियों से परे जा चुके हैं जिस कारण अब हम पाप मुक्त हो चुके हैं तथा दोनों निर्वाण रुपी शांति को प्राप्त कर चुके हैं। इस प्रकार, हम देखते हैं की आज आधुनिक युग में सांसारिक जीवन से व्यक्ति का मोहभंग होता जा रहा है उसे भौतिक सुख सुविधाएँ अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर पा रही हैं। जिस कारण वह अन्दर से अपने आपको रिक्त महसूस कर रहा है। इस प्रकार, आध्यात्मिक आनंद मनुष्य को अन्दर से भर देता है।

पटाचारा भिक्षुणी ने भिक्षुणियों को क्या उपदेश दिया और उसका उन पर क्या असर पड़ा, इसी का दिग्दर्शन इस गीत में है -

यस्स मग्गं न जानासि,
आगतस्स गतस्स वा।
तं कुतो चागतं सत्तं,
मम पुत्तो ति रोदसि।।

वह किस पथ से आया, किस पथ को चला गया! इतना तक जिसके विषय में तू नहीं जानती, तब उसके लिए जो तेरे पास कुछ समय के लिए था, तू 'मेरा पुत्र! मेरा पुत्र! कह-कहकर क्यों रोदन करती है?

पटाचारा अपनी शिष्याओं को समझाते हुए उन पारिवारिक समस्याओं के विषय में जहाँ किसी भिक्षुणी के पुत्र की मृत्यु की चर्चा करते हुए वह कहती है कि वह कहाँ से आया था तथा कहाँ चला गया? जिसके विषय में तुझे किसी प्रकार का ज्ञान नहीं है जो कि कुछ समय के लिए ही तेरे पास था फिर भी तू उसके लिए मेरा पुत्र! मेरा पुत्र! क्यों कह रही है जो तेरा था ही नहीं। इस प्रकार पटाचारा ऐसे मनुष्य के लिए विलाप करना समय को व्यर्थ करना मानती है जिसके विषय में हमें कोई ज्ञान ही नहीं है। आज भी हम देख सकते हैं कि स्वजन कि मृत्यु किसी भी व्यक्ति को अत्यंत पीड़ा देती है जिस कारण उसे अपना वर्तमान जीवन निस्सार दिखाई देता है। इस कारण, यदि इस दशा से मुक्त होना है तो हमें सदैव यह स्मरण रहना चाहिए कि मृत्यु अवश्यम्भावी है जिसका आना निश्चित है। यह स्मरण केवल आध्यात्मिक ऊर्जा से ही संभव है। पुण्णा भिक्षुणी व्यंग्यपूर्ण ढंग से उदहारण देकर समझाते हुए कहती है कि यदि जल से ही मनुष्य को शुद्धि प्राप्त होती तो जल में रहने वाले जीव जैसे मेंढक, कछुए, जल में रहने वाले साँप, मगरमच्छ तथा अन्य जलचर अवश्य स्वर्ग को प्राप्त होते।

ओरब्भिका सुकरिका,
मच्छिका मिगबन्धका।
चोरा च वज्झघाता च,
ये चञ्ञे पापकम्मिनो।
दकाभिसेचना ते पि,
पापकम्मा पमुच्चरे।।

यदि जल स्नान से मुक्ति होती है,तो फिर भेड़, बकरी, सूअर और मृगों को मारने वाले या उनका मांस बेचने वाले, मछुआरे, चोर, जल्लाद और अन्य पापी लोग सभी पापकर्म करने के बाद जल में स्नान कर, क्या पापमुक्त नहीं हो जायेंगे?

प्रस्तुत काव्य के अंतर्गत वाह्य आडम्बर एवं अंधविश्वास की चर्चा की गयी है, जहाँ पाप से मुक्ति जल में स्नान करने से संभव मानी गयी है। जो कि एक प्रकार का अन्धविश्वास ही है जिसके माध्यम से पाप कर्म से मुक्ति संभव मानी गयी है। आज भी वाह्य आडम्बर, रीति-रिवाज या संस्कृति के नाम पर लोगों को मूर्ख बनाया जा रहा है जिस कारण लोग अपना धन एवं जीवन दोनों खो रहे हैं। इसके निदान हेतु शिक्षा का प्रसार एवं जागरूकता अत्यंत आवश्यक है। अम्बपाली भिक्षुणी जो पहले वैशाली की गणिका थी, वृद्धावस्था के दौरान अपने शरीर को देखकर कहती है -

एदिसो अहु अयं समुस्सयो,
जज्जरो बहुदुक्खानमालयो।
सोपलेपपतितो जराघरो,
सच्चवादिवचनं अनञ्ञथा ।।

एक समय मेरा यह शरीर ऐसा था, इस समय यह जर्जर और अनेक दुःखों का आलय है। यह ऐसे जीर्ण घर के समान है जिसकी लीपन टूट-टूटकर नीचे गिर गई है। बिना लेपादी के यह जरा का घर शीघ्र ही इस प्रकार गिर जायेगा, जैसे टूटी हुई लीपन वाला जीर्ण घर! सत्यवादी बुद्ध के वचन कभी मिथ्या नहीं होते।

अम्बपाली अपने शरीर के अस्तित्व के विषय में कहती है कि मेरा शरीर एक समय जर्जर एवं दुःखों का स्थान था। यह शरीर जीर्णशीर्ण होकर एक दिन समाप्त हो जायेगा जिस कारण इसका कोई महत्त्व रह नहीं जायेगा। इस कारण सत्य वचन कहने वाले बुद्ध के वचन कभी मिथ्या नहीं हो सकते। यहाँ मानव शरीर की निःसारता को दिखाया गया है, यह आज आधुनिक संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि मनुष्य अपने शरीर को लेकर अत्यंत वासनायुक्त रहता है, वह मानता है कि उसका शरीर सम्पूर्ण जीवन यौवन अवस्था में रहेगा किन्तु वह भूल जाता है कि प्रत्येक भौतिक वस्तु की तरह यह भी एक दिन समाप्त हो जायेगा। जिस कारण वह पापकर्म की ओर आगे बढ़ता है। किसा गौतमी नामक भिक्षुणी कहती है-

द्वे पुत्ता कालकता,
पती च पन्थे मतो कपणिकाय ।
माता पिता च भाता,
डय्हन्ति च एकचितकायं ।।

ISSN–2456–0413

हतभाग्य नारी! तेरे दो पुत्र काल कवलित हो गए,मार्ग में तूने मृत पति को देखा अपने माता-पिता और भाई को तूने एक ही चिता में जलाए जाते देखा।

किसा गौतमी अन्य भिक्षुणी को समझाते हुए शोक का वर्णन करते हुए कहती है कि तेरे दो पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो गये तथा साथ ही तूने अपने माता-पिता एवं भाई को भी खो दिया। इस कारण शोक करने से कोई लाभ नहीं है, जिसने इस पृथ्वी पर जन्म लिया है उसे एक न एक दिन जाना ही है। आधुनिक काल में भी ये पंक्तियाँ अत्यंत प्रासंगिक हैं क्योंकि मानव की देह क्षणभंगुर है, इस प्रविलाप करने से कोई लाभ नहीं है। आध्यात्मिक ज्ञान के माध्यम से ही ऐसे दुःख की दशा से मुक्ति मिल सकती है। महा प्रजापति गौतमी जो महात्मा बुद्ध की मौसी भी लगती हैं, भिक्षुणी बनने के पश्चात् वह कहती हैं -

सब्बदुक्खं परिञ्ञातं,
हेतुतण्हा विसोसिता ।
भावितो अट्ठङ्गिको मग्गो,
निरोधो फुसितो मया ।।

मेरे समस्त दुःख दूर हो गये हैं। मुझे पता चल गया कि दुःख किस प्रकार उत्पन्न होते हैं। अब उनके मूल हेतु तृष्णा को मैंने अपने अंदर सुखा डाला है। आज मैंने दुःख निरोध गामी आर्य आष्टांगिक मार्ग को स्पर्श किया है। उसमें मैंने विचरण किया है।

महाप्रजापति गौतमी कहती हैं मुझे ज्ञात हो गया है कि दुःख का मूल कारण क्या है? जिसका मुख्य कारण है तृष्णा। जिसे मैंने पहले ही समाप्त कर दिया है। आज मैंने दुःखों को समाप्त करने वाले आर्य अष्टांगिक मार्ग को अपने जीवन में ग्रहण किया है,उसका अनुभव किया है। इस प्रकार महाप्रजापति गौतमी के सभी दुःख दूर गये। आधुनिक काल में भी यह अत्यंत आवश्यक है कि हम महाप्रजापति गौतमी की तरह तृष्णा को अपने अन्दर सुखा दें। यह आष्टांगिक मार्ग के द्वारा ही संभव है। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है दुखों को समाप्त करने का केवल यही एक माध्यम है जिसका प्रयोग करके हम प्रसन्न जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

निष्कर्ष -

अंततः यह कहा जा सकता है कि थेरियों ने वासना की जड़ को तोड़ डाला था। हृदय मूल से दाहक तृष्णा तंतुओं को उखाड़ कर फेंक दिया था, उनके समस्त मल नष्ट हो गये थे। पूर्व में इन्होंने अशुचि, दुर्गंधमय और व्याधियों से भरे शरीर का ध्यान किया था। जिसे वे अशुभ भावना से देखती थीं। अब वे सब निर्वाण, पथ, गामिनी, थेरियाँ सम्यक सम्बुद्ध का उपदेशामृत पीकर परितृप्त थीं। उनके जीवन में अब अन्धकार नहीं, प्रकाश था, निराशा नहीं, मंगलाशा की उषा थी, उनके निर्वेद में आनंद ही आनंद छलकता था। ये उनके प्रमोद के गीतोद्गार थे। भूमंडलीकरण के इस दौर में पाश्चात्य भोग प्रधान सभ्यता का आज जिस प्रबल वेग से आक्रमण हो रहा है, उस दौर में थेरी गाथा की प्रसंगिकता और भी बढ़ जाती है।

सन्दर्भ -

- काश्यप, भिक्षु जगदीश (सं.) खुद्दक-निकाये।
- महावंस, अध्याय 10.23 2 वर्मा।
- धीरेन्द्र यसंद्ध, हिन्दी साहित्य कोश भाग. 13
- मिश्र, उर्मिला प्रकाश, प्राचीन भारत में नारी दिनकर, रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय।
- आनन्दए सुगम यडॉण्द्ध, भारतीय इतिहास में नारी।
- आनन्द, सुगम यडॉण्द्ध, भारतीय इतिहास में नारीश् राजे, सुमन, हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास।
- काश्यप, भिक्षु जगदीश संण्द्ध खुद्दकनिकाये।

• शोध-छात्र,
पूर्वी पर्वतीय विश्वविद्यालय,
शिमला, मेघालय

पतहर की सदस्यता ग्रहण करें:

अवधि	शुल्क (पंजीकृत डाक)	संस्थान शुल्क
वार्षिक	370	700
द्विवार्षिक	740	1500
तीन वर्षीय	1110	2100
पांच वर्षीय	1775	3200
नमूना प्रति	100	175
आजीवन	4000	

विशेषांक मूल्य ® अतिरिक्त

खाता :

1. **पतहर (patahar)**
   A/c. 98742200010701
   IFSC. CNRB0019874
2. **विभूति नारायण ओझा**
   A/c 98742200042158
   IFSC. CNRB0019874

शाखा: केनरा बैंक, खुखुन्दू चौराहा, देवरिया

सदस्यता शुल्क बैंक से भी भेज सकते हैं. या मोबाइल के माध्यम से विभूति नारायण ओझा के फोन पे न. 8542895340 पर जमा कर सकते हैं. कृपया पेमेंट करने के बाद रसीद, नाम पता व्हाट्सएप 9450740268 पर अवश्य भेजें.

- **नया शुल्क दर अक्टूबर 2023 अंक से प्रभावी.**

कृते – पतहर
संपर्क: 9450740268

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA
पतहर 2456-0413
Mob.+91 9450740268

खाता विवरण : पतहर खाता सं. 98742200010701
IFSC : CNRB0019874 केनरा बैंक, खुखुन्दू, देवरिया

शोध आलेख

बौद्ध धर्म एवं वैश्विक शांति

डॉ० विजय लक्ष्मी सिंह

भारत सर्वधर्म समभाव की भावना से परिपोषित एवं पल्लवित देश है जो निरन्तर अपनी प्रतिभा का परचम सम्पूर्ण विश्व में लहराता हुआ आगे बढ़ रहा है किन्तु कुछ अराजक तत्व एवं कुत्सित विचारों के पोषक तत्व दिन-रात अशान्ति फैलाने में लगे हुए है। वैदिक काल से ही भारत वर्ष शान्ति प्रियता की मिसाल रहा है। यहाँ पर समय-समय पर अनेक धर्मो का उदय हुआ और प्रत्येक धर्म अहिंसा, करुणा, दया आदि नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाते ही गतिमान हुए। इसी क्रम में बौद्ध धर्म भारत में उदित होने वाला ऐसा धर्म बना जो कि विश्व मंच पर अपनी गहरी पैठ रखता है। भगवान बुद्ध के मुखर बिन्दु से निःसृत उपदेश ही बौद्ध धर्म दर्शन के आधार स्तम्भ बने और आगे चलकर उन्हें त्रिपिटकों में संग्रहीत किया गया। करुणा के साक्षात प्रतिमूर्ति भगवान बुद्ध ने अपने उपदेशों के माध्यम से संसार की निःसारता का यथार्थ चित्रण किया जो वर्तमान में भी प्रासंगिक है। करुणा भावना से उत्प्रेरित होकर सिद्धार्थ ने राजसी सम्पन्नता को त्याग दिया और सत्य की खोज में निकल पड़े। तत्पश्चात अपने चारिकाक्रम में उन्होनें अपने शिष्यों को सत्य, अहिंसा, करुणा आदि नैतिक आदर्शों का पाठ पढ़ाना प्रारम्भ किया। भगवान बुद्ध का मानना था कि बुद्धत्व का बीज सभी प्राणियों में निहित है। एक न एक दिन सबको बुद्धत्व प्राप्त करना है। मानव मात्र के दुःखो को दूर करना एवं उन्हें मुक्ति का पथ दिखलाना ही बौद्ध धर्म का प्रथम लक्ष्य है। वैश्विक शान्ति की दृष्टि से यदि देखा जाय तो आज एक देश दूसरे देश को निगल जाने को तैयार है। ऐसी स्थिति में हम बौद्ध धर्म का आलम्बन ग्रहण कर सकते हैं।

भगवान बुद्ध शील, समाधि और प्रज्ञा के समर्थक थे। उन्होनें अपने चारिका क्रम में जो भी उपदेश दिये वे समस्त उपदेश मानव मात्र के दुःखो के त्राण के लिए थे। मनुष्य को बुराइयों से बचाना एवं अच्छाई के मार्ग पर ले जाना ही तथागत के उपदेश का परम लक्ष्य था। **"बहुजन हिताय बहुजन सुखाय"** की भावना से आप्लावित भगवान बुद्ध विश्व शान्ति के पक्षधर थे। उनका मानना था कि सम्पूर्ण विश्व एकत्व में निबद्ध रहे और परदुःख को जाने। दुःख समूह के नाश के लिए उन्होने सम्पूर्ण मानव जाति से बुद्धत्व प्राप्त करने का आग्रह किया। आज जब संपूर्ण विश्व संकट मूल्यों से ग्रस्त है एक देश दूसरे देश पर घात लगाये हुए बैठा है। ऐसी स्थिति में बुद्ध के उपदेशों का अनुसरण करना अत्यन्त ही श्रेयस्कर है।

आज सम्पूर्ण मानवता कराह रही है तो इसका जिम्मेदार मानव ही है क्योकि वह लोभ, मोह, तृष्णा, माया के जाल में इतना फॅस चुका है कि वहां से निकालना मुश्किल हो गया है। ऐसी विषम परिस्थिति मे महात्मा बुद्ध का जीवन हमारे लिए प्रेरणा स्वरूप है जो कि राजसी वैभव को त्यागकर मानव दुःख के लिए निकल पड़े अपना संम्पूर्ण जीवन परहित मे लगा दिए वे उपदेश आज भी मानवीय मूल्यों के परिष्कारक है। जिन मूल्यो पर चलकर सामाजिक समरसता को कायम किया जा सकता है।

आज के इसे भौतिकवादी युग मे आत्मिक शान्ति की परम आवश्यकता है। आज का मानव सब कुछ होते हुए भी भटक रहा है क्योंकि वह आत्मिक शांति से अनभिज्ञ है। मानव जीवन का चरमोत्कर्ष क्या है वह नही जानता। भगवान बुद्ध इन सबसे भिज्ञ थे। अतः उन्होंने अपने उपदेशों में विश्वबन्धुत्व की भावना एवं समरसता की भावना को विशेष महत्व दिया। उनका मानना था कि सर्वप्रथम मानव को स्वयं को पहचानना होगा और चित्त को एकाग्र करना होगा तब कही जाकर वह दूसरों के दुःख का त्राण करने में समर्थ होगा। धम्मपद में चित्त के विषय में कहा गया है कि इस चित्त को मेधावी पुरूष उसी प्रकार साधा करता है जैसे -

फन्दनं चपलं चिन्तं दुखखं दुन्निवारयं।
उजु करोति मेधावी उसुकारो व तेजनं।।[1]

धम्मपद के अनुसार पुण्यात्मा लोक तथा परलोक दोनों स्थानों पर मोद करता है।

दुध नन्दति पेच्च नन्दति कतपुच्ओ उभयत्थ नन्दति ।
पुत्रज मे कतं ति नन्दति भूयो नन्दति सुगति गतः।।[2]

भागवान बुद्ध का मानना था कि जब तक तृष्णा आदि की भावना हमारे अन्दर विद्यमान रहेगी तब तक हम आवागमन के बन्धन से मुक्त नहीं हो पायेगें। निर्वाण प्राप्ति के अनेक मार्ग हमें भगवान बुद्ध के उपदेशों में देखने को मिलते हैं। धम्मपद के अनुसार जब मनुष्य प्रज्ञा द्वारा देखता है तो सभी संस्कार अनित्य प्रतीत होते है उसी समय संसार में उसकी आशक्ति नहीं रहती और वह क्लेशों से विरक्त हो जाता है। यही उयकी विशुद्धि (निर्वाण) का मार्ग है।

सब्बे संखारा अनिच्चा ति यदा पत्रआय पस्सति ।
अथ निब्बिन्दती दुक्खे एस मग्गो विसुद्धिया ।।[3]

अतः बौद्ध धर्म एक ऐसे धर्म के रूप में हमारे समक्ष उपस्थापित होता है जो शांति, सद्भावना, आदर्श आदि मानवीय मूल्यों को उदित करने में समर्थ है। आज की परिस्थितियों में इन मूल्यों का विशेष महत्व है। विश्वशांति का पोषक बौद्ध धर्म दर्शन वैश्विकस्तर पर शांतिं स्थापित करने में सक्षम है।

संदर्भ सूची

1. धम्मपद 2. धम्मपद, 1.18 3. धम्मपद, 20.5-6.

• विभागाध्यक्ष, व्याकरण संस्कृत विभाग, सनातन धर्म संस्कृत महाविद्यालय मेहदावल, सन्तकबीरनगर

आधुनिक शिक्षा में बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता एवं उपादेयता

तेज बहादुर *
प्रो. उमेश प्रसाद यादव **

प्रस्तावना -

आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व गौतम बुद्ध (563-483 ई.पू.) ने बौद्ध धर्म की स्थापना की थी। बौद्ध कालीन शिक्षा बहुत अधिक सीमा तक वैदिक शिक्षा के समान ही थी। बौद्ध धर्म वास्तव में हिन्दू धर्म के समान था। इनके सिद्धान्तों में अनेक हिन्दू धर्म के सिद्धान्त भी सम्मिलित थे। डॉ० राधाकृष्णन ने उचित ही कहा था **"बौद्ध धर्म नया धर्म नहीं है, अपितु हिन्दू धर्म का परिवर्तित रूप है।"** बौद्ध शिक्षा दर्शन मानव के उत्थान हेतु मानव मूल्यों को जाग्रत करने में तथा मानव मूल्यों की स्थापना करने में सक्षम है। भारतीय जीवन दर्शन का मूल आधार चार तत्व हैं। बौद्ध दर्शन भी इन चारो मे अद्भुत समन्वय स्थापित करता है, धर्म तो जीवन का विशिष्ट व्यावहारिक तत्व है जो व्यक्ति विना किसी अहित एवं बिना किसी को कष्ट पहुँचाए जीवन व्यतीत करता है, वही सच्चे अर्थो में धर्म का पालन करता है, उसी को धर्मिक कहा जाता है। बौद्ध दर्शन के अन्तर्गत धर्म को नैतिक आचार परक संहिता के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है। अर्थ तथा काम को बौद्ध दर्शन मर्यादायों के भीतर स्वीकार करता है। इससे बौद्ध शिक्षा के पाठ्यक्रम मे व्यावसायिक शिक्षा को महत्व दिया गया है। मोक्ष तो बौद्ध दर्शन का परम लक्ष्य माना गया है। भगवान बुद्ध ने मोक्ष के मार्ग की खोज हेतु अपना जीवन व्यतीत कर दिया बुद्ध का मोक्ष मार्ग समस्त मानव के लिए था।

मुख्य शब्द-

अत्त दीपो भवः मध्यम मार्ग, अन्तः शुद्धि का सिद्धान्त, आष्टांगिक मार्ग, कर्मावादी सिद्धान्त, अहिंसा

बौद्ध दर्शन में शिक्षा को सिद्धान्त के रूप मे वृहद स्तर पर स्वीकार किया गया है। बौद्ध धर्म अष्टांगिक मार्ग पर जोर देता है, कि इच्छा और प्रयास, उत्साह और साहस आवश्यक कारक है। बौद्ध दर्शन की शिक्षाओ में एक व्यक्ति की शिक्षा, क्षमता और संभावित ऊर्जा को आवश्यक घटकों के रूप मे सम्मिलित किया गया है। बौद्ध दर्शन के अनुसार व्यक्तित्व को एक मात्र शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। जो एक व्यक्ति के पास इच्छा और आत्मविश्वास के साथ कार्य करने के लिए होता है। बौद्ध दर्शन पहले व्यक्ति का शरीर वाणी आदि अंगों को अनुशासित करके अच्छे आचरण की शिक्षा देता है, फिर उसके आध्यात्मिक विकास की सलाह देता है, और उसका व्यक्तित्व सभी व्याक्तियों के व्यक्तित्व से अधिक प्रभावशाली होता है। बौद्ध शिक्षा का सम्पूर्ण उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करना है, जब इसकी तुलना आधुनिक शिक्षा के उद्देश्यों से की जाती है तो बौद्ध शिक्षा का उद्देश्य व्यापक और अधिक गहरा प्रतीत होता है। यदि छात्रो के साथ व्यक्तित्व के लक्षण देखे जायें तो इसे महान माना जा सकता है। यह स्पष्ट है कि एक छात्र को व्यक्तित्व विकसित करने के लिए सभी आवश्यक सुझाव बौद्ध दर्शन की शिक्षाओ द्वारा दिये जाते है।

आधुनिक समय के दार्शनिक झंझावतों ने ऐसा वातावरण का निर्माण कर दिया है, जिनमे आज का मानव स्वयं को असहाय अनुभव कर रहा है, अतः यह आवश्यक है कि एक समन्वय वादी सोच के प्रति सामान्य जन की आस्था की पूर्ति करे साथ ही वैज्ञानिक सत्यों को स्वीकारते हुए जीवन मूल्यों को अंगीकार कर सकें। उस समय तक शिक्षा की स्थिति एवं वर्तमान समय मे प्रासंगिकता पूर्ण रूप से बौद्ध दर्शन एवं व्यवस्था पर निर्मित है। बौद्ध शिक्षा एक ओर करोड़ो लोगो मे ज्ञान के द्वारा प्राण फूंकने मे समर्थ है तो दूसरी ओर समकालीन ज्ञान पद्धति की कमियों को दूर करने में भी है। समकालीन शिक्षा का स्वरूप उन गरीब बालकों को कोई दूसरा अवसर नही प्रदान करती, जो इनके संकुचित मानसिकता के द्वारा प्रवेश से वंचित रह जाते है, और आधुनिक शिक्षा व्यवस्था दोषयुक्त तथा असमानताओं को बढ़ावा देने वाली है। यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने समकालीन शिक्षा व्यवस्था को भी चुनौती बना दिया है। वस्तुतः आज की शिक्षा व्यवस्था उपाधि धारक बनती जा रही है न कि ज्ञानवर्धक इसी कारण शिक्षित बेरोगारी मे तीव्र गति से वृद्धि हो रही है वर्तमान ज्ञान प्रणाली वैदिक सभ्यता व संस्कृति से अलगाव का स्वरूप बनाती जा रही है।

अतः आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने देश में अनेक भेद एवं विषमताओं को जन्म दिया है इसलिए वर्तमान शिक्षा संरचना देश की आवश्यकताओं की पूर्ति ने सक्षम नहीं है और एक ऐसी शिक्षा संरचना की आवश्यकता है जिससे देश या समाज तथा व्यक्ति के समस्याओं का समाधान कर सके। इसके लिए बौद्ध काल में वर्णित ज्ञान के स्वरूप को स्वीकार किया जा सकता है, बौद्ध शिक्षा संरचना में समानता का समावेश था, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब का भेदभाव नही था शिक्षा आचार्यों द्वारा सुयोग्य पात्र को प्रदान की जाती थी, गुरु-शिष्य सम्बन्ध परस्पर मधुर थे, शिष्य, गुरू को उचित सम्मान प्रदान करता था समाज में एकता का पाठ, बौद्ध शिक्षा केन्द्र सफतलापूर्वक पढ़ा रहे थे, अनुसंधानों पर अधिक बल दिया जाता था। नवीनतम अनुसंधानों को प्रोत्साहित किया जाता था। अतः बौद्ध काल ने शिक्षा की स्थिति एवं विस्तार के अध्ययन द्वारा बौद्ध ज्ञान प्रणाली का जानकारी कर वर्तमान

स्वरूप में सुधार कर उसे समृद्ध बनाया जा सकता है।

महात्मा बुद्ध भारतीय विरासत के एक महान विभूति हैं, उन्होंने सम्पूर्ण मानव सभ्यता को एक नई दिशा प्रदान की है। उनके विचार उनके मृत्यु के लगभग 2500 वर्षों के पश्चात आज भी हमारे समाज के लिए प्रासंगिक बने हुए हैं। महात्मा बुद्ध का सबसे महत्वपूर्ण विचार **अत्त दीपो भवः** अर्थात 'अपना दीपक स्वयं बनो' इसका मूल यह है कि व्यक्ति को अपने जीवन में किसी भी नैतिक-अनैतिक का फैसला स्वयं करना चाहिए। वर्तमान समय में बुद्ध के इस विचार का महत्व बढ़ जाता है, वास्तव में आज व्यक्ति अपने घर, ऑफिस, कालेज इत्यादि जगहों पर अपने जीवन के महत्वपूर्ण फैसले भी स्वयं न लेकर दूसरे की सलाह पर लेता है, अतः वह वस्तु बन जाता है, और महात्मा बुद्ध का विचार व्यक्ति को व्यक्ति बनने पर बल देता है।

महात्मा बुद्ध के नैतिक दृष्टिकोण का प्रमुख सिद्धान्त 'मध्यम मार्ग' के नाम से जाना जाता है, उल्लेखनीय है कि उनका मध्यम मार्ग सिद्धान्त आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना बुद्ध के समय में था। उनके इन विचारों की पुष्टि इस कथन से होती है, वीणा के तार को उतना नहीं खींचना चाहिए कि वह टूट जाये या उसे उतना ढीला भी नहीं छोड़ा जाना चाहिए कि उससे स्वर ध्वनि ही न निकलें।

महात्मा बुद्ध के मध्यम मार्ग और इह लौकिकता पर बल के सिद्धान्त की प्रासंगिकता वर्तमान समय में और ज्यादा बढ़ जाती है, उनका यह सिद्धान्त रूढ़िवादिता को नकारते हुए तार्किकता पर बल देता है। दरअसल आज दुनिया में तमाम तरह के झगड़े हैं, जैसे-साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, नक्सलवाद, नस्लवाद तथा जातिवाद इत्यादि। इन सभी झगड़ो के मूल में बेसिक समस्या यही है कि कोई भी व्यक्ति देश या संस्था अपने दृष्टिकोण से पीछे हटने को तैयार नही है। इस दृष्टि से इस्लामिक स्टेट जैसे-अतिवादी समूह हो या मॉब लिंचिंग विचार धारा को कट्टर रूप मे स्वीकार करने वाला कोई समूह हो या अन्य समूह सभी के साथ मूल समस्या नजरिये की ही है। महात्मा बुद्ध के मध्यम मार्ग सिद्धान्त को स्वीकार करते ही हमारा नैतिक दृष्टिकोण बेहतर हो जाता है, हम यह मानने लगते है कि कोई भी चीज का अति होना घातक होता है, यह विचार हमे विभिन्न दृष्टिकोणों के मेल-मिलाप तथा आम सहमति प्राप्त करने की ओर ले जाता है यदि आज दो विरोधी समूहों के बीच सार्थक संवाद हो तो धार्मिक 'सहिष्णुता' और 'सर्व धर्म संभाव' सिर्फ कहने भर की बातें नही रहेंगी बल्कि दुनिया का सच बन जायेंगी।

महात्मा बुद्ध ईश्वर (जो धर्म का केन्द्रीय बिन्दु है) को नकारते हुए भी बौद्ध धर्म को इतने व्यापक स्तर पर स्थापित करने मे सफल रहे हैं, जो उनकी प्रासंगिकता बताता है। महात्मा बुद्ध का कर्मवादी सिद्धान्त भी वर्तमान विश्व में काफी महत्व रखता है, दरअसल आज जिस तरह व्यक्ति भाग्यवाद तथा तरह-तरह के आडंबरों एवं कर्म काण्ड मे जकड़ता जा रहा है ऐसे मे कर्मवादी सिद्धान्त उन्हे मानव कल्याण से जोड़कर समाज को तार्किक बनाने मे कारगर साबित हो सकता है।

महात्मा बुद्ध का आष्टांगिक मार्ग का सिद्धान्त आज के भौतिकवादी समाज मे ज्यादा प्रासंगिक हो जाता है। **उदाहरण** के लिए उनका सम्यक जीविका का विचार इस बात बल देता है कि समाज सभी को जिविका मिले जिससे आज के समाज की बहुत बड़ी समस्या बेरोजगारी का समाधान हो सकता है। जिस सिद्धान्त के लिए महात्मा बुद्ध के विचारो की प्रासंगिकता विश्व में बढ़ जाती है, वह है **अहिंसा**, अहिंसा के विचारों की बात महात्मा बुद्ध के समकालीन महाबीर द्वारा भी कही गयी थी। उल्लेखनीय है कि महात्मा बुद्ध का अहिंसा का विचार सभी प्राणी के लिए था। आज विश्व मे जहां एक तरफ पशुओं के विरूद्ध हिंसा के नये-नये तरीके खोजे जा रहे है वही पशुओं के साथ अच्छा आचरण करने को लेकर पेटा जैसी संस्थाएं विश्वव्यापी आन्दोलन चला रही है।

महात्मा बुद्ध का मानव कल्याण के लिए **अंतः शुद्धि का सिद्धान्त** भी काफी महत्वपूर्ण हो जाता है यह सिद्धान्त व्यक्ति के अन्दर से नैतिक होने पर बल देता है। आज जिस तरह व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं से अधिक संपदा एकत्र करने के लिए संघर्षशील है वह कहीं न कहीं एक बड़े वर्ग को प्रभावित कर रही है। हाल ही मे एक रिपोर्ट मे पाया गया कि कुल संसाधनो का एक बड़ा भाग कुछ व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित होकर रह गया है। ऐसे मे यदि उनका यह विचार सही तरीके से स्थापित हो जाये तो कोई भी उद्यमी अपने कर्मचारियों का 'हक' नही मारेगा, कोई अमीर किसी गरीब को नुकसान नहीं पहुचाएगा और अर्थव्यवस्था मे तनाव की जगह सद्भाव को प्राथमिक स्थान मिलेगा।

महात्मा बुद्ध के सिद्धान्तों के अन्य प्रेरणादायी बात यह है कि इसमे परिवर्तनो के प्रति बेहद सकारात्मक रूख दिखाई पड़ता है। **बुद्ध का प्रसिद्ध कथन** है कि हम एक नदी मे दो बार नही नहा सकते क्योंकि दूसरी बार नहाने के समय न तो वह जल रहेगा और न ही वह नहाने वाला क्योंकि तब तक वह जल की धारा काफी आगे बढ़ चुकी होगी और नहाने वाले के शरीर मे सूक्ष्म स्तर पर असंख्य परिवर्तन आ चुके होंगे। बुद्ध का यह विचार हमे रूढ़ीवादी होने से बचाती है। आज समय के अधिकांश संकटों का जड़ इसी बात में छिपा है कि लोग समय के अनुसार खुद को बदल नही पाते यदि हम बुद्ध की इस बात को समझ लें कि परिवर्तन सत्य है तो शायद यह यथास्थितिवादी होने से बच सकें। इस विचार से जातिवाद, सम्प्रदायवाद, नस्लवाद आदि की समाप्ति हो जायेगी।

महात्मा बुद्ध के शिक्षाओं की उपयोगिता आज के परिप्रेक्ष्य मे बढ़ जाती है, उनकी शिक्षा नैतिकता करूणा और संवेदनशीलता को बढ़ाने मे सहायक हो सकती है जिसके माध्यम से शान्ति और सतत विकास पर आधारित एक संघर्ष मुक्त विश्व व्यवस्था

को सुनिश्चित किया जा सकता है। वास्तव मे आज कल स्कूल, कॉलेज में शिक्षा का उद्देश्य अच्छी व्यवस्था व भौतिकवादी समाज में अधिक से अधिक संसाधनों पर कब्जा प्राप्त करना रह गया है ऐसे मे व्यक्ति मानवतावादी सिद्धान्तों से दूर हो गया है। जहां संवेदना का स्तर शून्य हो गया है बच्चों पर उच्च अंक लाने का दबाव डाला जा रहा है, न कि इस बात का कि वे शिक्षा प्राप्त कर नैतिक बनें।

निष्कर्ष -

बौद्ध दार्शनिको ने शिक्षा के लिए अनेक प्रभावी विधियों का विकास किया है। व्यक्तिगत शिक्षा हेतु स्वाध्याय, मनन और चिन्तन और सामूहिक शिक्षण के लिए व्याख्यान, व्याख्या और चर्चा विधियां आज भी श्रेष्ठ विधियां स्वीकार की गयी है। वास्तविक ज्ञान हेतु आज कुछ विद्वतजन शास्त्रार्थ को उचित भले ही न मानते हो परन्तु पर्यटन और सम्मेलन तो वर्तमान मे भी स्वीकार योग्य है बौद्ध दर्शन ने सभी लोगों को नियमों के अनुसरण करने का उपदेश दिया है और इसी को वे अनुशासन कहते है। बौद्धों की अनुशासन सम्बन्धी अवधारणा आज लोकतन्त्रीय जीवन के लिए बहुत ही आवश्यक है। लोकतन्त्र की सफलता तो इसी तथ्य पर निर्भर है, कि सभी लोग स्वयं के कर्तव्यों का पालन ईमानदारी और निष्ठा के साथ करें। बौद्ध दर्शन ने शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनो को संयमी जीवन का सुझाव देकर शिक्षा जगत को शुद्धता प्रदान की थी उसकी प्रासंगिकता वर्तमान मे भी महसूस की जा रही है।प्रायः आज के शिक्षक और शिक्षार्थी संयमी जीवन शैली जीना आरम्भ कर दें तो शिक्षा जगत की सभी बाधाएं अपने आप दूर हो जायेंगी। यद्यपि तत्कलीन शिक्षा और आधुनिक शिक्षा के बीच सैकड़ों वर्ष का अन्तर है, लेकिन बौद्ध कालीन शिक्षा की अनेक विशेषताएं है, जिन्हें सैद्धान्तिक और कौशलात्मक तरीके से समकालीन शिक्षा मे समाहित किया जा सकता है।

आाधुनिक शिक्षा प्रणाली यद्यपि बुद्ध शिक्षा प्रणाली से पूर्णतः अलग प्रतीत होती है किन्तु वर्तमान शिक्षा को प्रबन्धित करने और विभिन्न प्रकार के दुष्वारियों के निदान खोजने मे बुद्ध कालीन शिक्षा सहायता प्रदान कर सकती है। इसके आदर्शो अर्थात श्रद्धा, शक्ति, सेवा, सम्मान, आत्मानुशासन, सादा जीवन, ब्रम्हचर्य, नैतिकता इत्यादि को अपना कर वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप ज्ञान कि अवस्थापना हो सकती है। विद्यार्थी असन्तोष, अनुशासन हीनता, बेरोजगारी, निर्धनता, जाति, राष्ट्रीय एकता भाषा सम्बन्धी भेद भाव जैसे अनुत्तरित समस्याएं दिन-प्रतिदिन भयंकर परिणाम ला रही है। वैदिक कालीन शिक्षा को अपनाने से ही पूर्व की शांति विदेशी विद्यार्थीयों को अपनी ओर आकर्षित कर सकेगी। आज के भारत वर्ष में महात्मा बुद्ध का जीवन भले पूर्णतया अनुसरण योग्य न हो पर अपनाने योग्य अवश्य है वर्तमान समय के विद्यार्थियों के जीवन में कुछ न कुछ बदलाव हो गया है। उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य शिक्षा प्राप्त करना न होकर मनोरंजन के विभिन्न स्त्रोतो के अनुसंधान है। ऐसे मे उनका जीवन ऐश्वर्य प्रधान एवं विलासिता पूर्ण हो गया है। ऐसी दशा मे प्राचीन काल के विद्यार्थियों के दृष्टान्त को वर्तमान के विद्यार्थियों के सम्मुख रखकर उनकी सोच मे परिवर्तन करना अत्यन्त आवश्यक है।

वर्तमान भारतीय शिक्षा संरचना धर्म निरपेक्ष तथा लोकतान्त्रिक है। आज के शिक्षा के पाठ्यक्रम मे अनेक पाठ्य विषयवस्तु दृष्टि शामिल किए गए है जो व्यावसायिक एवं उपयोगी है। आधुनिक दृष्टि से आज का विषय क्यों न उपयोगी माना जाय, किन्तु अनेक विषयो कि उपेक्षा यहां स्पष्ट परिलक्षित होती है। बौद्ध कालीन साहित्य मूलतः शाश्वत साहित्य हैं जिसमे मानवीयता, विश्व बन्धुत्व तथा मानव शांति के तत्व समाहित है। वर्तमान पाठ्यक्रम में इन्हें शामिल होना चाहिए। बौद्ध कालीन पाठ्यक्रम मे ऐसे बहुत से प्रकरण है जिसे आज के शिक्षा मे समाहित किया जा सकता है। ये वर्तमान भारतवर्ष के सांस्कृतिक नैतिक व आध्यात्मिक प्रगति और विश्व शांति की पुर्नस्थापना मे सहयोगी हो सकते है।

उपर्युक्त विवरण के अधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि हम बौद्ध के शिक्षा सिद्धान्तों को वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे स्वीकार करे तो हमारे जीवन और समाज की अनेक समस्यायों का समाधान निकाला जा सकता है। साथ ही मानव सभ्यता सकारात्मक सुधारों के साथ एक सही दिशा मे अग्रसर हो सकेगी।

सन्दर्भ -

- सिंह, बी.एन.,1986, बौद्ध धर्म एवं दर्शन, आशा प्रकाशन वाराणसी।
- ओड, एल0के0, 1988, शिक्षा के नूतन आयाम, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, राजस्थान।
- वर्मा, वैद्यनाथ प्रसाद, 1999, शिक्षा शास्त्र, विहार ग्रन्थ अकादमी, पटना।
- गुप्ता एस0पी0 एवं गुप्ता अल्का, 2004, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं,शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद।
- जौहारी बी0पी0 एवं पाठक पी0डी0, 2009, भारतीय शिक्षा का इतिहास, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
- सारस्वत मालती एवं मदन मोहन, 2009, भारतीय शिक्षा का इतिहास एवं समस्याएं,न्यू कैलाश प्रकाशन इलाहाबाद।
- उपाध्याय भरत सिंह, 2011, बौद्ध दर्शन एवं अन्य भारतीय प्रकाशक हिन्दी मण्डल।
- आचार्य नरेन्द्र देव, 2013, बौद्ध धर्म दर्शन विहार, राष्ट्रभाषा परिषद् पटना।
- पाण्डेय डॉ0 गोविन्द चन्द्र, बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ।
- http://www.jetir.org

* शोध-छात्र, शिक्षा संकाय,
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर
** अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग,
जवाहर लाल नेहरू स्मारक पी.जी.
कालेज, महराजगंज

शोध पत्र

बौद्ध दर्शन में नागार्जुन के शून्यवाद की अवधारणा

सन्तोष कुमार प्रजापति*
प्रो. (डॉ.) अर्चना मिश्रा**

सारांश -

छठीं शताब्दी ई0पू0 को विश्व इतिहास का जागरण काल कहना उपयुक्त ही होगा। भारतीय इतिहास के परिवेश में इस समय तक आर्यों के प्रारम्भिक संचार और संनिवेश का युग समाप्त हो चुका था एवं विभिन्न "जनों" के स्थान पर जनपद व्यवस्थित थे। छठीं शताब्दी के पूर्वार्ध को "षोडश महाजनपदों" का युग कहा गया है। राजधानी और गणाधीन इन जनपदों का पारस्परिक संघर्ष, भविष्य की एकता की ओर समाझा जा रहा था। आर्यों से पूर्ववर्ती विशाल सिंधु सभ्यता लुप्त हो चुकी थी, किंतु उसकी अवशिष्ट परंपराओं के आर्य समाज में क्रमशः आत्म सात करने की प्रक्रिया अभी जारी थी।

पिछली शताब्दी के सांस्कृतिक जागरण का एक परिणाम था, बौद्ध धर्म के विषय में आधुनिक जानकारी का विकास। भारतीयों, के लिए यह एक विलुप्त गौरव और महिमा का प्रत्याभिज्ञान था। पाश्चात्य देशों के लिए अपूर्व उपलब्धि, दक्षिण, मध्य और पूर्व एशिया के बौद्ध देशों के लिए भी विद्या और साहित्य के इस उद्धार ने नवीन परिष्कार और प्रगति की ओर संकेत किया। नाना भाषाओं और पुरातत्व के गहन परिशीलन के द्वारा शताधिक वर्षों के इस आधुनिक प्रयास ने बौद्ध धर्म की जानकारी को एक विशाल और जटिल कलेवर प्रदान किया है एवं इस तथ्य को प्रदर्शित किया है कि बौद्ध धर्म का सार और सार्थकता अपने में कितनी व्यापकता और सूक्ष्मता रखते हैं।

बौद्ध धर्म और दर्शन के प्रणेता भगवान बुद्ध हैं। भारतीय दर्शन में तर्कशास्त्र की प्रगति बौद्ध धर्म के प्रभाव से हुई। बौद्ध दर्शन में शून्यवाद तथा विज्ञानवाद की जिन दार्शनिक पद्धतियों का उदय हुआ उसका प्रभाव भारतीय दर्शन पर गहरा है। बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात बौद्ध धर्म कई सम्प्रदायों में बंट गया। जिसमें महायान बौद्ध सम्प्रदाय का सबसे महत्वपूर्ण सम्प्रदायों में से एक है। महायान सम्प्रदाय का उदय आन्ध्र प्रदेश में माना जाता है। बौद्ध धर्म के कठोर तथा परम्परागत नियमों में परिवर्तन करने वाले महायानी कहलाए। महायान का अर्थ है उत्कृष्ट मार्ग। महायान की स्थापना नागार्जुन ने की थी। महायान का आदर्श बोधिसत्व है।

बीज शब्द -

बौद्ध दर्शन एवं उसके प्रमुख सिद्धान्त, बौद्ध संगीतियां, महायान-सम्प्रदाय, नागार्जुन का शून्यवाद।

प्रस्तावना -

भारत में प्राचीन काल से ही धर्म एवं दर्शनकी समृद्धशाली परम्परा विद्यमान रही है। वैदिक धर्म एवं दर्शन के पश्चात् कई धर्मों एवं दर्शनों का उदय हुआ। जिनमें बौद्ध धर्म एवं दर्शन एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भारत में अब तक नौ (सांख्य, न्याय, योग, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत, बौद्ध, चार्वाक, तथा जैन) दर्शन का विकास हुआ है। इनमें प्रथम 6 जिन्हें "षड्दर्शन" कहते हैं, वेदो में विश्वास करते हैं जिस कारण ये आस्तिक दर्शन कहे जाते हैं। अन्तिम तीन दर्शन वेदों में विश्वास नहीं करते हैं अर्थात् वेदों का खण्डन करते हैं, जिन्हें नास्तिक दर्शन कहते हैं। इस प्रकार भारतीय दार्शनिक परम्परा में जो चिंतन हुआ वह मुख्यतः दो श्रेणियों में बंटा हुआ है। एक वो है जो वेदों के समर्थक हैं तथा दूसरे वे हैं जो वेदों के विरोध में हैं। किन्तु इतना निश्चित था कि चिन्तन के केन्द्र बिन्दु वेद ही थे और इस प्रकार वेदों का महत्व किसी भी स्थिति में कम नहीं था।

बौद्ध दर्शन एवं उसके प्रमुख सिद्धांत -

ई.पू. छठीं शताब्दी में उत्तरी भारत में ब्राह्मण धर्म, ब्राह्मण आधिपत्य, वैदिक यज्ञ एवं जटिल सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरुप दो धार्मिक एवं वैचारिक क्रान्तियाँ हुंई। वास्तव में ये क्रान्तियाँ तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध सुधार आन्दोलन के रुप में अस्तित्व में आयीं। इनमें से एक का नेतृत्व महावीर स्वामी ने किया था, यद्यपि उनके पूर्व भी उस क्रांति की एक व्यापक एवं दीर्घ कालीन परम्परा मौजूद थी। दूसरी क्रांति का नेतृत्व गौतम बुद्ध ने किया जिनका प्रारम्भिक नाम सिद्धार्थ था। वे बाद में गौतम बुद्ध के नाम से विख्यात हुए और उनकी विचार धारा बौद्ध दर्शन कहलायी।

हम बौद्ध दर्शन की विचार धारा से अवगत होने के पूर्व दर्शन क्या है? इसे समझने का प्रयास करेंगे। 'दर्शन' शब्द 'दृश' धातु से बना है जिसका अर्थ है' जिसके द्वारा देखा जाय'। दर्शन का व्युत्पत्ति अर्थ है- 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्'। अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाए वह दर्शन है। यहाँ दर्शन से अभिप्राय सामान्य देखना नहीं वरन् नेत्र जैसी किसी इन्द्रिय से परे होकर देखने से होता है। दर्शन के साथ शास्त्र शब्द भी जुड़ा हुआ है। शास्त्र शब्द मुख्यतः दो अर्थों में प्रयोग होता है। शास्त्र शब्द के बारे में आगम ग्रंथों में बताया गया है -

"शासनात् शंसनात् शस्त्रं शास्त्रमित्यभिधीयते।"

शास्त्र शब्द की व्युत्पत्ति दो धातुओं से हुई है। 'शास्' अर्थात् आज्ञा करना और शंस अर्थात् प्रकट करना या वर्णन करना। अतः दर्शन शास्त्र का सीधा सा अर्थ इस प्रकार होगा जो जीवन और जगत के गूढ़ रहस्यों का वर्णन करें वह दर्शन शास्त्र है। बौद्ध दर्शन की चिंतन धारा का केन्द्रीय तत्व' मानव जीवन एवं उसकी समस्याओं से मुक्ति है।

 ISSN–2456–0413

इसके लिए गौतम बुद्ध ने चार आर्य सत्य एवं अष्टांगिक मार्ग सुझाये। दुःख को हरने वाले तथा तृष्णा का नाश करने वाले आष्ट्रांगिक मार्ग के आठ अंग है। जिन्हें मज्झिम प्रतिपदा अर्थात् मध्यम मार्ग भी कहते हैं। जिस प्रकार दुःख समुदाय का कारण जन्म है उसी तरह जन्म का कारण अज्ञानता का चक्र है। इस अज्ञान रूपी चक्र को 'प्रतीत्य समुत्पाद' कहा जाता है। प्रतीत्य समुत्पाद ही बुद्ध के उपदेशों का सार एवं उनकी सम्पूर्ण शिक्षाओं का आधार स्तम्भ हैं। प्रतीत्य समुत्पाद में ही अन्य सिद्धांत जैसे क्षण-भंगवाद तथा नैरात्मवाद आदि समाहित हैं। बौद्ध धर्म मूलतः अनीश्वरवादी है वास्तव में बुद्ध ने ईश्वर के स्थान पर मानव प्रतिष्ठा पर ही बल दिया। बौद्ध धर्म अनात्मवादी है इसमें आत्मा की परिकल्पना नहीं की गई है। यह पुनर्जन्म में विश्वास करता है। अनात्मवाद को नैरात्मवाद भी कहा जाता है।

बौद्ध संगीतियां -

प्रथम बौद्ध संगीति अजातशत्रु के शासन काल में आयोजित की गयी थी। जिसका काल 483 ई० पू० था एवं यह राजगृह नामक स्थान पर आयोजित की गयी थी। इसका प्रमुख उद्देश्य था। बुद्ध के उपदेशों को दो पिटकों विनय पिटक तथा सुत्तपिटक में संकलित करना। द्वितीय बौद्ध संगीति वैशाली में 383 ई० पू० में आयोजित की गई.थी। यह कालाशोक (शिशुनाग वंश) के शासन काल में साबकमीर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इस संगीति में ही अनुशासन को लेकर मतभेद के समाधान के लिए बौद्ध धर्म स्थाविर एवं महासंधिक दो भागों में बंट गया। तृतीय बौद्ध संगीति पाटलिपुत्र में 251 ई0पू0 में आयोजित की गई थी। यह अशोक के शासन काल में मोग्गलिपुत्ततिस्स की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इसमें संघ भेद के विरुद्ध कठोर नियमों का प्रतिपादन करके बौद्ध धर्म को स्थायित्व प्रदान करने का प्रयत्न किया गया। धर्म ग्रन्थों का अंतिम रूप से सम्पादन किया गया तथा तीसरा पिटक अभिधम्मपिटक जोड़ा गया। चतुर्थ बौद्ध संगीति कश्मीर के कुण्डलवन में लगभग ईसा की प्रथम शताब्दी में आयोजित की गई। यह कनिष्क के शासन काल में वसुमित्र की अध्यक्षता एवं अश्वघोष की उपाध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इसी संगीति में बौद्ध धर्म दो सम्प्रदायों हीनयान तथा महायान में विभाजित हो गया।

महायान सम्प्रदाय एवं नागार्जुन का शून्यवाद -

बौद्ध धर्म के कठोर तथा परम्परागत नियमों में परिवर्तन करने वाले महायानी कहलाए। महायान का अर्थ है उत्कर्ष मार्ग। इसमें परसेवा तथा परोपकार पर विशेष बल दिया गया है। महायानी बुद्धको ईश्वर का अवतार मानकर उनकी उपासना करते थे। ये मूर्ति पूजा के समर्थक तथा संस्कारों के पक्ष पाती थे। महायान की स्थापना नागार्जुन ने की थी। महायान का आदर्श बोधिसत्व है। कालान्तर में महायान सम्प्रदाय दो भागों में बंट गया-

1. शून्यवाद (माध्यमिक) तथा
2. विज्ञानवाद (योगाचार)। शून्यवाद के प्रवर्तक नागार्जुन हैं, जिनकी प्रसिद्ध रचना माध्यमिक कारिका है।

महायानी नागार्जुनका शून्यवाद -

महायान के पूर्व शून्यवाद -

एक प्रकार से माध्यमिक दृष्टि एवं शून्यता अथवा नैरात्म्य की धारणा प्राचीनतम काल से ही बौद्ध धर्म में उपलब्ध होती है। मूल बुद्ध देशना में सत् और असत् दोनों का ही निराकरण किया गया है तथा परमार्थ को अनभिलाप्य बताया गया है। परमार्थ की सत् और असत् के परे अनिर्वचनीयता ही माध्यमिक दृष्टि की विशेषता है। मनुष्य की तर्क बुद्धि सत्य के सम्यक् बोध में अक्षम है क्योंकि वह सदैव अन्त गृहिणी है। यह अपरिछिन्न, अनन्त सत्य को आत्मसात् नहीं कर पाती। तर्क बुद्धि के इस अस्ति नास्तियुक्त नाना पदार्थ मय जगत् की अपारमार्थिकता उपनिषदों में कुछ स्थलों पर प्रतिपादित की गयी है। बुद्ध के मूल उपदेशों में द्वैतमय जगत्का मिथ्यात्व स्पष्पटतः प्रतिपादित नहीं था। अतः प्रायः प्राचीन हीनयानी सम्प्रदायों में भी शून्यता एवं नैरात्म्य को एक सीमित अर्थ में ग्रहण किया गया है। मनुष्य एक प्रकार का 'संघात' एवं 'संतान' है, एक प्रवाहगत समूह। उसके विभिन्न 'स्कन्धों' में किसी प्रकार स्थिर आत्मा अथवा जीव की कल्पना नहीं करनी चाहिए। देह, इन्द्रियों अथवा मन पृथक-पृथक सत्ता रखते हैं। यही पुद्गल नैरात्म्य कहा जाता है। स्कन्ध, धातु, आयतन आदि में किसी जीव अथवा पुद्गल का अभाव ही तद्गत शून्यता है। फलतः हीनयान में शून्यता अथवा नैरात्म्य का अर्थ प्रायः जीवन अथवा आत्मा का अभाव मात्र है।

प्रज्ञा पारमिता सूत्रों में -

प्रज्ञा पारमिता सूत्रों में शून्यता अथवा नैरात्म्य की इस धारणा का विस्तार किया गया है। किसी भी पदार्थ का अपना कोई स्वभाव नहीं है। यह स्वभाव शून्यता ही वास्तविक शून्यता अथवा नैरात्म्य है। इस अर्थ विस्तार से न केवल जीव अथवा आत्मा का लोप हो जाता हैं अपितु समस्त पदार्थों का भी। अत एव इसे 'धर्मनैरात्म्य' भी कहा जाता है। जहाँ प्रज्ञा पारमिता सूत्रों में एक ओर अभावात्मक शून्यता का यह सर्वग्राही विराट रूप प्रदर्शित है वहीं दूसरी ओर शून्यता को प्रज्ञा पारमिता से अभिन्न प्रतिपादित किया गया है।

अष्ट्रसाहर्सि का प्रज्ञा पारमिता के प्रारम्भ में ही सुभूति की यह अद्भुत उक्ति मिलती है कि **'तमप्यहं भगवन् धर्म्म न समनृपश्यामि यदुत प्रज्ञा पारमिता नाम।'** सुभूति का आशय यह है कि अस्तित्व एवं नास्तित्व पारमार्थिक बोध के बहिर्भूत हैं। वस्तुतः बोधिचित्त अचित्त ही है। इस अचित्त चित्त में अस्तिता एवं नास्तिता को उपलब्धि नहीं होती। यह 'अचित्तता' निर्विकार एवं निर्विकल्प है। यही वास्तविक प्रज्ञा पारमिता है। इसके विपरीत अविद्या है जो अविद्यमान धर्मों की ही सत्व कल्पना करती है। साधारण लोक अविद्या में निमग्न है। शून्यता ही वास्तविक गम्भीरता है। कोई भी पदार्थ वस्तुतः उपलब्ध नहीं होता, न वस्तुतः उत्पन्न

होता है, न वस्तुतः निरुद्ध होता है, केवल अज्ञान युक्त चित्त में ही नानात्व भासित होता है। समस्त व्यावहारिक जगत् विकल्प सापेक्ष, विकल्पित है।

अन्य महायान सूत्र -

जिस प्रकार उपनिषदों में अथवा प्राचीन हीनयानी सूत्र साहित्य में विविध दार्शनिक बीज उपलब्ध होते हैं, उसी प्रकार महायान सूत्रों में भी अनेक परवर्ती बौद्ध दार्शनिक परम्पराओं की मूल प्रेरणा देखी जा सकती है। इन सूत्रों के अनुसार बोधिसत्व को चाहिए कि वह हीनयान प्रोक्त सब धर्मों में नैरात्म्य अथवा शून्यता की भावना करे। इस प्रकार के उपदेश की द्विधा व्याख्या की जा सकती है। एक ओर यह कहा जा सकता है कि जगत के सभी प्रतीयमान पदार्थ अथवा बौद्धिक विचार के द्वारा व्यवस्थापित तत्व, अपारमार्थिक हैं, उनमें कोई स्थिर, पृथक स्वभाव नहीं है। यह विशुद्ध धर्म नैरात्म्य है अथवा धर्म शून्यता है। दूसरी ओर इसी को प्रकारान्तर से कहा जा सकता है कि सभी धर्म कल्पित अथवा विकल्प सापेक्ष हैं। किन्तु ऐसा कहने पर यह ध्वनित होता है कि विकल्पात्मक चित्त ही प्रापंचिक आडम्बर का सूत्रधार है। बोधिसत्व की योगचर्या में भावना का स्थान तथा योगलब्ध निर्माण शक्ति चित्त के अद्भुत महत्व का समर्थन करते हैं। इस प्रकार बोधिसत्व-चर्या से सम्बद्ध धर्म नैरात्य की भावना का दार्शनिक आधार द्विविध सिद्ध होता है सब 'धर्मों' की असारता, तथा चित्त की प्रधानता लंकावतार, धनव्यूह, सन्धि निर्मोचन आदि सूत्रों में इस चित्तवादी दूसरे पक्ष का न्यूनाधिक स्पष्टता से विवरण दिया गया है। पहले शून्यवादी पक्ष का नागार्जुन ने विस्तृत एवं युक्तियुक्त प्रतिपादन किया। योगाचार, विज्ञानवादी पक्ष का विस्तार सर्वप्रथम मैत्रेयनाथ ने किया यह स्मरणीय है कि शून्यवाद तथा योगाचार विज्ञानवाद दोनों का ही एक संयुक्त मूल है तथा उनका प्रारम्भिक विभेद अल्पथा। इसके समर्थन में यह उल्लेखनीय है कि प्रसिद्ध माध्यमिक आचार्य आर्यदेव के 'चतुशतक' को 'बोधिसत्व योगाचार शास्त्र 'कहा गया है। इस पर एक ओर आचार्य वसुबन्धु ने व्याख्या लिखी थी, दूसरी ओर मैत्रेयनाथ ने नागार्जुन के 'भवसंक्रान्ति' पर व्याख्या लिखी तथा नागार्जुन से असंग, बसुबन्धु एवंस्थिरमति में उद्धरण पाये जाते हैं।

नागार्जुन जीवनी -

लंकावतार सूत्र, महामेध सूत्र, महाभेरी सूत्र एवं मंजुश्रीमूलकल्प में नागार्जुन के विषय में भविष्यवाणी उपलब्ध होती है। लंकावतार के अनुसार नाग नाम का भिक्षु परिनिर्वाण के बहुत समय पश्चात दक्षिणापथ में सत् और असत् का प्रतिषेध करते हुए महायान का प्रचार करेगा। चीनी परम्परा के अनुसार नागार्जुन आचार्य परम्परा में बारहवें थे तथा उनका काल परिनिर्वाण के 700 वर्ष पश्चात् था। महामेधसूत्र के अनुसार परिनिर्वाण के 400 वर्ष अनन्तर एक लिच्छवि नाग नाम का भिक्षु बनेगा तथा धर्म का विस्तार करेगा। वहीं पीछे प्रसन्न प्रभाव नाम की लोकधातु में ज्ञानाकरप्रभ नाम का बुद्ध हुआ, यह कहा गया है।

कुमार ने नागार्जुन की जीवनी चीनी में लगभग 405 ई. में अनुदित की थी। इसके अनुसार नागार्जुन दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे। उन्होंने न केवल वेदों का अध्ययन किया अपितु अन्य अनेक विद्याओं में अपूर्व गति प्राप्त की। अलौकिक शक्ति के द्वारा वे अदृश्य हो सकते थे। अपने तीन मित्रों के साथ उन्होंने इस विद्या के अपप्रयोग के द्वारा राजकीय अवरोध में अनुचित प्रवेश किया, उनके पद विद्वानों के सहारे यह अपराध पकड़ा गया। नागार्जुन के तीनों मित्रों को दण्ड हुआ, वे स्वयं मन ही मन भिक्षु बनने का संकल्प कर भागे, इस संकल्प के अनुकूल उन्होंने प्रव्रज्या ग्रहण की तथा त्रिपिटक 90 दिन में पढ़ लिये एवं अर्थ हृदयंगम कर लिये तथापि, असन्तुष्ट रहने पर उन्होंने और सूत्रों की खोज की अन्ततः हिमालय में उन्हें एक स्थविर भिक्षु से महायान-सूत्र लाभ हुआ।

यह स्मरणीय है कि **जग्गयपेट** के स्तूप के निकट प्राप्त एक लेख में भदन्त नागार्जुनाचार्य का उल्लेख मिलता है। राजतरंगिणी में कश्मीर के षडर्हद्वन (आधुनिक ह्यरवन) को नागार्जुन का निवास बताया गया है।

नागार्जुन की रचनाओं में महाप्रज्ञा-पारमिताशास्त्र, मध्यमककारिका तथा-विग्रहव्यावर्तनी का विशेष महत्व है महाप्रज्ञापारमिताशास्त्र में एक प्रकार के नवीन महायानिक अभिधर्म की भूमिका है। मैत्रेयनाथ के समान नागार्जुन ने भी प्रज्ञापारमिता सूत्रों को एक रीतिबद्ध रुप प्रदान करने का प्रयत्न किया। किन्तु वस्तुतः उनके शून्यवाद से इस किसी भी प्रकार के अभिधर्म अथवा रीतिबद्ध दर्शन का सामंजस्य नहीं हो सकता। सम्भवतः इसी कारण माध्यमिक दर्शन परम्परा में महाप्रज्ञापामिताशास्त्र का स्थान नगण्य है। माध्यमिक कारिकाओं में विग्रह व्यावर्तनी में नागार्जुन ने अपने विलक्षण तर्क के द्वारा समस्त अभिधर्म तथा तर्क का खण्डन किया है।

नागार्जुन की तर्क पद्धति -

शून्य के सिद्धान्त का रीतिबद्ध दार्शनिक प्रतिपादन सर्वप्रथम नागार्जुन ने किया। उन्होंने प्रज्ञापारमिता सूत्रों का सार खींचकर एक नवीन दर्शनशास्त्र की रचना की। उन्होंने तर्क से ही तर्क का खण्डन किया तथा शून्यता को प्रतीत्यसमुत्पाद से अभिन्न बताया। उनके शब्दों में

यः प्रतीत्यसमुत्पादः शून्यतां तां प्रचक्ष्महे।
सा प्रज्ञप्तिरुपादाय प्रतिपत्सैव मध्यमा।

उनके समक्ष एक बड़ी समस्या थी 'शून्यता' स्वीकार करने पर तर्क ही नहीं किया जा सकता क्योंकि शून्यवादी किसी भी पक्ष को अपना ले तो शून्यता की ही हानि हो जाती है। जब 'प्रतिज्ञा' ही नहीं की जा सकती तो युक्ति के द्वारा उसका साधन दूर की बात है। वस्तुतः शून्यता का उपदेश सब दृष्टियों से छुटकारे के लिए है। यदि कोई शून्यता को भी दृष्टि बना लेता है तो असाध्य है-

ISSN–2456–0413

शून्यता सर्वदृष्टीनां प्रोक्ता निःसरणं जिनैः।
येषांतुः शून्यतादृष्टिः तानसाध्यान्वभाषिरे।

समस्त शून्यवाद, विकल्पात्मक तर्क-बुद्धि को सत्य के क्षेत्र से बाहर रख देता है। आधुनिक अभिधा में नागार्जुन की प्रणाली डायलेक्टिकल (Dialectical) थी। उद्योतकर आदि ने माध्यमिक सम्मत इस प्रकार की तर्क प्रणाली को केवल 'नास्तिक वितंडा' कहकर उसका खण्डन किया।

शून्यता की न्यायतः प्रतिपाद्यता -

पूर्वपक्षविग्र हव्या वर्तनी नाम के अल्पकाय ग्रंथ में नागार्जुन ने शून्यवाद की न्यायतः प्रतिपाद्यता पर विचार किया है। प्रारम्भ में ही उन्होंने अपने विरोध में दी गयी प्रधान युक्ति का उल्लेख किया है यदि सभी पदार्थों में अपना स्वभाव अविद्यमान है तो तुम्हारे शब्द भी स्वभावहीन होने के कारण स्वभाव के खण्डन में असमर्थ हैं, और दूसरी ओर यदि तुम्हारी बात स्वभाव युक्त है तो तुम्हारी पिछली प्रतिज्ञा खण्डित हो जाती है।

संक्षेप में यह अनिवार्य प्रतीत होता है कि शून्यवाद के समर्थन में सदैव तार्किक विषमता उत्पन्न हो जाती है सब शून्य मानते हुए अन्ततः कुछ शून्य और कुछ अशून्य मानना पड़ता है और इस प्रकार की विषमता में कोई हेतु नहीं दिया जा सकता। शून्यवादी यह भी नहीं कह सकता कि मैं पदार्थों को प्रत्यक्षतः उपलब्ध करके तदनन्तर उनका निषेध करता हूँ क्योंकि उसकी दृष्टि से प्रत्यक्ष ही निषिद्ध है। यही असहाय स्थिति अनुमान एवं अन्य प्रमाणों की माननी चाहिए।

यदि सब पदार्थ निःस्वभाव होते तो उनके पृथक् नाम ही नहीं होते। सदैव नाम का आधार कोई न कोई वस्तु देखी जाती है तथा निर्वस्तुक नाम असम्भव है। यदि यह कहा जाय कि नाम का आधार स्वभाव है, किन्तु यह स्वभाव पदार्थों का नहीं है तो प्रश्न उठता है कि "यह विलक्षण स्वभाव किसका है?

यह भी स्मरणीय है कि प्रतिषेध उसी का होता है जिसकी सत्ता प्राप्त हो। जैसे यह कहने पर कि 'घर में घड़ा नहीं है।' यह मान लिया जाता है कि घड़ा यहाँ हो सकता था अथवा अनयत्र है। इस युक्ति से विदित होता है कि शून्यवादी द्वारा स्वभाव का प्रतिषेध स्वयं स्वभाव को सिद्ध करता है।

अन्त में, सब पदार्थों का प्रतिषेध इसलिए अनुपपन्न है क्योंकि यह प्रतिषेध्य के न पहले हो सकता है न पीछे और न साथ। यदि प्रतिषेध पहले माना जाय तो प्रतिषेध्य के अभाव में प्रतिषेध होगा किसका? यदि प्रतिषेध को प्रतिषेध्य के पश्चात् माना जाय तो यह समझ में नहीं आता कि प्रतिषेध्य के होने पर प्रतिषेध से होगा क्या? यदि प्रतिषेध और प्रतिषेध्य दोनों साथ हों तो उनमें किसी प्रकार का कार्य कारण भाव स्वीकार नहीं किया जा सकता। इस प्रकार नागार्जुन ने विस्तार से शून्यवाद के विरोध में पूर्वपक्ष की युक्तियों का प्रतिपादन और अधिक विस्तार से इन उक्तियों का खंडन किया है।

नागार्जुन का उत्तर -

शून्यवादी को अपने वचन की शून्यता अभीष्ट है, किन्तु उसके वचन और अन्य पदार्थ हेतु-प्रत्यय-सामग्री की अपेक्षा रखते हुए समान-कोटिक है और और सभी समान रुपसे शून्य है। वस्तुतः प्रतिपक्षी ने शून्यता का सिद्धांत ठीक समझा नहीं। पदार्थों का प्रतीत्य समुत्पाद ही शून्यता है, क्योंकि जिसकी सत्ता परतंत्र अथवा परापेक्ष होती है उसका अपना वास्तविक स्वभाव स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि पदार्थों का वास्तविक स्वभाव हो तो उन्हें हेतु-प्रत्यय की अपेक्षा न हो। उनकी यह निःस्वभावता ही शून्यता है। शून्यवादी का वचन भी प्रतीत्य समुत्पन्न है और इसी प्रकार शून्य है जैसे कि अन्य पदार्थ।

शून्यता प्रतिपादक वाक्य न स्वभाविक है और न यहाँ पर तार्किक विषमता उत्पन्न होती है सभी पदार्थ शून्य हैं और उनकी शून्यता का प्रतिपादक वाक्य भी शून्य है, किन्तु इन सबकी शून्यता प्रतीत्य समुत्पन्न होने के कारण है।

यह भी कहा जा सकता है कि ध्वनिनिवारण के दृष्टान्त में हेतु साध्य सम है क्योंकि ध्वनि की सत्ता ही नहीं है। सच बात तो यह है कि शून्यवादी व्यवहार-सत्य को स्वीकार करते हुए ही स्वभाव-शून्यता का प्रतिपादन करता है। व्यवहार-सत्य को स्वीकार किये बिना धर्म का उपदेश नहीं किया जा सकता।

व्यवहारमनाश्रित्य परमार्थो न देश्यते ।
परमार्थमानागम्य निर्वाणं नाधिगम्यते ॥

यदि शून्यवादी की कोई प्रतिज्ञा है तब तो उसमें दोष उद्भावित किया जा सकता है, किन्तु शून्यवादी किसी प्रतिज्ञा को उपस्थित करता ही नहीं। सभी पदार्थ शून्य एवं अत्यन्त-उपशान्त हैं, ऐसी स्थिति में प्रतिज्ञा ही सम्भव नहीं है, प्रतिज्ञा के लक्षण की प्राप्ति किस प्रकार होगी। यदि प्रत्यक्ष आदि चार प्रमाणों से अथवा उनमें से किसी एक से शून्यवादी कुछ उपलब्ध कर प्रवृत्ति एवं निवृत्ति को पुरस्कृत करे तभी तद् विषयक उपालम्भ न्याय होगा, किन्तु वस्तुतः शून्यवादी न प्रमाणोपलब्ध किसी विषय की चर्चा करता है, न उसके आधार पर किसी प्रकार प्रवृत्ति की पुनश्च, यदि प्रमाणों की सिद्धि स्वतः मानी जाय तो उन्हें प्रमेयों की भी अपेक्षा न होगी। यदि प्रमेय-निरपेक्ष रुप से प्रमाण-सिद्ध मान ली जाय तो ये स्वतः सिद्ध प्रमाण किसी भी प्रमेय के साधन न होंगे।

शून्यवादी धर्मों के स्वभाव का प्रतिषेध करते हुए धर्म विनिर्मुक्त किसी पदार्थ का स्वभाव, स्वीकार नहीं करते। ऐसी स्थिति में निस्वभाव धर्मों के अतिरिक्त किसी अन्य स्वभाव के स्वीकार का उपलाम्भ अयुक्त हो जाता है। यह आपत्ति भी निराधार है कि जिसकी सत्ता है उसी का प्रतिषेध किया जा सकता है और अतएव स्वभाव को स्वीकार किये बिना शून्यता का उपदेश नहीं हो सकता। क्योंकि यदि ऐसा है तब तो विपक्षी के द्वारा शून्यता का प्रतिषेध ही शून्यता को सिद्ध कर देता है। यदि शून्यता के प्रतिषेध्य होते हुए भी वह प्रतिषिध्यमान शून्यता शून्यता नहीं है, तो सत् का ही प्रतिषेध होता है, यह सिद्धान्त खण्डित हो जाता है। पुनश्च शून्यवादी न किसी का प्रतिषेध करता है न उसके लिए कोई

प्रतिषेध्य है, अतएव यह कहना व्यर्थ है कि उसके प्रतिषेध में ही विधि पुरस्कृत है। पूर्वपक्ष में कहा गया है कि उक्ति के बिना भी असत् का प्रतिषेध प्रसिद्ध है। अतएव निस्स्वभावत्य का ख्यापन व्यर्थ है। इसके उत्तर में शून्यवादी का कहना है कि 'सब पदार्थ निस्वभाव है' यह उक्ति पदार्थों को निस्स्वभाव नहीं बनाती, किन्तु स्वभाव के पूर्व सिद्ध अभाव का ज्ञापन करती है। उदाहरण के लिए देवदत्त के घर मे न होने पर यदि कोई कहे 'देवदत्त घर में है' और इस पर अन्य कोई पुरुष उसका निषेध करते हुए कहे 'नहीं है' तो उसका निषेध-वचन देवदत्त का अभाव उत्पन्न नहीं कर सकता, केवल उसे प्रकाशित करता है।

पूर्वोक्त मृगतृष्णा के दृष्टान्त पर शून्यवादी का कहना है यदि मृग तृष्णा में जल बुद्धि स्वाभाविक हो तो वह प्रतीत्यसमुत्पन्न नहीं होगी। वस्तुतः मृग तृष्णा विपरीत-दर्शन तथा अयोनिशोमनस्कार की अपेक्षा रखते हुए ही यह जलबुद्धि उत्पन्न होती है। अभिनिवेश स्वाभाविक हो तो उसकी निवृत्ति किस प्रकार होगी? स्वभाव अनिवर्तनीय है। ऐसे ही अन्य ग्राह्य आदि धर्मों में भी शून्यता समझनी चाहिए।

पूर्वपक्ष में कहा गया है कि नैः स्वभाव्य के कारण हेतु के ही असिद्ध होने से शून्यवाद की सिद्धि असम्भव है। इसके उत्तर में भी वही तर्क उपयोगी है जैसा ऊपर षट्क-प्रतिषेध में प्रयुक्त हुआ है। प्रतिषेध और प्रतिषेध्य के परस्पर सम्बन्ध की अनुपपत्ति में शून्यवादी का उत्तर है कि यह सच है कि त्रिकाल में न प्रतिषेध सम्भव है न प्रतिषेध्य, किन्तु यह वस्तुतः शून्यवाद का समर्थन ही है।

इस प्रकार शून्यवाद की तार्किक सम्भावना पर विचार करते हुए नागार्जुन का अन्त में कहना है कि जो शून्यता को मानता है उसके सभी पुरुषार्थ सुरक्षित रहते हैं। शून्यता को मानने वाले प्रतीत्यसमुत्पाद को हृदयंगम करते हैं और इस प्रकार चार आर्य सत्य तथा श्रामण्यफल उन्हें उपलब्ध होते हैं। इसी आधार पर उनके समस्त लौकिक व्यवहार भी व्यवस्थित हो जाते हैं। निर्गलितार्थ यह है कि शून्यता तथ्य विषयक विधि-निषेध की भाषा का पद नहीं है, बल्कि उससे उच्चतर भाषा का है जिसका प्रयोग निरन्तर भाषा की आधारभूत तार्किक दृष्टि के विचार के लिए होता है। शून्यता दृष्टि-प्रतिषेध है न कि 'वस्तु' प्रतिषेध।

निष्कर्ष-

शून्यवाद या शून्यता बौद्धों की महायान शाखा माध्यमिक नामक विभाग का मत या सिद्धान्त है जिसमें संसार को शून्य और उसके सब पदार्थों को सत्ताहीन माना जाता है। 'माध्यमिक न्याय' ने "शून्यवाद" को दार्शनिक सिद्धान्त के रुप में अंगीकृत किया है। इसके अनुसार ज्ञेय और ज्ञान दोनों ही कल्पित है। पारमार्थिक तत्व एकमात्र 'शून्य' ही है। 'शून्य' सार, असत्, सदसत् और सदसद्विलक्षण, इन चार कोटियों से अलग है। जगत, इस शून्य का ही विवर्त है। विवर्त का मूल है संवृत्ति, जो अविद्या और वासना के नाम से भी अभिहित होती है। इस मत के अनुसार कर्मक्लेशों की निवृत्ति होने पर मनुष्य निर्वाण प्राप्त कर उसी प्रकार शांत हो जाता है जैसे तेल और बत्ती समाप्त होने पर प्रदीप।

नागार्जुन की दृष्टि में मूल तत्व शून्य के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। ध्यान देने की बात यह है कि यह शून्य कोई निषेधात्मक वस्तु नहीं है जिसका अपलाप किया जा सके। किसी भी पदार्थ का स्वरुपनिर्णय करने में चार ही कोटियों का प्रयोग संभाव्य है-

- अस्ति (विद्यमान है),
- नास्ति (विद्यमान नहीं है),
- तदुभयम् (एक साथ ही अस्ति नास्ति दोनों)
- नोभयम् (अस्ति नास्ति दोनों कल्पनाओं का निषेध)

परमार्थ इन चारों कोटियों से मुक्त होता है और इसीलिए उसके अभिधान के लिए 'शून्य' शब्द का प्रयोग हम करते हैं।

नागार्जुन के शब्दों में-

न सन् नासन् न सदसत्
न चाप्यनुभयात्मकम्।
चतुष्कोटिर्विनिर्मुक्त तेत्वं
माध्यमिका विदुः ॥

शून्यवाद की सिद्धि के लिए नागार्जुन ने विध्वंसात्मक तर्क का उपयोग किया है वह तर्क, जिसके सहारे पदार्थ का विश्लेषण करते-करते वह केवल शून्यरुप में टिक जाता है। इस तर्क के बल पर द्रव्य, गति, जाति, काल, संसर्ग, आत्मा आदि तत्वों का बड़ा ही गंभीर, मार्मिक तथा मौलिक विवेचन करने का श्रेय नागार्जुन को है।

"हर चीज शून्य है, यह सुनने में विचित्र चाहे जितना भी लगे, लेकिन यही एक मात्र सत्य है। शून्यता सभी विषयों का आधार है। इस सत्य पर विश्वास तभी होता है, जब मनुष्य बुद्धत्व प्राप्त करता है। बुद्धि से यह सत्य पकड़ा नहीं जा सकता केवल अनुभव से ही हम उस निःशब्दता को सुन सकते हैं, जो अस्ति और नास्ति से परे है।"

सन्दर्भ -

- पाण्डेय गोविन्द चन्द (2006) बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, उ०प्र० हिदी संस्थान लखनऊ।
- हिरियाना एम0 (2009) भारतीय दर्शन की रुपरेखा, मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, पुनर्मुद्रण।
- मुकर्जी एस. के. (1993) सार्वभौमिक प्रवाह का बौद्ध दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, पुनर्मुद्रण।
- लाल रमन विहारी (2013) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
- अम्बेडकर, भीमराव, रामजी (2003), बुद्ध और उनका धम्म, सोसायटी आफ इंडिया समता प्रकाशन, नागपुर।

* शोध-छात्र, रतनसेन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बांसी, सिद्धार्थनगर

** शोध निर्देशिका, बी.एड्. विभाग, रतनसेन स्नातकोत्तर महाविद्यालय बांसी, सिद्धार्थनगर

नरेंद्र मोदी एवं आध्यात्म

बौद्ध धर्म के विशेष संदर्भ में

श्रीमती स्वप्निल पाण्डेय

प्रस्तावना -

भारत विश्व के ऐसे दुर्लभ देशों में से एक है, जिसके पास अपनी स्वयं की सभ्यता रही है। जिसकी जडें प्राचीन मेसोपोटामिया से लेकर पूर्व कान्य युग तक प्रत्येक सभ्यताओं में समाहित रहती हैं। भारतीय सभ्यता आज भी इन्हीं उद्देश्यों को लेकर फलती-फूलती नजर आ रही है। हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी इस सत्य को भली-भांति जानते हैं कि कैसे हमें अपनी जड़ों को लेकर स्पष्ट एवं अडिग होना चाहिए क्योंकि इससे ही हमारे आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। महानतम प्राचीन अतीत के साथ अपनी सांस्कृतिक चेतना को पुनर्जीवित करना वैसे ही कठिन तपस्या है जिस प्रकार, राजा भगीरथ ने मां गंगा को पृथ्वी पर लाने की थी। अपनी संस्कृति और धर्म से जुड़ाव को पुनर्जीवित करना ही उनकी तपस्या है। प्रधानमंत्री मोदी धीरे-धीरे और सौम्य कदमों से हमारी आध्यात्मिक रूपी गंगा को पुनर्जीवित कर रहे हैं।

आध्यात्मिकता का संदेश -

नरेंद्र मोदी आध्यात्मिकता को समझते हैं। अपने प्रधानमंत्री शासन काल में उन्होंने बौद्ध धर्म के उत्थान के लिए अनेक परियोजनाओं का शिलान्यास किया, जिसमें स्वदेश दर्शन योजना के अंतर्गत वर्मा 2015 से बौद्ध तीर्थ यात्रियों की यात्रा को बढ़ावा देने के लिए बड़ी मात्रा में ढांचागत तथा सांस्कृतिक परियोजनाओं के उद्देश्य से बड़े पैमाने पर निवेश किया गया।

महापरिनिर्वाण एक्सप्रेस -

महापरिनिर्वाण एक्सप्रेस जैसी ट्रेनों के शुभारंभ के साथ तीर्थ स्थल संपर्क कार्यक्रम प्रारंभ किए गए जो रेल बिहार के बौद्ध सर्किट को कवर करती हैं। मोदी ने कुशीनगर में भी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे का शुभारंभ किया जिससे भारी संख्या में बौद्ध तीर्थ यात्री कुशीनगर भ्रमण के लिए आ सकें। बुद्ध पूर्णिमा, लुंबिनी महोत्सव, लोसर महोत्सव जैसे दिवस के साथ ही राष्ट्रीय बौद्ध त्योहारों को कैलेंडर में जोड़ा गया। प्रधानमंत्री मोदी ने भीमराव अंबेडकर सेंटर के अंतर्गत 200 करोड़ के लागत से बौद्ध अध्ययन के लिए एक विशाल विद्यालय की स्थापना करवाई। आर0सी0आर0 ने स्वदेशी बौद्ध संस्कृति को प्रोत्साहन देने के लिए लद्दाख महोत्सव का भी प्रारंभ किया। मोदी के बौद्ध धर्म के प्रति रुझान को देख कर ही 2021 नवंबर में पहली बार अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध सम्मेलन की मेजबानी भारत ने की।

प्रधानमंत्री मोदी जब 30 मई 2019 को भूटान के राजकीय यात्रा पर गए तो वहां पर, उन्होंने भूटानी युवाओं को संबोधित करते हुए बौद्ध धर्म और आध्यात्मिकता पर प्रकाश डाला तथा भूटान में बौद्ध धर्म के उत्थान के लिए हर प्रकार की सहायता देने का आश्वासन भी दिया। मोदी बौद्ध धर्म के प्रचार, प्रसार एवं उत्थान के लिए सदैव प्रयासरत रहते हैं।

उन्होंने दतसान गुजेकोईनेई बौद्ध मंदिर के प्रधान पुजारी बालजेहविच वडमेयेव को जम्पा डोनर के ग्रंथ ऊर्गा कंजूर की 100 खंड प्रति समर्पित की। मोदी बौद्ध अनुयायियों के वैशाख दिवस को अत्यंत पवित्र दिन मानते हैं उनका मानना है कि यह मानवता के लिए भगवान बुद्ध तथागत के परिनिर्वाण जन्म और प्रबोधन के प्रति आदर करने का दिन है। यह बुद्ध में आनंदित होने का दिन है और साथ ही परम सत्य और चार महान सत्य एवं धम्म की कालातीत प्रासंगिकता और प्रतिबिंबित करने का दिन है। वैशाख का दिन दास, पारमिता यानी पूर्णता, दान, सील, नेख्यम, पिन्या, वीरि, खन्ती, सच्च, अदिल्लान, मेत्ता और उपेख्या के विमाय में चिंतन करने का दिन है।

श्रीलंका की यात्रा पर प्रधानमंत्री मोदी-

उन्होंने श्रीलंका में अपने उद्बोधन में कहा कि भारत में बौद्ध धर्म लोगों को प्रेरणा देने का माध्यम है। भारत ने विश्व को बौद्ध तथा उनकी शिक्षाओं का अमूल्य उपहार दिया है। मोदी ने श्रीलंका के उद्बोधन में कहा कि भारत में बोधगया, जहां राजकुमार सिद्धार्थ बुद्ध बने थे, बौद्ध जगत का एक पवित्र केंद्र है। वाराणसी में भगवान बुद्ध ने पहला उपदेश दिया जिसे संसद में प्रस्तुत करने का सम्मान मिला था, ने धम्म के चक्र को गति प्रदान किया। भारत के राष्ट्रीय प्रतीकों ने बौद्ध धर्म से प्रेरणा ली है। बौद्ध धर्म और इसकी शिक्षाओं से हमारा शासन, दर्शन, और हमारी संस्कृति ओत-प्रोत होती रहती है। मोदी का मानना है कि बौद्ध धर्म का दैवीय सुगंध भारत से निकलकर दुनिया के सभी कोनों में फैला हुआ है। सम्राट अशोक के सुयोग्य पुत्र महेंद्र और संघमित्रा ने सबसे बड़े उपहार धम्म को विश्व भर में फैलाने के उद्देश्य से धम्म दूत के रूप में भारत श्रीलंका की यात्रा भी की थी।

श्रीलंका की यात्रा पर प्रधानमंत्री मोदी ने उद्बोधन में कहा कि बुद्ध ने स्वयं कहा था जानती अर्थात् धम्म का उपहार सबसे बड़ा उपहार होता है। श्रीलंका आज बौद्ध धर्म तथा शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण केंद्र बन गया है। बौद्ध धर्म के धरोहर को संरक्षित रखने के लिए विश्व, श्रीलंका का सदैव आभारी रहेगा। मोदी का मानना है कि भगवान बुद्ध का संदेश आज 21वीं सदी में भी उतना ही प्रासंगिक है जितना वह ढाई सौ साल पहले था। बुद्ध ने जो माध्यम प्रतिपदा का मार्ग

दिखाया वह आज भी मनुष्यों के कल्याण का उत्तम मार्ग है। बौद्ध धर्म की सार्वभौमिक तथा सदाबहार प्रकृति असरदार है, जो विभिन्न देशों को एकता के सूत्र में बांधती है। आज दक्षिण मध्य, दक्षिण पूर्व और पूर्वी एशिया के देश भगवान बुद्ध की धरती से अपने बौद्ध सम्बन्धों पर गर्व करते हैं।

सामाजिक न्याय एवं विश्वशांति -

नरेंद्र मोदी सामाजिक न्याय तथा स्थाई विश्वशांति के लिए बुद्ध की शिक्षा को महत्वपूर्ण मानते हैं। मोदी बौद्ध धर्म के आदर्शों को बनाए रखने और आचरण में शांति सह अस्तित्व समावेशीकरण के मूल्यों को अपनाने के लिए इसे महत्वपूर्ण मानते हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने निरंतर भारत की आध्यात्मिक शांति को ना केवल राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में केंद्रियता पर जोर दिया बल्कि वैश्विक समस्याओं के समाधान में भी इस शांति की महत्ता को रेखांकित किया।

मोदी ऐसी आध्यात्मिकता पर सदैव जोर देते हैं जो देश सेवा तथा ज्ञान व कल्याण का एक अमूल्य माध्यम हो। मोदी ने सदा ही भारत की आध्यात्मिक शांति को देश का भाग्य विधाता और गुलामी के मार्गों में आशा की संजीवनी के रूप में देखा। वे सदैव स्पष्ट रहे हैं कि भारत के गौरवपूर्ण स्वतंत्रता आंदोलन की पीठिका भारत की आध्यात्मिक शांति पर आधारित रही है। प्रधानमंत्री का बहुजन-हिताय सक्रिय पुर्नः सृजनकारी धारणा में पूर्ण विश्वास है। यह ऐसा गुण है जो भगवान बुद्ध के संदेशों में स्वाभाविक रूप में प्रतिद्वनित होता है। बुद्ध के उपदेश आत्मदीपों भव को अपनी वैश्विक शांति के रूप में अभिव्यन करते हैं। मोदी बुद्ध के उपदेश ये सम्पन्नता यथा बुद्ध की शिक्षा का महत्ता भी उजागर करते हैं जिसका अर्थ होता है शिथिलता त्याग कर ही अमृत पाया जा सकता है और शिथिलता मृत्यु है। वह अपनी अति परिश्रमी निजी जीवन शैली में भी इस सूत्र को आत्मसात करते हैं।

निष्कर्ष -

आज इन्हीं उपदेशों को आत्मसात करते हुए उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के महासभा में 2019 में भाषण देते हुए कहा कि हम उस देश के वासी हैं, जिसने दुनिया को युद्ध नहीं बुद्ध दिया है। भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का मानना है कि गौतम बुद्ध का जीवन शांति, सद्भाव और सहअस्तित्व पर आधारित था। आज भी देखा जाए तो ऐसी शक्तियां सृष्टि में मौजूद है जिनका अस्तित्व, घृणा, आतंक और हिंसा को फैलाने पर टिकी है। आज विश्व की मांग है कि मनुष्यता में भरोसा रखने वाले सभी लोग एक साथ आए और आतंकवाद तथा कट्टरपंथ को हरायें। उनकी यह इच्छा बुद्ध के उपदेशों को आत्मसात करने से ही पूरी होगी। वैशाख उत्सव पर 7 मई 2020 को जनता को संबोधित करते हुए कहा कि, जीवन की मुश्किलों को दूर करने के संदेश और संकल्प ने भारत की सभ्यता और संस्कृति को हमेशा नई दिशा दिखाई है। भगवान बुद्ध ने भारत की इस संस्कृति को महान और समृद्ध बनाया है।

अतः वर्तमान में देखा जाए तो समय बदला, स्थिति बदली, समाज की व्यवस्थाएं बदली, लेकिन भगवान बुद्ध का संदेश हमारे जीवन में निरंतर प्रवाहमान रहा है। यह सिर्फ संभव तभी हुआ क्योंकि बुद्ध और बौद्ध एक नाम, धर्म नहीं बल्कि एक विचार है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

- त्रिपाठी, अमीश, (2022) मोदी 2.0, मोदी के भगीरथ प्रयास, ब्लू क्राफ्ट डिजिटल फाउंडेशन, नई दिल्ली, पृष्ट सं. 49
- मकवाणा, किशोर, (2022) कॉमनमैन नरेन्द्र मोदी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
- https://www.pmindia.gov.in
- https://www.pmindia.gov.in/hi/news_updates

• असिस्टेंट प्रोफेसर,
राजनीति शास्त्र विभाग,
चन्द्रकान्ति रमावती देवी
आर्य महिला पी. जी. कालेज, गोरखपुर

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षा की प्रासंगिकता

स्मिता दूबे*
डॉ. रश्मि श्रीवास्तव**

सारांश -

बौद्ध धर्म की उत्पत्ति छठी शताब्दी ईसा पूर्व में ब्राह्मणवाद, जातिवाद और अन्य सुधारों के जटिल अनुष्ठानों के जवाब में हुई थी। बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ, ब्राह्मण शिक्षा के साथ, बौद्ध शिक्षा की एक प्रणाली विकसित हुई। प्रौद्योगिकियों, वैश्वीकरण और अपेक्षाओं और आकांक्षाओं के संदर्भ में अलग-अलग तरीकों से सोचने वाले लोगों के एक साथ आने की गति का मतलब है कि हमें नई चीजें सीखनी चाहिए और अलग तरीके से सीखना चाहिए। गुफा में रहने वाले व्यक्ति से हट कर कार बनाने में हमें हजारों साल लग गए। फिर हमें हवाई जहाज से कार को स्थानांतरित करने में दसियों साल लग गए। फिर हमें हवाईजहाज से कंप्यूटर तक जाने में कुछ साल लग गए। आधुनिकीकरण के युग में बच्चे विभिन्न प्रकार की तकनीकों से गहराई से जुड़े हुए हैं। वर्तमान में 21वीं सदी में हम प्रौद्योगिकी की दुनिया में एक लंबा सफर तय कर चुके हैं। प्राचीन भारतीय शिक्षा की उत्पत्ति व्यावहारिक आवश्यकता से हुई थी। प्राचीन भारतीय शिक्षा का मुख्य लक्ष्य जीवन जीना था। इस शिक्षा का उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि मानव जीवन को नियंत्रित और प्रबंधित करके जीवन का अर्थ कैसे प्राप्त किया जा सकता है। हमारे देश में, देश के बाहर भी, बौद्ध शिक्षा प्रणाली को आधुनिक शिक्षा प्रणाली में लागू करने का हर संभव प्रयास किया जा रहा है।

बीजशब्द : ***आधुनिकीकरण, भारतीय शिक्षा, बौद्ध शिक्षा, संस्कार, ब्राह्मण शिक्षा***

प्रस्तावना -

लगभग डेढ़ हजार वर्षों से बौद्ध शिक्षा प्रणाली ब्राह्मणवादी शिक्षा प्रणाली के साथ-साथ प्राचीन भारत के गौरव में रही है। सामाजिक जीवन के साथ उनकी अंतर्निहित समानता और भागीदारी ने इन दोनों शिक्षा प्रणालियों के सह-अस्तित्व में कोई महत्वपूर्ण बाधा उत्पन्न नहीं की। ब्राह्मण शिक्षा प्रणाली की तरह, बौद्ध शिक्षा प्रणाली ने आधुनिक शिक्षा सिद्धांत की कई महत्वपूर्ण अवधारणाओं को जन्म दिया है। प्राचीन भारतीय बौद्ध शिक्षा प्रणाली में, हम शिक्षा को लोकतांत्रिक बनाने का पहला प्रयास देखते हैं।

बौद्ध शिक्षा की मान्यता वर्तमान में भी प्रासंगिक है। जिसमें उच्च मान्यता एवं मानसिकताओं के सामूहिक या अविभेदित रुप को भी ध्यान दिया गया है। (रोजर शर्ते, कल्चरल हिस्टी, 1988) शिक्षा में विभिन्न प्रकार के अंतर्विरोधों को उजागर करने से इसका विकसित स्वरुप सामने आएगा। प्रायः शिक्षा का प्रयोग मुख्य रुप से कलात्मक सृजन एवं बौद्धिक उपलब्धियों के अर्थ में किया जाता है। (विष्णु प्रभाकर, संस्कृति क्या है? साहित्य मण्डल प्रकाशन, 2007, पृ० 136) शिक्षा का प्रयोग व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवनशैली को परिष्कृत करने वाले साधन के रुप में करते हैं। ये मान्यता दर्शाता है कि शिक्षा का अध्ययन दो अलग अलग कसौटी पर किया जा सकता है। प्रथम बौद्धिक परिष्कार की कसौटी तो दूसरी ऐतिहासिक रुप से अपनाई गई भौतिक स्तर के विकास की कसौटी। (क्लिफंड गेयर्त्ज, दि इन्टरप्रेटेशन ऑफ कल्चर, वर्सी, 1971, पृ० 68) यह पक्ष लम्बे समय तक मुख्य धारा से दूर रहा क्योंकि रॉके के वस्तुनिष्ठवाद, कोम्ते का प्रत्यक्षवाद तथा कार्लमार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद शिक्षा की तुलना में अर्थव्यवस्था एवं राज्य के इतिहास को अधिक महत्वपूर्ण मानते रहे हैं। जेरेमी बॅथम की उपयोगितावाद के संदर्भ में बौद्ध शिक्षा की वर्तमान की कसौटी पर उसकी उपयोगिता सहज परिलक्षित होती है।

बौद्ध शिक्षा का तंत्र एवं सुसंस्कृति की अद्भुत परंपरा -

बौद्ध शिक्षा एक अद्भुत संस्कृति और तत्त्व शास्त्र के प्रति प्रेम की अद्वितीय ऊँचाइयों की ओर बढ़ने का माध्यम है। यह शिक्षा तंत्र न केवल विज्ञान, बल्कि धर्म, तत्त्वशास्त्र, और विचार की गहन अध्ययन भी प्रदान करता है।

बौद्ध धर्म के सिद्धांत -

सम्यक दृष्टि - (सम्यक शब्द का अर्थ है सही, उचित, उपयुक्त, शुद्ध आदि) सम्यक दृष्टि का अर्थ है कि हम जीवन के दुःख और सुख का सही अर्थ में अवलोकन करें। चार आर्य सत्यों को समझें। आर्य सत्य चार हैं -

1. **दुःख** – संसार में दुःख है,
2. **समुदय** – दुःख के कारण हैं,
3. **निरोध** – दुःख के निवारण हैं,
4. **मार्ग** – निवारण के लिये अष्टांगिक मार्ग हैं।

सम्यक संकल्प – यदि दुःख से छुटकारा पाना हो तो दृढ़ संकल्प कर लें कि आर्य मार्ग पर चलना है।

सम्यक वाक् – यदि मनुष्य की वाणी में शुचिता और सत्यता नहीं है तो दुःख निर्मित होने में ज्यादा समय नहीं लगता।

सम्यक कर्म – कर्म की शुद्धि आवश्यक है। आचरण की शुद्धि क्रोध, द्वेष और दुराचार आदि कुवृतियों का त्याग करने से सम्भव है।

सम्यक आजीविका – किसी अन्यायपूर्ण उपाय के स्थान पर न्यायपूर्ण जीविकोपार्जन ही उचित और शुभ है।

सम्यक प्रयास – जीवन में शुभ के लिए और स्वयं को सुधारने के लिए निरंतर प्रयास करते रहना चाहिए।

सम्यक स्मृति – चित्त में एकाग्रता के भाव से मानसिक योग्यता व क्षमता पाना।

सम्यक समाधि – उपरोक्त सात मार्ग के अभ्यास से चित्त की एकाग्रता द्वारा निर्विकल्प प्रज्ञा की अनुभूति होती है। इसे निर्वाण अथवा मुक्ति के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है।

बौद्ध शिक्षा दर्शन में पाठ्यक्रम का स्वरूप –

चार आर्य सत्य, अष्टांगिक मार्ग के माध्यम से नैतिक जीवन, सम्यक संकल्प, सम्यक कर्म द्वारा सम्यक आजीविका प्राप्त करने की शिक्षा, भगवान बुद्ध तथा बौद्ध विद्वानों के ग्रंथों का अध्ययन सम्मिलित था। प्रारम्भिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में विभिन्न विद्याओं - शब्द विद्या (व्याकरण आदि), न्याय विद्या, शिल्प विद्या, चिकित्सा विद्या, हेतु विद्या (तर्कशास्त्र) तथा आध्यात्म विद्या (दर्शन) का अध्ययन-अध्यापन सम्मिलित था। उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में विद्यार्थियों को बौद्ध दर्शन, हिन्दू दर्शन, जैन दर्शन, अन्य धर्मशास्त्र, तत्वमीमांसा, तर्कशास्त्र, संस्कृत, पाली, खगोल विज्ञान, ज्योतिष, चिकित्सा, विधि, राजनीति, प्रशासन, तांत्रिक दर्शन आदि का अध्ययन करवाया जाता था।

बौद्ध शिक्षा दर्शन में शिक्षक-आचार्य की संकल्पना -

विश्व की प्रत्येक जीवन पद्धति में गुरु अथवा शिक्षक को अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है इसी प्रकार बौद्ध शिक्षा दर्शन में भी शिक्षक की महती भूमिका है। आचार्य का दायित्व था कि विशेषकर जीवन के आध्यात्मिक पक्ष से जुड़े विषयों जैसे सम्यक संकल्प, सम्यक कर्म, सम्यक वाणी, सम्यक प्रयास, सम्यक स्मृति से सम्यक समाधि तक की विद्यार्थी की ज्ञान यात्रा का मार्ग दर्शन करना। आचार्य से कनिष्ठ उपाध्याय नामक दायित्व था जो किसी एक विषय का विशेषज्ञ होता था और आजीविका का शिक्षण भी प्रदान करता था। छोटे-छोटे समूहों में बैठकर विद्यार्थी सूत्रों को कंठस्थ कर, स्मरण कर, चर्चा आदि के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते थे। एक बार संघ में प्रवेश के बाद उसकी देखभाल का दायित्व आचार्य का था।

बौद्ध शिक्षा दर्शन में विद्यार्थी की संकल्पना -

बौद्ध शिक्षा दर्शन में प्रवज्या नामक संस्कार के अंतर्गत विद्यार्थी को आठ वर्ष की आयु में बौद्ध संघ में प्रवेश करना पड़ता था। सर मुण्डाने, गेरुआ वस्त्र धारण करने के बाद भिक्षु से प्रवेश का आग्रह करना पड़ता था। उपयुक्त पात्र को प्रवेश के पश्चात् कड़े नियमों का पालन करना होता था। बीस वर्ष की आयु तक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात सभी संयासियों के सामने विद्यार्थी की परीक्षा ली जाती थी। इस परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर विद्यार्थी को संघ का सदस्य माना जाता था और आगे की शिक्षा के लिए पात्र समझा जाता था।

इस प्रकार महात्मा बुद्ध तथा परवर्ती दर्शन में शिक्षा विद्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास पर केन्द्रित थी। नैतिक-अध्यात्मिक अर्जन पर बल, कड़ा अनुशासन, आजीविका कमाने के लिए हस्त-कौशल की शिक्षा, शारीरिक दंड का अभाव, तर्क-आधारित शिक्षा आदि ये सभी तत्त्व हैं जिन्हें आधुनिक शिक्षा शास्त्री एक आदर्श शिक्षा प्रणाली में आवश्यक समझते हैं। बौद्ध कालीन शिक्षा का महत्व तथा प्रभाव इस बात से समझा जा सकता है कि यातायात के संसाधनों के अभाव में संसार के कोने-कोने से विद्यार्थी यहाँ शिक्षा ग्रहण करने आये।

भारतीय चिन्तन या दर्शन के क्षेत्र में बौद्ध दर्शन का महत्वपूर्ण स्थान है। वैदिक रुढिवादिता से मुक्त चिन्तन की अभिव्यक्ति इसमें रही है। बौद्ध शिक्षा का आधार था शिक्षा सभी के लिए, इस में जाति, धर्म एवं लिंग के भेद भाव को अमान्य कर महिलाओं एवं सभी जाति के लिए शिक्षा हेतु प्रवेश स्वीकार्य था। बहुत सारे वर्ग के लोग बौद्ध शिक्षा के लिए प्रेरित हुए। बौद्ध आंदोलन के साथ साथ शिक्षा का संस्थागत स्वरुप एवं उसका वृहत आधार उभर कर सामने आया। यह ऐतिहाक सत्य है कि बौद्ध केन्द्र अन्तर्राष्ट्रिय शिक्षा केन्द्र था, तक्षशिला, नालन्दा, बल्लभी, बिक्रमशिला, ओदन्तपूरी, नादिया, आदि। बौद्ध शिक्षा का उददेश्य था- ज्ञान, सामाजिक विकास, व्यावसायिक विकास, धार्मिक विकास, चारित्रिक एवं नैतिक विकास। शिक्षा दो स्तर पर दिए जाते थे। प्राथमिक स्तर एवं उच्च स्तर। प्राथमिक स्तर पर 12 साल में आरम्भ होता था जिसमें पढना-लिखना, गणित एवं धार्मिक पक्ष का ज्ञान दिया जाता था। इसमें व्याकरण, हेतु विद्या अर्थात् तर्कशास्त्र, न्याय, अध्यात्म, शिल्पशास्त्र, एवं चिकित्सा विद्या की शिक्षा दी जाती थी।

बौद्ध शिक्षा व्यवस्था के ऐतिहासिक रुप में बौद्ध व्यवस्था या बौद्ध संघ में प्रवेश का प्रशिक्षण विधि का उदाहरण रहा था। इनके शिक्षण संस्थान बौद्ध केन्द्र एवं बौद्ध विहार थे। सभी शिक्षा केन्द्र पवित्र या धर्मनिरपेक्ष था, जो बौद्ध भिक्षु के हाथों में था। संघ के संदर्भ में प्रायः विश्वास था की यह एक सीखने वाला समाज था। (Goyal, S-R- 'Buddhism and Indian History and Culture', P-156) आरम्भिक काल से ही शिक्षक के रुप में भिक्षु या संन्यासी का जीवन उच्च आदर्श का प्रतीक था जो रचनात्मक एवं तीव्र बुद्धि का व्यक्ति था। भिक्षु या सन्यासी के ऊपर शैक्षणिक गतिविधि आधारित था। बुद्ध के विचार यथा कल्याण एवं प्रसन्नता को वैश्विक परिवेश में प्रचारित करना। (Mookerji, R.K., 'Ancient Indian Education', MotilalBnanrsidass, PP-394-398) शिक्षा के बौद्ध व्यवस्था में कुछ ब्राह्मण व्यवस्था को भी अपनाया गया यथा शिक्षक एवं छात्र के संबंध, उपनयन संस्कार के समान

प्रवज्या व्यवस्था पश्चात छात्रों के शिक्षण संस्था में प्रवेश। प्रथम एवं अंतिम व्यवस्था प्रवज्या एवं उपसम्पदा का बौद्ध संघ में पालन। (Dr. Suraj Narain Sharma, Buddhist Social and Moral Education, Parimal Publications, Delhi, 1994, D. 44-45) इनके अतिरिक्त बौद्ध एवं ब्राह्मण शिक्षा व्यवस्था प्रशिक्षण, अध्ययन पद्धति, उददेश्य, विषय एवं संस्थागत कुछ पक्षो में अन्तर भी था। (Dr. Suraj Narain Sharma, Buddhist Social and Moral education, Parimal Publications, Delhi, 1994, P- 44-45) सबसे व्यापक अन्तर था इसका सार्वजनिक स्वरुप, इसमें लिंग, जाति, धर्म, क्षेत्र आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया गया था। बौद्ध शिक्षा सभी के लिए था। बौद्ध विहारों के शिक्षा पर व्यवस्थित नियम दिघनिकाय में स्पष्ट रूप से चित्रित किया गया है। (Dr. Suraj Narain Sharma, Buddhist Social and Moral education, Parimal Publications, Delhi, 1994, P-44-45) लेकिन बौद्ध शिक्षा केन्द्र में मात्र धार्मिक शिक्षा ही दिया जाता था।

(Mookerji, R.K. Ancient Indian Education, P-460) ए. एस. अल्तेकर ने बौद्ध शिक्षा के सर्वसुलभ स्वरुप एवं वृहत आधार की चर्चा की है। इन बौद्ध विहारों में अध्यात्मिक के अतिरिक्त व्यवहारिक पक्षों की शिक्षा भी पाली, संस्कृत भाषा के साथ साथ तर्कशास्त्र दर्शनशास्त्र और तत्वमीमांसा के रुप में प्रदान किया जाता था, बुद्ध की शिक्षा अध्यात्म एवं ज्ञान पर आधारित था, इसके तीन स्तर थे नैतिकता, बौद्धिकता एवं आध्यात्म। (A.S. Allekar, Education in Ancient India, P- 230-31) सन्यासी एवं संन्यासिनियों के शिक्षा का पाठयकम आधारित है। सुत, विनय एवं धम्म। बौद्ध विहार और मठ के रुप में व्यवस्थित शिक्षा केन्द्र का उदभव एवं महायान सम्प्रदाय के साथ धार्मिक एवं धर्मनिरपेक्ष शिक्षा का प्रसार विश्वविद्यालय के रुप में बौद्ध धर्म के अन्तर्गत इसका विकास एवं आमजन हेतु इसकी सुलभता हुई। इन केन्द्रों में प्रमुख विषय चिकित्सा, सैन्य, कला, ज्यातिष, वाणिज्य, कृषि आदि की शिक्षा बौद्ध केन्द्र एवं विश्वविद्यालय स्तर पर दिया जाता था। (L.M. Joshi, Studies in the Buddhistic Culture of India, P-126) इस समय तक्षशिला के अतिरिक्त बौद्ध उच्च शिक्षा के केन्द्र के रुप में नालन्दा, विक्रमशिला, बल्लभी आदि की ख्याति थी। आर.के. मुखर्जी ने नालन्दा विश्वविद्यालय का विस्तार से इसके स्वउप एवं शिक्षकों के नाम यथा धर्मपाल, धर्मकिंति, जयसेना आदि का वर्णन किया है। (L. M. Joshi, Studies in the Buddhistic Culture of India, P-126)

निष्कर्ष -

बौद्ध शिक्षा नाम जिस प्रकार समाज के विकास के सभी पक्षों को इतिहास का आधार बनाया आज के समय में उसकी प्रासंगिकता स्वतः प्रमाणित है। विज्ञान के एक पक्षीय स्वरुप के कारण कई सामाजिक समस्या उभर रही है। इस आलोक में स्वतः बौद्ध शिक्षा के समन्वित स्वरुप अर्थात् मानवता समाजिकता के साथ विज्ञान तकनीकि को प्रस्तुत कर उसके जनस्वरुप को उपस्थित किया वह आज के वैश्विक परिवेश में बौद्ध शिक्षा के महत्व को दर्शाता है। यह तभी सम्भव होगा जब हम संस्कृति के अध्ययन में नवीन प्रवृतियों को प्रतिष्ठित कर यहाँ के सभ्यता संस्कृति के नये आयामों की खोज करें।

संदर्भ ग्रंथ -

- लिन इंट. द न्यू कल्वरल हिरटी, 1908
- स्टुअर्ट कलार्क, फंफेच हिस्टोरियंस एंड अली मार्डन कल्लार पोस्ट एण्ड प्रजेन्द्र संख्यां 100, 1984
- पीटर बर्क, न्यूपर्सपेक्टिव ऑफ हिस्टोरिकल राइटिंग्स, 2001
- रणजीत गुहा, सम्पादित सबाल्टर्न स्टडीयर 1982-1994
- रोजर पर्त कल्चरल हिस्टी 1988
- विष्णु प्रभाकर, संस्कृति क्या है? साहित्य मण्डल प्रकाशन, 2007
- क्लिफंड गेयर्त्ज, दि इन्टरप्रेटेशन ऑफ कल्चर, पसी, 1971
- एडवर्ड सईद, कल्चर एण्ड इग्पीरीयलिज्जा, लंदन, 1994,
- An Introduction to Indian Philosophy. Eighth Edition. Calcutta, Calcutta University press.
- Humphreys, C- (1951)- Buddhism- U.K. Penguin Classics. Mishra, S.N.d.
- Bharatiya Shikhar Itihas- Education in Ancient, Mediaeval and British India. Rita Book Agency, Roy, S-2015- Bharater Shiksha Shikhshar Abhaijan. Kolkata
- April 4 2021 from https://www-researchgate-net/publication/329116564.
- Bloom, A- (n-d-)- Sudhana's quest: Learning and Buddhism- Shin Dharma Net Website- Retrieved April 4, 2021, from http://www-shindharmanet-com/writings/sudhana-htm.

*शोध छात्रा, गृह विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
ई मेल-sdsmita1995@gmail.com

**प्रोफेसर, गृह विज्ञान विभाग, पंडित दीनदयाल उपाध्याय राजकीय महिला महाविद्यालय, राजाजीपुरम, लखनऊ
ईमेल- tripletsmom232012@gmail.com

बौद्ध-मूर्तिकला में भाव, लावण्य और दर्शन

डॉ. रेखा रानी शर्मा

प्राचीनतम ऐतिहासिक मूर्ति चौथी-तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व मौर्य काल की है। बौद्ध सम्राट ने बलुआ पत्थर के एकाश्मिक स्तंभ खड़े करवाए। 30 से 40 फीट ऊँचे इन स्तंभों के शीर्ष वृषभ सिंह व हाथी बने हुए थे तथा स्तंभ पर सदाचार मानवता व पवित्रता के बौद्ध उपदेश अंकित किए गए थे। बुद्ध मूर्तियां सौंदर्य से जोड़ती हैं लेटने या निर्वाण बुद्ध की मूर्ति शाक्यमुनि बुद्ध के अंतिम क्षणों को चिह्नित करती है और उन्हें अपने दाहिने हाथ से अपने सिर को सहारा देते हुए दिखाती है। मूर्ति उस परोपकार को दर्शाती है जो आत्मज्ञान और पुनर्जन्म के चक्र से संभावित मुक्ति के साथ आता है।

बिहार के लौरिया नंदनगढ़ सांची और सारनाथ में अशोक के प्रसिद्ध स्तंभ पाए गए हैं, सारनाथ में पॉलिश किया गया स्तंभ पाया गया एकाश्मिक शीर्ष जो कि अब भारत सरकार का चिह्न है। इसमें चार दहाड़ते हुए सिंहों को चार प्रमुख दिशाओं को अंकित किया गया है जिनके बीच में बारी-बारी से एक हाथी एक वृषभ एक घोड़े और एक सिंह को अत्यंत कुशलता से उत्कीर्ण किया गया है। शीर्षफलक का आधार घंटी के आकार का है जिसमें धर्मचक्र के साथ एक कमल है जो संभवतय मानव बल के सच्चाई की जीत का प्रतीक है, आकृतियों की बेहतरीन बनावट यथार्थवादी और विशिष्ट होने के अलावा इनमें शक्ति को दिखाया गया है। गोलाकार शीर्षफलक को चार धर्मचक्रों से अलंकृत गरिमा भी निहित है मानव प्रतिमा बनाने की मौर्य शिल्पकला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं जनन और समृद्ध के देवी-देवता यक्ष और यक्षी की विशालकाय प्रतिमाएं अंकित है।

गांधार कला का विषय बौद्ध है और एकमात्र बुद्ध की लीलाओं से अनुप्रसित है बुद्ध के जन्म निष्क्रमण संबधित, लाभ. धर्म-चक्र परिवर्तन परिनिर्वाण सरीखे बहुत विषयों का अंकन मिलता है और वहीं दूसरी ओर नतमस्तक वाले काल्पनिक पशु पंक्षी सिंह तारांकित मुकुट युक्त देवी मंदिर तथा मालाधारी यक्ष आदि यूनानी रोमन मूर्तियों के निर्माण में कलाकारों ने हस्त कौशल को प्रदर्शित किया है।

बौद्ध विषयों में माया देवी का स्वप्न उनका लुंबिनी उद्यान में जाना सिद्धार्थ का जन्म उनके शब्द व्यक्ति सिद्धार्थ का बोधिसत्व रूप बोधिसत्व की शिक्षा सिद्धार्थ की और यशोधरा का विवाह संसार त्याग के लिए देवी की सिद्धार्थ से प्रार्थना अभी निष्क्रमण कंठक अश्व की विदाई आभूषण आदि ग्रहण करते हुए चांडक सारथी दान देवताओं द्वारा बुद्ध से धर्म उपदेश की प्रार्थना धर्म चक्र प्रवर्तन बुद्ध पर देवता द्वारा चातक प्रहार बुद्ध को जीवन का दान बुद्ध का कपिलवस्तु में आगमन राहुल को दीक्षा देना, मगध नरेश बिंबिसार का बुद्ध के दर्शन अर्थ आगमन, आम्रपाली द्वारा बुद्ध की अमरावन का दाम, ऊंगलीमाल डाकु का हृदय परिवर्तन, बुद्ध का परिनिर्वाण, धातुओं का बंटवारा, धातु, पूजा आदि बुद्ध के जीवन से संबंधित दृश्य का अंकन गांधार शैली में किया गया है। सांची और मथुरा की भांति वृक्ष अथवा कुबेर के गांधारी रूप का दृश्य का अंकन भी है जिसमें नारी का पूर्णत अंकन किया गया है तपस्या में लीन उपवास ग्रस्त बुद्ध की कंकाल मूर्ति तथ्यात्मक होने के साथ ही तपस्या के आदर्श का भी प्रतिनिधित्व करती है। बहलोल से प्राप्त बुद्ध के 8 फुट 8 इंच की ऊंची खड़ी प्रतिमा छाया मंडल संघाटी युक्त है बुद्ध की पद्मासन मूर्ति भी प्राप्त हुई है, संघर्ष युक्त बुद्धिस्ट मेंटल मूर्ति अभय मुद्रा में अंकन किया गया है, अधिकांश प्रतिमाएं लाहौर संग्रहालय में आज भी संग्रहित है और यहां पर उल्लेखनीय मूर्तियों में हाइपोक्रेटिक कांस्य प्रतिमा का अंकन किया गया है। मस्तक तथा बुद्ध की बोधिसत्व की मूर्तियां भी यही से प्राप्त हुई है। बुद्ध का मुख यह एक सुंदर प्रतिमाएं जो चौथे या पांचवी सदी में निर्मित हुई है।

बुद्ध धर्म से अत्यधिक लगाव के कारण गंधार मे नई मूर्तियां का अभाव है जो नई मूर्तियां हैं वह प्रायः बुद्ध की माता माया देवी का ही अंकन है। बौद्ध धर्म में नारी का कोई विशेष स्थान न होने के कारण इसमें नारी मूर्तियां बहुत कम मिला है जिसमें वृक्ष की लताओ को सुंदर प्रतिमाएं मे अंकन किया गया है जिसमें शिल्पियों द्वारा विविध उद्देश्यों में सौंदर्य उभारने का प्रयास किया गया है। बुद्ध के केस विन्यास नाक उंगलियां चरण तालु तथा कोनियों के चित्रण में और व्यक्तियों की चिन्ह कोटि के अतिरिक्त पैर की भंगिमा त्रिभंग गोमूत्र का और पदम् आदि अलंकरण में भारतीय कला का प्रभाव दिखाई पड़ता है। बुद्ध की मूर्ति सर्वप्रथम कल्पना की और उसका सुंदर यथार्थ चित्रण कलाकारों ने कियाष बौद्ध कला को ग्रीक से युक्त होने के कारण इसका प्रभाव प्रकट हुआ है। भारतीय शिल्पियों ने अपनी विशिष्ट ढंग से आलेखन किया है सांची का स्तूप भव्य संरचना है जो 42 उंची 105 चौडाई है स्तूप कक्ष है केवल नक्काशी के माध्यम से और दर्शन को दर्शाती है।

बल्कि स्वरूप निर्धारण का आधार वस्तु की वास्तविक सत्ता से है इसी कारण दृश्य जगत के चाक्षुष मानदंड की उतनी चिंता शिल्पकारों को नहीं रही जीतने की प्रस्तुत दृश्य में विषय वस्तु के अनुरूप आकार की सापेक्ष उपयोगिता या घटना में हिस्सेदारी की है कहीं-कहीं मान्यताओं या रूढ़ीगत सिद्धांतों को भारतीय कलाकारों

ने अपनी शिल्पगत व्याकरण के तर्क पूर्ण सूत्र माना है भले ही व्यापक समीक्षा में आज भी उसके लहजे के दोष समझा जाए किंतु धार्मिकता सिर्फ प्रदर्शन की तत्कालीन मीमांसा एवं आदर्श के अंतर्गत उसकी सार्थकता पहचान सकना कठिन नहीं है। कला का उद्देश्य लोक जिज्ञासा की तृप्ति के लिए महापुरुष के जीवन एवं उसके द्वारा परिवर्तित धर्म की धारणा और सिद्धांतों का प्रतिपादन था वही इसका केंद्र बिंदु था और इसी दृष्टि से मानव इस सर्वे केंद्रित तत्व के चतुर्दिक उपस्थित अन्य आकार और प्रकृति के सदस्य लीला विशेष या घटना विशेष के अभिनंदन में साक्षी मात्र थे, यहाँ यह कहना उचित होगा कि धार्मिक उद्देश्य के अधीन शिल्पी का साध्य प्रतीकात्मक प्रदर्शन न था बल्कि कला की स्वच्छंद अभिव्यक्ति करना था।

बुद्ध मूर्ति के आविष्कार के समय से प्रतीकों की परंपरा पीछे छूटती गई और दूसरी सदी के अंत तक केवल मूर्ति ही प्रधान हो गई। मथुरा की शिल्पी देवताओं और मानव की मूर्तियां बनाने में सिद्ध हस्त कलाकार ही थे जो बुद्ध मूर्ति बनाने के मार्ग में उनके सामने कुछ और ही बाधा थी जो कनिष्क के राज्य काल में सहसा हट गई तब उन्होंने अपना समस्त शिल्प विज्ञान बुद्ध मूर्ति के ऊपर उड़ेल दिया जिसके फल स्वरुप एशिया में एक नई ज्योति का प्रकाश फैलने लगा। कला में जो पहले नहीं हुआ था, वहां अब सामने आया महापुरुष लक्षण से युक्त मूर्ति के रूप में मानव बुद्ध का पुनः अवतार हुआ। दिव्यावदान में तो यहां तक लिखा है कि स्वयं मारविजय ने मथुरा के आचार्य उपगुप्त की प्रार्थना पर उसे बुद्ध के मानव रूप में उनका पुनः दर्शन कराया वह दर्शन मूर्ति के रूप में ही ज्ञात होता है किंतु महापुरुष के लक्षणों से युक्त भगवान बुद्ध के तेजस्वी दिव्य रूप के दर्शन से ही जनता को संतोष प्राप्त होता था।

बुद्ध मूर्ति के जन्म की एवं पूर्व स्थिति को देखा जाए तो मूल में धर्म समाज राजनीति और कला यह सभी परिस्थितियॉ एक सूत्र में बध जाती है और बुद्ध मूर्ति के आरंभ पर नया प्रकाश भी डालती है। कलाकारों ने किसी बहकावे में न आकर कर बुद्ध मूर्ति को रच डाला यदि हम बुद्ध मूर्ति के विविध अंगों का विश्लेषण करें तो किसी एक बनी बनाई मूर्ति के नमूने पर निर्भर रहना नहीं पड़ेगा किंतु उन सभी मूर्तियों में से जो प्रथम ई0 तक बन चुकी है उसकी विविध अंगों को लेकर ही बुद्ध मूर्ति का समग्र रूप संपादन किया गया है बुद्ध मूर्ति के समग्र सूत्र का विश्लेषण करते हुए उनके अंगों के स्रोत तक जाना होगा और तभी समस्त संतोष पद प्रकाश डाल सकेंगे।

बुद्ध मूर्तियां दो प्रकार की है एक खड़ी हुई दूसरी बैठी हुई कला की दृष्टि से खड़ी हुई मूर्तियां, बैठी हूं मूर्तियां, योगी ,मुनियों की मुद्रा में बनाई गई है जिसकी पूर्व परंपरा कला में थी यह दोनों प्रकार की कला की दृष्टि से एक दूसरे से भिन्न है किंतु प्रतिमा लक्षण की दृष्टि से दोनों का प्रेरक सूत्र एक जैसा था अर्थात योगी और चक्रवर्ती इन दोनों आदर्श को मिलाकर मूर्ति का निर्माण हुआ महापुरुष के रूप में बुद्ध के शरीर पर 32 लक्षण माने जाते थे, इन लक्षणों से बुद्ध मूर्ति के निर्माण में सहायता ली गई। बौद्ध मूर्ति के ऊपर भी छत्र लगाए जाने लगे थे जो चक्रीय प्रभाव मंडल आरंभ से ही बुद्ध प्रतिमा का लक्षण माना गया। इन लक्षणों को धार्मिक देवताओं से अपनाया गया जहां सिक्कों पर उनके देवों की मूर्तियों में मस्तक के पीछे प्रभाव मंडल पाया जाता है जो उनके दिव्य ईश्वरी तेज का सूचक था, जिसका अभिप्राय बुद्ध मूर्ति का निर्माण करने वाले कलाकारों ने बड़ी सोच समझकर कार्य किया है। बुद्ध मूर्ति के शिल्पकारों ने कनिष्ठ के सिक्कों पर देवों का अंकन कर रहे थे ईरानी देवों की इस विशेषता का भारतीय देवों के आदर्श के रूप से ठीक मेल बैठता है।उदाहरण स्वरूप इसकी कल्पना की गई है खिले हुए कमल की आकृति का प्रभाव मंडल उसे छत्र की छाया है जो देवी लक्ष्मी राजा के सानिध्य में रहकर उसके मस्तक पर लगती है। बुद्ध मूर्तियों के विभिन्न अंगों की समीक्षा की गई

एवं शुभ मूर्तियों का भी उल्लेख मिलता है।

बोधिसत्वों का स्रोत तो बड़ी यक्ष मूर्तियों में मिल जाता है पर कटरा और अन्य की बैठी मूर्तियों की जांच आवश्यक है। इसके लिए अशोक के सारनाथ सिंह शीर्ष की रचना का विश्लेषण किया जा सकता है जो सिंह चार की मस्तक पर ऊपरी भाग पर एक महा धर्म चक्र स्थापित किया गया है। यही तो बुद्ध की मूर्ति का ठाठ था, धर्म चक्र का प्रतीक और चार सिंघम की मूर्तियों को सिंहासन माना गया। इसी से सिंहासन की चौकी पर बैठे हुए बुद्ध की मूर्ति का पूरा रूप सामने आ गया सांची को भगवतो परमार लठी में भी बुद्ध को अंकित करने के लिए छत्र की भी व्यवस्था किया गया है उसे आसन पर स्वयं योगी बुद्ध बैठे हैं जैसे सिंह शीर्षक के दो भागों में की गई वैसे ही कलाकारों को इससे संतोष हुआ है। यदि सारनाथ के सिंह शीर्षक की शब्द से तुलना की जाए तो दोनों के मूल में अंतर निहित एक ही सूत्र मिलता है। बुद्ध मूर्ति के निर्माण सूत्र की खोज में बौद्ध आचार्य और कलाकारों को पर्याप्त परिश्रम करना पड़ा होगा और अंत में उन्हें सफलता मिली होगी।

बौद्धिक वृक्ष के नीचे सिंहासन पर बैठे

हुए बुद्ध पद्मासन मुद्रा में बैठी मूर्ति अभय मुद्रा में हथेली और तलों पर धर्म चक्र और त्रिरत्न के चिन्ह अंकित किए गए वही मस्तक के ऊपर उसे चिड़िया या प्रज्ञा का महादेव जो केशव से ढका होने के कारण कदर्प भी कहा जाता है, मस्तक के पीछे एक सादा तेज चक्र जिस पर बगड़ियों के कटाव की गोट है। इस युग की बौद्ध मूर्तियों के चेहरे के सम्मुखहीन है। बौद्ध मूर्तियों में रंग रेखा रूप का नया संदेश सा देता प्रतीत होता है रेखाएं, शक्तिशाली हैं उनके सौंदर्य भावनाओं को अभिव्यक्त करने में सक्षम है, नवीन प्रयोग इस बात का द्वयतक है कि सुंदर की खोज में संलग्न कलाकारों ने अद्भुत प्रदर्शन किया है, नई विधाएं नई शैली स्वरुप नवीन मूर्ति की संरचना की गई है।

व्यापक प्रतीकात्मकता के अंतर्गत प्राकृतिक पृष्टि का या अलंकरण अनगिनत रूपों से सजी हुई है उन्हें संजीव प्रकृति की अनिवार्य पृष्ठभूमि के रूप में कल्पित किया गया है जिसके सप्ताह की सजीव एवं बहुमुखी झांकी का संयोजन स्वाभाविक था उसकी विषय वस्तु का जीवन के कौतूहल पूर्ण क्रियाकलाप मान्यताएं काल्पनिक आकार एवं गाथाएं व चित्र आदि को संयोजित किया गया।

शिल्पकारों ने कठोर मुद्रा में कल्पित कलात्मक एवं उसकी सहज सफलता एवं सौंदर्य को दिखाने की कोशिश किया है। उनके शारीरिक लोच का अभाव है एक दूसरे से अलग कई स्टार्स में बने तीखी रेखाओं को बाद में गोलेकार के रूप की कल्पना की गई है जिसमें शिल्पकारों की स्वाभाविकता को दर्शाने की कोशिश किया है।

मानव आकृति फूल-पत्ती, पशु पक्षी आदि सभी अंकों में सांची शिल्पी विविधता पूर्ण तथा अद्भुत आकर्षण से भरे रूपों को प्रकट करता है जो आकर कल्पना में समृद्धि एवं नाटकीय होने के साथ-साथ भाव संरक्षण में सजी और काव्यात्मक है। मुद्राओं और भंगिमाहों की 12 कड़ी से यह पूरी परिचित है और आकृति में उसे कोई हिचक या अड़चन नहीं है। प्रस्तर की तलभूमि या सत्ता का स्वरूप कलाकार निकाल कर स्वयं ग्रहण करते हुए विद्यमान है। जीवन से भर उनके अस्तित्व को कलाकार की शिल्प के बहुआयामी तारों की उचित व्याख्या में उत्तीर्ण करती है छाया तब के सहज उतार-चढ़ाव में रूप विधान होने से कामिनीय आकृति को मूर्ति में व्याप्त करती हुई प्रतीत होती है। स्तूप पूजा, बौद्ध वृक्ष आदि शांति में दृश्य में उन्हें भक्ति सुलभ वातावरण में भाव मगन एवं उन्मुक्त तथा सहज सिस्टम में निरंतर कल्पित किया गया है किन्हीं स्थान में जीवन के कौशल और लोकमंगल से भरे संदर्भ में अथवा असफलता के जड़ित हताश भाव में जैसे मारविजय की भागती हुई सेना के बहु विध कृति का प्रदर्शन किया गया है।

शिल्प की दृष्टि से अत्यंत सुंदर और मनोहारी है बौद्ध प्रतिमा हवा में झूलती हुई सी होने के कारण उनका शारीरिक लावण बड़ी मधुरता के साथ प्रकट किया गया है उनकी मनमोहक मुद्रा आंखों के सामने पूरी सजावट से प्रदर्शित करता है। उनकी कल्पना यद्यपि बहुत कुछ वास्तु के अलंकरण का परंपरागत अंग बन चुकी है जैसा कि साहित्य के तोरण साल भांजे का शब्द से स्पष्ट उनकी भंगिमा के साथ अंग दृष्टि जैसे अनुपम सौंदर्य का प्रतीक बन गया है, शिल्पी के लिए या कहे कलाकार के लिए अपनी समस्त कल्पना एवं कारीगरी पत्थर में अभियुक्त करना संभव नहीं था, वस्तुतय वास्तु के संदर्भ में प्रतीकात्मक औपचारिकता के बंधनों से स्वतंत्र था। वस्तु का निरन्तर परिवर्तन होता रहता है और कोई भी पदार्थ एक क्षण से अधिक स्थायी नहीं रहता है। कोई भी मनुष्य किसी भी दो क्षणों में एक सा नहीं रह सकता इसिलिये आत्मा भी क्षणिक है। इसके लिए बौद्ध मतानुयायी प्रायः दीपशिखा की उपमा देते हैं। जब तक दीपक जलता है तब तक उसकी लौ एक ही शिखा प्रतीत होती है, जबकि यह शिखा अनेकों शिखाओं की एक श्रृंखला है। एक बूँद से उत्पन्न शिखा दूसरी बूंद से उत्पन्न शिखा से भिन्न है किन्तु शिखाओं के निरन्तर प्रवाह से एकता का भान होता है। इसी प्रकार सांसारिक पदार्थ क्षणिक है किन्तु उनमें एकता की प्रतीति होती है।

बुद्ध से जो सीखा जाना चाहिये वह यह है कि जीवन का सार संतुलन में है उसे किसी भी अतिवाद के रास्ते पर ले जाना गलत है। हर व्यक्ति के भीतर सृजनात्मक संभावनाएँ होती हैं, इसलिये व्यक्ति को अंधानुकरण करने के बजाय स्वयं अपना रास्ता बनाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. भारतीय कला प्रारंभिक युग से तीसरी सदी तक, लेखक-वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ- 223, 225, 243, 247, 249
2. भारतीय चित्रकला एवं मूर्ति कला का इतिहास, लेखक-रीता प्रताप, पृष्ठ-486, 487, 498, 349
3. प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु, लेखक-डॉ. पृथ्वी कुमार अग्रवाल, पृष्ठ-119, 207, 217, 231,235.
4. क्रिएटिव एंड कंटेंपेरेरी आर्ट इन इंडिया, लेखक-एस.पी. वर्मन, पृष्ठ- 95, 97, 98.

• सहायक आचार्य
सी. आर. डी. पी. जी. कॉलेज,
गोरखपुर

वर्तमान भारतीय परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता

पप्पू*
प्रो. (डॉ.) अर्चना मिश्रा**

सारांश -

प्राचीन भारतीय परम्परा एक दार्शनिक परम्परा पर आधारित है। भारत की दार्शनिक परम्परा प्राचीन कालीन है। प्राचीन काल एवं वर्तमान परिवेश में धर्म एवं दर्शन का गहरा सम्बन्ध रहा है। भारतीय परम्परा जीवन और धर्म पर दर्शन ने गहरा प्रभाव छोड़ा है। भारतीय दर्शन परम्परा के विभिन्न सम्प्रदाय किसी न किसी धर्म या सम्प्रदाय से सम्बन्धित रहे हैं। इसी समय में दर्शन एवं नये धर्मों का उदय भी हुआ। भारत में लौकिक समस्याओं को हल करने के लिए दर्शन का सृजन हुआ। जब मानव जाति ने अपने आप को दुःखों के चक्र में फंसा पाया तब उसने दुःख से मुक्ति हेतु मार्गों को खोजा है और वह मार्ग दर्शन के सिवाय कुछ नही हैं। भारतीय दर्शन की दृष्टि, मैं कौन हूँ? यह संसार क्या है? प्राणी जगत् को उत्पन्न करने वाली अलौकिक शक्ति कौन है? इन सभी प्रश्नों और जिज्ञासाओं के हल निकालने का कार्य अलग-अलग दार्शनिकों एवं दर्शन सम्प्रदायों ने किया। चाहे वह संसार के किसी भी विचार धारा या सम्प्रदाय का हो। भारतीय चिन्तन के अन्तर्गत अनेक दर्शनों ने अपना-अपना स्थान एवं विचार निर्धारित किया है। भारतीय परम्परा अति प्राचीन दार्शनिक एवं धार्मिक परम्परा की लम्बी यात्रा में विभिन्न धर्म एवं दर्शन ने अपना अस्तित्व कायम रखा। इस दर्शन परम्परा में सनातन या वैदिक दर्शन, हिन्दू दर्शन, बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन आदि दर्शनों ने भी अपना विशेष महत्व दिया है। दर्शन का अध्ययन करने से पाया गया कि बौद्ध दर्शन एक सबसे समृद्ध दर्शन है जिसका प्रभाव विश्व के अनेक देशों में देखने को मिलता है।

महत्वपूर्ण बिन्दु -

जन शिक्षा का अधिकार, नारी शिक्षा को प्राथमिकता, योग शिक्षा का विकास, निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था, शिक्षा में लोकभाषा या जन भाषा की महत्ता।

प्रस्तावना -

गौतम बुद्ध का जन्म लगभग 563 ई०पू० में बैशाख पूर्णिमा के दिन देवदह मार्ग जाते समय लुम्बिनी वन के एक सुन्दर शाल वृक्ष के पास हुआ था। यह लुम्बिनी वन शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु के राज्य क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत आता था, जो आज नेपाल राज्य के अन्तर्गत और भारत की सीमा से लगभग 8 किमी की दूरी पर स्थित है। इनके माता का नाम महामाया एवं पिता शुद्धोदन थे, जो शाक्य कुल के एक प्रतापी क्षत्रिय राजा थे। यहीं पर अशोक का एक अभिलेख युक्त स्तम्भ ई० 1895 में प्राप्त हुआ जिसमें लिखा मिलता है "हिद बुधे जातेति।" त्रिपिटक में शाक्यों को अभिमानी और विशुद्ध जाति के क्षत्रिय बताया गया। यद्यपि उनको ब्राह्मणों का गौतम गोत्र दिया गया। पाँचवें दिन नामकरण संस्कार किया गया। बालक का नाम सिद्धार्थ रखा गया उनका गोत्र गौतम था। इसलिए वह सिद्धार्थ गौतम नाम से प्रसिद्ध हुए। बालक के जन्म की खुशियां अभी समाप्त न हुई थीं कि महामाया की विमारावस्था ने गम्भीर रूप धारण कर लिया। अपने अन्त समय को निकट आया जानकर उसने शुद्धोदन और प्रजापति को अपनी शैय्या के समीप बुलाया और अपने बच्चे (सिद्धार्थ) को सौंपते हुए कहीं कि मुझे विश्वास है कि उसके लिये तुम उसकी माँ से भी बढ़कर होगी। लेकिन मुझे इसकी तनिक चिन्ता नहीं कि मेरे बाद यथायोग्य विधि से उसका लालन पालन नहीं होगा। इतना कहते-कहते महामाया ने अन्तिम सांस ले ली। शुद्धोदन और प्रजापति दोनों बडे दुखित हुए, दोनों फूट-फूट कर रोने लगे। जब सिद्धार्थ की माता का देहान्त हुआ तो उनकी आयु 7 दिन की थी। दर्शन शब्द दृश धातु से बना जिसका अर्थ है, जिसके द्वारा देखा जाय। दर्शन का ब्युत्पत्ति लभ्य अर्थ है- **"दृश्यते अनेन इति दर्शनम्"** अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाय वह दर्शन है।

बौद्धदर्शन वह विचार धारा है जो इस विश्व जगत् को न केवल वस्तु जन्य मानती है और न केवल आध्यात्मिक तत्व द्वारा निर्मित, यह इसे परिणाम शील मानती है। यह ईश्वरीय अस्तित्व को नहीं मानती और यह प्रतिपादन करती है कि मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष या निर्वाण की प्राप्ति या अन्तिम सत्य या दुःखों से मुक्ति प्राप्त करना। जिसे चार आर्य सत्यों के ज्ञान एवं आर्य अष्टांग मार्ग तथा त्रिरत्न के पालन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

बौद्ध दर्शन के अनुसार चार आर्य सत्य जो **इस प्रकार है-**

1. जीवन दुःखों से पूर्ण है (दुःखम्) - संसार दुःखों से भरा पड़ा है अतः संसार में प्रत्येक प्राणी दुःख से ग्रसित है। गौतम बुद्ध को वृद्ध, रोगी और मृतक को देखकर मानव के दुःखों की अनुभूति हुई। तपस्या के परिणाम स्वरूप ज्ञात हुआ कि मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन दुःखों से पूर्ण है जिन्हें वह क्षण भर को सुख जान बैठता है।
2. दुःखों का कारण विधमान है (दुःख समुदाय) - मनुष्य के दुःखों का कारण (हेतु) क्या है? तृष्णा, काम (भोग) की तृष्णा, भव की तृष्णा, विभव की तृष्णा और अधिक प्राप्त करने की इच्छा है।

अज्ञान ही सभी दुःखों का कारण है सभी मनुष्य अविद्या वश दुःखों से ग्रसित है।

3. दुःखों का अन्त सम्भव है (दुःख निरोधःअथवा निर्वाण) - उसी तृष्णा के अत्यन्त निरोध का परित्याग, विनाश को दुःख निरोध कहते है अर्थात् जीवन के प्रति मोह तथा और अधिक प्राप्त करने की तृष्णा की समाप्ति से ही मनुष्य इन सांसारिक दुःखों से मुक्ति पा सकता है।
4. दुःख-विनाश का मार्ग (दुःख निरोध अथवा निर्वाण मार्ग) - मनुष्य जीवन मोह माया और अधिक अर्जित कर पाने की लालच से मुक्त होने के लिए गौतम बुद्ध ने आर्य अष्टांग मार्ग की खोज की। यह मार्ग आगे अग्रलिखित है-

आर्य अष्टांगिक मार्ग की आठ बातो को ज्ञान (प्रज्ञा), सदाचार (शील) और योग (समाधि) इन तीन भागो में बॉट कर पढ़ते हैं।

1. **ज्ञान**– सही दृष्टि (सम्यक् दृष्टि), सही संकल्प (सम्यक् संकल्प)।
2. **शील**– सहीं वचन (सम्यक् वाचा), सही कर्म (सम्यक् कर्म), सही आजीव (सम्यक् जीविका)।
3. **समाधि**– सही व्यायाम (सम्यक् व्यायाम),सहीं स्मृति (सम्यक् स्मृति), सही समाधि (सम्यक् समाधि)।

1. शील

शील का अर्थ है सात्विक कर्म। अस्तेय, अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचयर्, मद्य पान न करना ये पंचशील हैं। इन सभी का पालन बौद्ध भिक्षुओं को अनिवार्य था। उनके साथ-साथ भिक्षुओं को अपराह्न भोजन, माला धारण, संगीत व गहने आभूषण का त्याग करना था।

2. समाधि

समाधि का अर्थ है मन की शुद्धि एवं एकाग्रता। समाधि से तीन प्रकार की विधाएं उत्पन्न होती हैं - पूर्व जन्म का ज्ञान, जीव की उत्पत्ति तथा विनाश का ज्ञान और चित्त के बाधक तत्व की जानकारी।

3. प्रज्ञा

प्रज्ञा का अर्थ है बुद्धि या समझ। बौद्ध दर्शन में घटना की वास्तविक प्रकृति की समझ के रूप में माना गया।

अष्टांगिक मार्ग -

1. सही दृष्टि (सम्यक् दृष्टि) -

बुद्ध के अनुसार मनुष्य के दुःखों का मूल कारण अविद्या है। अविद्या के कारण ही उसकी भौतिक वस्तुओं में आसक्ति होती है, उसी कारण मनुष्य सदैव दुःखी रहता है और मनुष्य दुःख के कारण को समाप्त करने में ज्ञान (विद्या) की विशेष भूमिका है।

2. सही संकल्प (सम्मा/सम्यक् संकल्प)-

बुद्ध के अनुसार सत्य का ज्ञान हो जाने के बाद उसी सत्य के आधार पर चलने का दृढ संकल्प बनाये रखना। कभी भी सत्य के मार्ग से विचलित नहीं होना चाहिए चाहे मनुष्य के ऊपर कितना भी दुःख बढ़ जाये।

3. सही वचन (सम्यक्/सम्मा वाचा) -

मनुष्य को अपने सम्पूर्ण जीवन में अपने बचन या वाणी की पवित्रता और सत्यता होना आवश्यक है। यदि वाणी की अपवित्रता और असत्यता होने पर तो मनुष्य का दुःख उत्पन्न होने में समय नहीं लगता है। मनुष्य के अन्दर वाणी एक अनमोल धरोहर है जिसके माध्यम से मनुष्य संसार के प्रत्येक मानव प्राणी को अपने वश में कर सकता है। मन के खराब होने से शरीर भी खराब होगा। वाक् शक्ति पर नियंत्रण रखे। सम्यक् वाक् के और कई अर्थ हैं जैसे-न ज्यादा बोले और न कम।

4. सही कर्म (सम्यक् कर्म/सम्मा कम्मा)-

मनुष्य अपने पूरे जीवन समयान्तराल में इस प्रकार से कोई ऐसा कार्य न करे जिससे दूसरे किसी प्राणी का अहित हो और मनुष्य किसी कार्य को हाथ में लेकर कुशलता पूर्वक करते हुए उसका समापन करे। किसी भी कार्य को अपूर्ण अवस्था में ना छोडे। हानि कारक कर्म नहीं करना ही सम्यक कर्म है। बुद्ध कहते है कि कर्म चक्र से छूटने के लिए आचरण की शुद्धि होना जरूरी है। किसी पर मन, बचन या कर्म से हिंसा कर रहे हैं तो यह हानि कारक कर्म है।

5. सही आजीविका (सम्यक् आजीव)-

अनुचित, अनैतिक और गलत तरीको से अर्जित आजीविका प्राप्त नहीं करना ही सम्यक् आजीव है। इस संसार में प्रत्येक मानव एक समान है, अतः किसी मानव का हक मारकर या अन्याय पूर्ण उपाय से जीवन के साधन जुटाए है तो इसका गलत परिणाम भोगना पड़ेगा, और मनुष्य को यथा पूर्ण न्यायपूर्ण जीविकोपार्जन करना चाहिए। अनैतिक कार्यों की दलाली, शराब व्यापार, जुआ, सट्टा, ठगी, गलत वस्तुए आदि बेचना अनेंक प्रकार के अनैतिक कार्य हैं।

6. सही व्यायाम (सम्यक् व्यायाम) -

मनुष्य को जीवन में शुभ के लिए निरंतर प्रयास करते रहना चाहिए। दूसरा यह कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए शरीर को उतना ही व्यायाम सही है जिससे शरीर स्वस्थ रहे। शरीर सबसे महत्वपूर्ण है। शरीर है तो सब कुछ है। संसार का पहला सुख निरोगी काया। शारीरिक व्यायाम के साथ-साथ मनुष्य को मानसिक और आध्यात्मिक व्यायाम भी करना जरूरी है।

7. सही स्मृति (सम्यक् स्मृति) -

मन में एकाग्रता का भाव शारीरिक तथा मानसिक भोग विलास की वस्तुओं से स्वंय को दूर रखने से है। यह उपरोक्त बताये गये मार्ग से सम्भव है। एकाग्रता से विचार और भावनाएं स्थिर होकर शुद्ध बनी रहती हैं, इस शुद्धता को ही सम्यक् स्मृति कहते हैं। मनुष्य भोग विलासता के माया बन्धन में फँस जाता है, सम्यक् स्मृति इसका अर्थ यह है कि हमे कभी भी यह नहीं भूलना चाहिए कि सांसारिक जीवन क्षणिक और नाशवान है।

8. सही समाधि (सम्यक् समाधि) -

ऊपर के सातों मार्गों के अभ्यास से चित्त की एकाग्रता द्वारा निर्विकल्प प्रजा की अनुभूति होती है। यह समाधि ही धर्म के भंवर में लगाई गई छलांग ही सम्यक् समाधि है। सम्यक समाधि का अर्थ ध्यान की वह अवस्था

हैं, जिसमें मन की अस्थिरता, चंचलता, शान्त होती है तथा विचारों का भटकाव रुक जाता है यह सभी सम्भव है आर्य सत्य आष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करने पर। बौद्ध दर्शन के अनुसार आर्य आष्टांगिक मार्ग पर चलने के लिए सर्वप्रथम शरीर की शुद्धि करना पड़ता है। शरीर की शुद्धि के लिए बौद्ध दर्शन में तीन साधन बताए गये हैं - शील, समाधि तथा प्रज्ञा। इन्हें त्रिरत्न कहते हैं।

बौद्ध दर्शन के मूल सिद्धान्त या वाद -

बौद्ध दर्शन के मानने के लिए कुछ सिद्धान्त दिये गये है। जो इस प्रकार है

1. **अनीश्वरवाद -** गौतम बुद्ध ईश्वरीय शक्ति या सत्ता को नहीं मानते थे। क्योंकि दुनिया प्रतीत्य समुत्पाद के नियम पर चलती है प्रतीत्य समुत्पाद अर्थात् कारण-कार्य का समूह है। इस शृंखला के कई चक्र हैं जिन्हें 12 अंगों में बाँटा गया है। अतः इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को कोई चलाने वाला नहीं है न तो कोई उत्पत्तिकर्ता या निर्माण कर्ता, क्योकि उत्पत्ति कहने से विनाश का भाव उत्पन्न होता है। इस प्रकार न कोई प्रारम्भ है और न अन्त।
2. **अनात्मवाद -** अनात्मवाद का यह मतलब नहीं कि मनुष्य में आत्मा नहीं है। जिसे लोग आत्मा समझते हैं, वो एक चेतना का अनवरत प्रवाह है, जो यह प्रवाह कभी भी बिखर कर जड में विलीन हो सकता है और कभी भी अंधकार में खत्म हो सकता है। निर्वाण की अवस्था में ही स्वंय को जाना जा सकता है, मरने के बाद आत्मा महासुसुप्ति में खो जाती है। वह अनंत काल तथा अंधकार में पड़ीं रह सकती है या यह दूसरा जन्म लेकर संसार के चक्र में फिर से शामिल हो सकती है। अतः आत्मा तब तक आत्मा नहीं जब तक कि बुद्धत्व घटित न हो।
3. **क्षणिकवाद -** इस संसार में सब कुछ क्षणिक और नश्वर है। कोई वस्तु स्थायी नहीं। सब कुछ परिवर्तन शील है। यह शरीर और संसार उसी तरह है-जैसे मनुष्य का शरीर पंचतत्त्व से बना है उसमें किसी एक तत्व को अलग करने से शरीर का अस्तित्व खत्म हो जा सकता है।

उक्त तीनों सिद्धान्त पर आधारित होकर बौद्ध दर्शन की रचना हुई। इन तीनों सिद्धान्तों पर आगे चलकर थेरवाद, वैभाषिक, सौत्रांत्तिक माध्यमिक (शून्यवाद), योगाचार (विज्ञानवाद) और स्वतन्त्र योगाचार का दर्शन गढ़ा गया। इस तरह बौद्ध धर्म के दो प्रमुख सम्प्रदायों के कुल छः उपसम्प्रदाय बनें। इन सबका केन्द्रीय दर्शन रहा 'प्रतीत्यसमुत्पाद'।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बौद्ध शिक्षा दर्शन की भूमिका या उपादेयता -

बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली का प्रभाव वर्तमान शिक्षा पर प्रभावी रूप से दृष्टि गोचर होता है क्योंकि अतीत ही वर्तमान की नींव होती है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली हेतु बौद्ध शिक्षा दर्शन अपने कुछ अनुकरणीय दिशा छोड़े है। आज भी प्रायः शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक की शारीरिक, नैतिक एवं चारित्रिक पक्ष के विकास पर बल दिया जा रहा है। आज नैतिक मूल्यों के ह्रास को रोकने के लिए नये-नये कदम उठाये जा रहे हैं, एवं बच्चों के अन्दर मानवतावादी, सादगी पूर्ण जीवन और श्रेष्ठ विचारों के आदर्शों को प्राप्त करने का श्रेय भी बौद्ध शिक्षा दर्शन को जाता है। बौद्धशिक्षा दर्शन का पक्ष वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित था जो आज वर्तमान शिक्षा की रीढ़ की हड्डी है। आज वैज्ञानिक पक्षों के विकास में दिन-प्रतिदिन नये-नये अनुसंधान एवं आविष्कार किये जा रहे है। बौद्धकालीन शिक्षा वर्तमान समय मे प्रासंगिक एवं इसने अपना अहम योगदान दिया है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बौद्ध शिक्षा दर्शन की उपादेयता निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से देखा जा सकता है-

1. **सभी को शिक्षा का समान अधिकार-** बौद्ध कालीन शिक्षा दर्शन

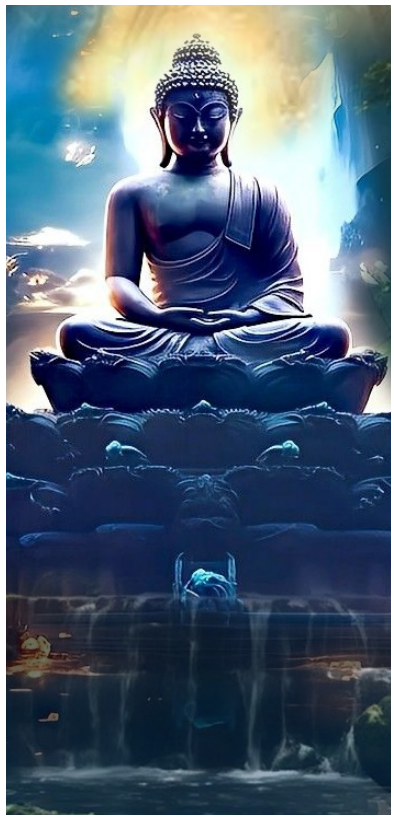

से ही शिक्षा सभी वर्गों एवं सर्व जनों के लिए प्रारम्भ कर दिया गया। इसी काल से सभी वर्गो को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ और इसी समय से संस्थागत शिक्षा का जन्म माना गया। भारत में शैक्षिक अवसरों की समानता प्रायः बौद्ध कालीन दर्शन की देन है। इसी काल से भारत में विद्यालयी शिक्षा की शुरुआत माना जाता है विद्यालय भी दो प्रकार के एक प्रारम्भिक शिक्षा हेतु और दूसरे उच्च शिक्षा हेतु। दोनों ही प्रकार के विद्यालयों में नियमो का कठोरता से पालन किया जाता है एवं वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अनुशासन युक्त शिक्षा दिया जाता है।
2. **निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा -** वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली मे निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा बौद्ध शिक्षा दर्शन की देन है। निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा से आज भारत के अधिकांश गरीब जनता को साक्षर बनाने का कार्य किया जा रहा

है।

3. **भव्य शिक्षण संस्थाओ का निर्माण-** बौद्ध शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत विहारों एवं मठों में भव्य शिक्षण भवनों का निर्माण कराया गया था। उसी समय में भिक्षुओं को छात्रावास की सुविधा उपलब्ध कराया जाता है, जबकि आज के शिक्षा प्रणाली में शिक्षण संस्थाओं के अच्छे-अच्छे भवनों का निर्माण किया जाता है और शिक्षण संस्थाओं में छात्रावास की सुविधा प्रदान किया जा रहा है। इन विद्यालयों में विज्ञान के प्रयोग का भी व्यवस्था किया जाता है।
4. **लोक भाषा के माध्यम से शिक्षा-** बौद्धकालीन शिक्षा लोक भाषा के माध्यम से दी जाती थी। जो कि वर्तमान शिक्षा भी प्रत्येक देश में मातृभाषा एवं जन सामान्य भाषा में दी जाती है। जिससे हर वर्ग तक शिक्षा को पहुंचाया जा सके। मातृभाषा से अभिप्रायः जो भाषा प्रायः आधिक लोगों के द्वारा लिखा, पढा या बोला जाय।
5. **धार्मिक शिक्षा के साथ मानवतावादी शिक्षा पर बल -** बौद्ध शिक्षा दर्शन में धार्मिक शिक्षा के साथ मानवतावादी शिक्षा पर बल दिया जाता था, धार्मिक शिक्षा का बहुत विशेष समर्थन न करते हुए गौतम बुद्ध ने मध्यम मार्गी विचार धारा पर जोर दिया और जो वर्तमान शिक्षा परिवेश में मानवतावादी शिक्षा का रुप दिखाई देता है। हिंसा का विरोध, चोरी न करना, दूसरे का धन न लेना, सत्य बोलना, मादक पदार्थों का सेवन न करना आदि सत्य विचार हमें प्राचीन बौद्ध शिक्षा दर्शन से प्राप्त होते है जो आज वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिक है।
6. **स्त्रियों के लिए शिक्षा की व्यवस्था-** बौद्ध कालीन शिक्षा व्यवस्था से ही स्त्रियों की शिक्षा का शुरुआत हो गया थी। जो आज वर्तमान भारतीय समाज में प्रासंगिक है। आज विश्व के प्रायः प्रत्येक देश महिला शिक्षा का विशेष प्रावधान कर रहे हैं महिलाओं की शिक्षा व्यवस्था से माना जा रहा है कि समाज की शिक्षा स्तर को बढाया जा सकता है। वर्तमान भारतीय साक्षरता दर की वृद्धि में महिलाओं की शिक्षा का विशेष योगदान है जो बौद्धकालीन शिक्षा की देन रही है।
7. **योग शिक्षा -** बौद्धकालीन शिक्षा दर्शन में योग शिक्षा भी मनुष्य के व्यायाम के लिए अनिवार्य था क्योंकि मनुष्य के शारीरिक विकास के लिए मनुष्य के व्यायाम को शरीर का भोजन माना गया। जो वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिक है। आज भी विद्यालय, विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है।
8. **पुस्तकालय की व्यवस्था -** बौद्धकालीन शिक्षा दर्शन में हमें नालन्दा में एक विशाल पुस्तकालय का साक्ष्य मिलता है जो एक शिक्षा जगत् की एक समृद्ध पुस्तकालय थी। जो आज वर्तमान शिक्षा प्रणाली में प्रासंगिक प्रतीत होती है। आज प्रायः प्रत्येक विश्वविद्यालय, महाविद्यालयों एवं कालेजो में पुस्तकालय की व्यवस्था अनिवार्य रूप से किया गया है। जिससे छात्र-छात्राए अपने समय का सदुपयोग कर सकें।

निष्कर्ष -

बौद्धकालीन शिक्षा दर्शन से यह ज्ञात होता है कि वर्तमान परिवेश में बालक के अन्दर एक मानवतावादी, सादगीपूर्ण जीवन और श्रेष्ठ विचारों के आदर्शों को प्राप्त कराने में शिक्षा की अहम भूमिका है। इस शिक्षा के माध्यम से बालक के शारीरिक, नैतिक, सामाजिक एवं चारित्रिक गुणों का सृजन किया जा सकता है। वर्तमान समय में भी इसकी अति आवश्यकता है। आज प्रायः बालकों में नैतिक एवं चारित्रिक मूल्यों का ह्रास होता पाया जा रहा है। यह एक चिन्ता का विषय बना हुआ है। आज मनुष्य के द्वारा हिंसा को बढ़ावा दिया जा रहा है।एक प्राणी दूसरे प्राणी के खून का प्यासा बना है। आज विश्व की सबसे बड़ी जटिल चुनौतियों में आंतकवाद है जो कि विश्व व्यापी समस्या को जन्म दे रहा है। जिससे यह कहा जा सकता है कि बौद्धकालीन शिक्षा का अनुसरण करते हुए इस एक जटिल समस्या का समाधान पाया जा सकता है और मानव मानव के बीच सौहार्द पूर्ण व्यवहार भाईचारा का विकास के व्यवहार को बढाया जा सकता है। अन्त में कहा जा सकता है कि पृथ्वी के सभी प्राणी एक समान और एक बराबर हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

- पाण्डे, गोविन्द चन्द (2006)- बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
- लाल, रमन विहारी (2013) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन 'गंगोत्री' शिवाजी रोड, मेरठ।
- मुकर्जी, एस. के. (1993), सार्वभौमिक प्रवाह का बौद्ध दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली पुनः मुद्रण।
- हिरियाना एम. (2009), भारतीय दर्शन की रूपरेखा, मोती वनारसी दास, पुनः मुद्रण।
- https://he-m-wikipedia-orgs wiki-
- आंवेडकर, भीमराव रामजी (2003). बुद्ध और उनका धम्म, बुद्ध और उनका धम्म सोसायटी आफ इंडिया समता प्रकाशन, नागपुर।

*शोध-छात्र
रतनसेन स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बांसी, सिद्धार्थनगर

**शोध निर्देशिका, बी.एड्. विभाग,
रतनसेन स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बांसी, सिद्धार्थनगर

बौद्ध दर्शन में राजनीतिक चिन्तन

डॉ. प्रीति त्रिपाठी

सार संक्षिप्त -

बौद्ध दर्शन भारत ही नही अपितु विश्व भर के मान्य दर्शनों में सर्वश्रेष्ठ स्थान रखता है। बौद्ध दर्शन की उत्पत्ति एकदम से नहीं हुई अपितु यह वैदिक युग से अब तक पूँजीभूत विश्वासों के सत्यान्वेषण का फल था। यह दर्शन ऐसे काल में उत्पन्न हुआ, जब मनुष्य की जिज्ञासा प्राचीन अंधविश्वासी आचरण को चीरकर प्रत्येक वस्तु को वास्तविकता से देखना चाहती थी। मानव की तर्कशीलता और सत्यान्वेषी दृष्टि के आगे अन्धविश्वास और प्राचीनता का मुखौटा उतर चुका था। कर्मकांड की जर्जर दीवारे एवं मान्यताएं निराश हो चुकीं थी।

शाक्य गणराज्य की राजधानी कपिलवस्तु आज के सिद्धार्थनगर जनपद जो कि पूर्व में बस्ती जिले का तिलौरा कोट के निकट नेपाल की तराई में लुम्बिनी आज के रूमिन देई वन में ई० पू० 563 में बुद्ध का जन्म हुआ था। गौतम बुद्ध ने संसार में पहला विश्वधर्म स्थापित किया जो मनुष्य मात्र के लिए था। सब प्रकार के ढ़ोग अंधविश्वासों को हटाकर बुद्धि, विवेक, दया और प्रेम के आधार पर सरल और पवित्र जीवन निर्वाह करने का आदेश दिया गया। बौद्ध धर्म में राजनीति का मूल आधार नैतिकता है यदि राजा नैतिक आचरण नही करेगा तो अराजकता व्याप्त हो जाएगी। इस प्रकार बौद्ध दर्शन में राजनीति और धर्म एकसाथ विद्यमान है।

बीज शब्द -

बौद्ध दर्शन, राजनीति और धर्म, नैतिकता, आर्य सत्य, आष्ट्रांगिक मार्ग, राजनीतिक चिन्तन, दस चक्र, करुणा, दार्शनिक, वैश्विक, धर्म, मानव जाति आत्म दीपो भवः।

बौद्ध दर्शन में राजनीति और धर्म -

हे कपिलवस्तु के राजकुँवर तेरी यश गाथा गाएं,
बुद्धम् शरणम् संघम् शरणम् की धर्म ध्वजा लहराए।
हे शाक्य भूमि हे पुण्य भूमि तेरी यश गाथा गाए
बुद्धम् शरणम् संघम् शरणम् की धर्म ध्वजा लहराए।

नेपाल की तराइयों मे स्थित लुम्बिनी में 563 ई०पू० महात्मा बुद्ध का जन्म वैशाख पूर्णिमा के दिन हुआ। यद्यपि वैश्विक पटल पर बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता शांति, अहिंसा, त्याग, दया, करुणा आदि पर निर्भर है तथापि बौद्ध दर्शन में राज्य सिद्धान्त की सुस्पष्ट व्याख्या की गई है। बौद्ध दर्शन भारत ही नही अपितु विश्व भर के महान दर्शनों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। बौद्ध दर्शन की उत्पत्ति एकदम से नही हुई बल्कि यह वैदिक युग से अब तक पूँजीभूत विश्वासो के सत्यन्वेषण का फल था। यह दर्शन ऐसे काल में आया जब मनुष्य की जिज्ञासा प्राचीन अंधविश्वासी आवरण को चीरकर प्रत्येक वस्तु की वास्तविकता को देखना चाहती थी। मानव की तर्कशीलता और सत्यान्वेषी दृष्टि के आगे अन्धविश्वास और प्राचीनता का मुखौटा उतर चुका था। ई० पू० छठी शताब्दी में धार्मिक कर्मकांडो, यशवाद, बहुवेदवाद के जाल एवं प्रवृर्तिवादी और द्वैतवादी दृष्टिकोण से त्रस्त जनमानस को मुक्ति दिलाकर सरल निवृत्रमार्गी तथा मध्यमार्गी आध्यात्मिक पथ की ओर प्रवृत्त करने वाले सिद्धार्थ आगे जाकर तथागत बुद्ध कहलाए। बुद्ध ने संसार का पहला विश्वधर्म स्थापित किया जो मनुष्य मात्र के लिए था।

बौद्ध धर्म ऊपरी तौर पर एक धार्मिक आन्दोलन था किन्तु उसकी तह में राजनीतिक चिन्तन समाहित था। अगन्नासुत्त के राजनीतिक विचार जीवन की उत्पत्ति, समाज व्यवस्था एवं जातियों की उत्पत्ति से सम्बन्धित है। बुद्ध के अनुसार जाति के आधार पर नैतिक कार्यो एवं धर्मो का वर्णन नहीं किया जाता और कोई भी भिक्षुक बन सकता है तथा अरहन्त के स्तर पर पहुँच सकता है। समाज के व्यक्तियों का मूल्यांकन जन्म के आधार पर नहीं कर्म के आधार पर होना चाहिए। महात्मा बुद्ध ने धर्म को व्यक्ति के इस जीवन और मोह प्राप्ति के लिए सर्वोत्तम माना है। धम्म् अर्थात् धर्म वही है जो सबके लिए ज्ञान के द्वार खोले और विद्वान वही है जो अपने ज्ञान से सबको प्रकाशित करें।

बौद्ध धर्म एवं दर्शन के जिन विभिन्न सिद्धान्तों तथा आदर्शों का विश्लेषण और विस्तार हुआ है, भले ही वे साधारण हो अथवा गूढ़, प्रत्येक में सारभूत स्थान 'मनुष्य' का ही रहा अर्थात् तथागत बुद्ध ने ईर्ष्या, द्वेष, दुःख, क्रोध, शत्रुता, बैर, तृष्णा, दुष्टता व्याभिचार, लोभ, मायाजाल, झूठ, हिंसा, चोरी इत्यादि में फंसे व्यक्ति को इन्सान अथवा उत्कृष्ट मानव की स्थिति में लाने के लिए अनेक उपाय, सरल तथा कठिन बतलाए। वह चाहते थे कि मनुष्य, बहुत सी बुराइयों से लिप्त भले ही हो, पर वह अच्छा, स्वच्छ, सुन्दर, कुशल, नैतिक बनने की क्षमता रखता है बशर्ते कि वह सम्यक् मार्ग का अनुसरण करे और उन मूल्यों को अर्जित करे जिनसे मानव समाज में आदमी-आदमी के बीच सम्यक् सम्बन्धों की स्थापना सम्भव हो सके।

बौद्ध धर्म, धर्म और दर्शन के अतिरिक्त राजनीति पर भी महत्वपूर्ण विवेचना करता है। यह एक मध्यममार्गी एवं व्यवहारिक धर्म के रूप में सामने आया, बौद्ध धर्म मूलतः वैदिक धर्म में व्याप्त कुरीतियों तथा समस्याओं के विरोध का परिणाम था। महात्मा बुद्ध को **एशिया का प्रकाश पुंज** कहाँ जाता है। बौद्ध साहित्य में त्रिपिटको (विनय

पिटक, सुत्र पिटक, अभिधम्म पिटक) का विशेष महत्व है। चतुष्ट्य अर्थात् आर्य सत्य बौद्ध धर्म की चार मूल मान्यताएं हैं जो इस प्रकार से है -

1. दुःख
2. दुःख का कारण
3. दुःख का कारण तृष्णा
4. तृष्णा को दूर करके दुःख दूर किया जा सकता है।

इन मान्यताओं को आत्मसात् कर निष्ठापूर्वक आचरण का संदेश दिया गया है। गौतम बुद्ध ने दुःख निवारण हेतु आठ उपायो की ओर इंगित किया है जिन्हें अष्टांगिक मार्ग कहाँ गया है - सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वचन, सम्यक कर्म, सम्यक जीविका, सम्यक व्यायाम, सम्यक समाधि, सम्यक ध्यान।

अतः बौद्ध धर्म की मूल विशेषता मध्यममार्गी के नाम से जानी जाती है। यद्यपि वैश्विक पटल पर बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता शांति, अहिंसा, त्याग, दया, करूणा आदि पर निर्भर है तथापि बौद्ध दर्शन में राज्य सिद्धान्त की सुस्पष्ट व्याख्या की गई है। बुद्ध ने स्पष्ट शब्दों में राज्य के सिद्धान्त और सामाजिक कल्याण, कानून और व्यवस्था के लिए संगठनो को रेखांकित किया है। बुद्ध ने इन दिनों में प्राणी मात्र के संरचनात्मक घटकों की चर्चा ही नहीं की बल्कि उनकी गतिविधियों के बारे में भी वर्णन किया है वे मानते है कि प्राणी मानसिक तौर पर उत्साही आत्मसुबोधगम्य सतत् संहिता के अन्तर्गत लम्बी अवधि तक रहते है। बन्धन मुक्त व्यक्ति के राज्य का विचार उपनिषदों के उपविभागी से प्रभावित है उपनिषदों के कुछ भाग यह स्पष्ट करते है की राज्य में व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की पूर्णता कि नही खोता।

बौद्ध धर्म में राजनीति का मूल आधार नैतिकता है। राज्य की उत्पत्ति सम्बन्धी विचार के सन्दर्भ में समझौतावादी सिद्धान्त को अपनाया गया है। जिसका वर्णन **दीर्घ निकाय** नामक ग्रन्थ में मिलता है। बुद्धवादी परम्परा के अनुसार पहले धरती पर स्वर्ण युग था जिसमें लोगो में आपसी सामजस्य एवं प्रसन्नता थी। व्यक्ति सदुणी एवं खुशहाल था कालान्तर में लोग लालची तथा स्वार्थी होते गए और अन्य बुराइयां उत्पन्न हुई व आदर्श राज्य समाप्त हो गया परिणामस्वरूप लोगों ने आपसी समझौते (महासम्मत चुनाव) के द्वारा एक राजा का चयन किया जिससे अव्यस्था उत्पन्न करने वाले व्यक्ति को दण्डित किया जा सके, अतः व्यक्तियों ने अपनी फसल का कुछ भाग राजा को देने का निश्चय किया।

जातक कथाओं एवं **दीर्घ निकाय** में राज्य के अधिकार एवं कर्तव्यों का उल्लेख मिलता है जिसमें राजा को प्रजा की सुरक्षा करने नागरिकों पर उचित करारोपण करने तथा गरीबों की आर्थिक सहायता करने का प्रावधान किया गया है। नैतिक नियमों पर चलते हुए राजा को दोषी को न्यायपूर्ण तरीके से दण्डित करना चाहिए। राजा को शत्रु राज्य की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए चाहे वह कितना की दुर्बल हो। **बुद्ध का राजा कौटिल्य के राजा से पृथक** है, जहाँ स्पष्ट कहा गया है कि राजा अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अनैतिक साधनों का प्रयोग न करे और युद्ध काल में भी राजा को न्यायपूर्ण आचरण की सलाह दी गई है।

दीर्घ निकाय के अनुसार राजा को शक्ति एवं सदाचरण का पालन करते हुए प्रशासन धर्म (धम्म) के नियमों के अनुसार चलाना चाहिए। अंगुनर निकाय में यह वर्णन प्राप्त होता है कि राजा अच्छे कुल में पैदा होना चाहिए जिसकी सात पीढ़िया शुद्ध एवं पवित्र हो। राजा आकर्षक, प्रिय तथा कुशल योद्धा होना चाहिए। राजा धन-धान्य से युक्त सम्पन्न होना चाहिए एवं राजा के पास एक अनुशासित एवं आज्ञाकारी सैन्य बल भी होना चाहिए। बुद्धवादी परम्परा में राजनीति एवं धर्म का सम्मिश्रण पाया जाता है। यद्यपि राजनीति एवं धर्म में गहरा सम्बन्ध है तथापि राजनीति का एक पृथक विचार भी है, जिसमें राजनीति को एक नैतिक बुराई, धोखेबाजी व चालाकी का पर्याय मान इसे निंदनीय कहाँ गया है।

बौद्ध भिक्षुओं को राजा व राजकुमारों के साथ नहीं बैठना चाहिए तथा किसी राजकीय पद को ग्रहण नहीं करना चाहिए। अश्वघोष ने अपनी पुस्तक **बुद्ध चरित्र** में इसी मत का समर्थन करते हुए लिखा है कि- "राजनीति धर्म व नैतिकता दोनो के विरूद्ध है लेकिन बुरी होते हुए भी आवश्यक है क्योंकि समाज में व्यवस्था बनाए रखना राज्य द्वारा ही सम्भव है।"

बौद्ध परम्परा -

बौद्ध परम्परा में संघ के द्वारा प्रशासनिक संगठन का वर्णन किया गया है। संघ के नियम सिद्धान्त व कार्य प्रणाली, राजनीतिक संगठनों की तरह थी जिन्हें तीन चरणों में परिलाक्षित किया जा सकता है -

- संघ के विकास के इस चरण में संघ के नेता बौद्ध थे और समाज को नियन्त्रित करने वाली संस्था का अभाव था। बौद्ध भिक्षुओं द्वारा बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जाता था, उनका संघ पर पूर्ण नियन्त्रण था, अन्तिम निर्णय लेने का अधिकार बुद्ध का था।
- वरिष्ठ बौद्ध भिक्षुओं को संघ में प्रवेश देने का अधिकार मिल गया था। वरिष्ठ बौद्ध भिक्षु नए भिक्षुओं कों संघ में प्रवेश दे सकते थे।
- संघ बहुत बड़ा समुदाय बन गया था अब सबको संघ में प्रवेश का अधिकार मिल गया था। जैसे जब निर्णय की शक्ति एक व्यक्ति के हाथ में थी, तब राजतंत्रीय शासन था जब निर्णय वरिष्ठ भिक्षुओं के हाथ में आ गया तब यह कुलीनतंत्रीय शासन बन गया और जब निर्णय समूचे संघ के हाथ में आया तब यह लोकतांत्रिक शासन जैसा प्रतीत होता है। बुद्ध ने अन्य स्थानों पर राज्य के प्रशासन एवं विधि व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए कुछ संगठनों को रेखांकित किया है - (महायान ग्रंथ, दास

चक्र कास्ति गर्भनाम - महायान सूत्र में) कानून चक्र को घुमाने से सम्बन्धित दस पहिए बताए गए है। उनके धर्म प्रवर्तन की तुलना राज्य के प्रशासन से की गई है। पहिए के उदाहरण से वे राज्य प्रशासन को चुस्त बनाने की प्रेरणा प्रदान करते है।

- **प्रथम चक्र** में शासक के चुनाव की विधि का वर्णन है शासक को शिक्षित, धनवान, स्वस्थ्य, बलशाली, ज्ञानी और करूणाशील होने के साथ-साथ मेहनती भी होना चाहिए।
- **द्वितीय चक्र** जनहितकारी नीति के निर्माण के लिए नेतृत्व को इंगित करता है।
- **तीसरे चक्र** में बुद्ध शिक्षित, ज्ञानी एवं युद्ध कौशल से परिपूर्ण लोगो को राजा द्वारा उपाधियों के वितरण का प्रावधान करतें है। जो आज भी भारतीय संविधान में दिखाई पड़ती है। रोजगार के लिए योग्यता एवं प्रतिभा पर उनका विशेष बल था।
- **चौथा चक्र** धर्म एवं मान्यताओं के आधार पर विभाजित जनता को राज्य द्वारा एकजुट किए जाने की बात कहता है। बुद्ध ने कहाँ कि शांति की स्थापना के लिए राजा को बड़ों एवं सलाहकारों से परामर्श लेना चाहिए।
- **पांचवे और छठें चक्र** में बुद्ध ने राज्य और उसके क्षेत्र की सुरक्षा से सम्बन्धित परामर्श दिए है।
- **सातवें चक्र** में राज्य क्षेत्र के निवासियों पर नजर रखना तथा संदिग्ध पर उचित कार्यवाही करने की बात कहीं गई है।
- **आठवें चक्र** में राजा को अहंकार न करने की बात कही गई है।
- **नौवा चक्र** युवा कौशल एवं शिक्षा को बढ़ावा देने का संदेश देता है। साथ ही जनता की प्रतिभा एवं रीति-रिवाजों पर भी ध्यान देने की बात बुद्ध कहतें है।
- **दसवां यानी अन्तिम चक्र** यह बताता है कि राज्य द्वारा सभी मानव जाति का उपरोक्त निर्देशों के अनुरूप सम्मान किया जाय तथा राजा सभी का कल्याण करें और राज्य का विस्तार बिना युद्ध एवं हिंसा के किया जाय।

इन चक्रों का वर्णन अन्य सूत्रों में भी उपलब्ध है यथा- आर्य बोद्धिसत्वाचार्य-गोकारोपाय-विषय-विकुवर्ण निर्देशनाम-महायान सूत्र में प्रजा एवं प्रजापालन भी परिस्थति का पूरा उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त राजा में सावधानी के साथ-साथ करूणा भी होनी चाहिए वह शक्ति का दुरूपयोग न करे क्योंकि राज्य एवं राजा **क्षण भंगुर** है। पीड़ितों की रक्षा और आपदा से प्रभावित लोगों पर करूणा बरसानी चाहिए। दण्ड प्रतिशोध की भावना से नहीं सुधार की भावना से दिया जाना चाहिए। फांसी का निषेध एवं प्रजा को संतान मानने का आदेश बुद्ध ने अपनी शिक्षाओं में दिया है।

युद्ध के लिए तीन चरणों का उल्लेख कुछ करते हैं -

- युद्ध की स्थिति आने पर बातचीत, समझौता, चेतावनी, मुआवजे से हल निकालने चाहिए यह निष्प्रभावी होने पर ही राज्य युद्ध शुरू करे।
- राज्य के नागरिको की पराधीनता से मुक्ति या स्वयं का बलिदान।
- युद्ध में स्वयं को शत्रु से मजबूत मानना चाहिए और जीत का विश्वास रखना चाहिए साथ ही युद्ध में जान-माल की कम से कम हानि का विचार रखना चाहिए।

बौद्ध धर्म की मान्यता है कि स्वतंत्रता, सुख और समानता का अधिकार सभी को प्राप्त हो। मनुष्य को गरिमा का अधिकार है सभी को स्वाधीनता के बराबर एवं अहस्तांन्तरणीय अधिकार है। केवल राजनीतिक स्वतंत्रता के संदर्भ में ही नही बल्कि भय और अभाव से मुक्ति के आधारभूत स्तर पर भी। दूसरे शब्दो में कहें तो बुद्ध ने और उनके धर्म ग्रन्थों ने उनके समय से लेकर आज तक की राजनीति को प्रभावित किया है। बुद्ध ने अपना समस्त जीवन मानव जाति को समर्पित कर विश्व को एक नई राह दिखाई।

प्राचीन बौद्ध ग्रन्थ में वार्णित अहिंसा जिसे सुत्तनिपाह कहतें है आज विश्व के कई देश भारत समेत उस राह पर चल रहे है - श्रीलंका, म्यामांर, कम्बोडिया, थाईलैण्ड और चीन में प्रमुख रूप से बौद्ध धर्म को ही मान्यता प्राप्त है। बुद्ध को एक महान दार्शनिक, समाज-सुधारक तथा भारतीय बौद्धिक परम्परा में व्याप्त कुरीतियों को प्रथम चुनौती देने वाला माना जा सकता है। संक्षेप में कहें तो बुद्ध ने सामाजिक अर्थव्यवस्था और राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में कोई कोना अछूता नहीं छोड़ा। अत्त दीपो भवः अर्थात् स्वयं दीपक बनो जिसका तात्पर्य है व्यक्ति स्वयं अपने जीवन का निर्धारण करे। मध्यम मार्ग इस दर्शन की प्रमुख विशेषता है, यही कारण है उनके विचार वर्तमान समय में भी प्रासंगिक है और सदैव रहेंगे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

- दीक्षित, हृदय नारायण : भारतीय समाज राजनीतिक संक्रमण, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण 2008 पृ. सं. 4 से 5.
- गुप्ता, डॉ0राजेश चन्द्र : बौद्ध दर्शन का प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति पर प्रभाव, राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली 110002 पृ. सं. 50 से 53.
- कीर्ति, डॉ.धर्म : बौद्ध धर्म में नीतिशास्त्र, सम्यक प्रकाशन क्लब रोड नई दिल्ली, पृ.सं. 205 से 215 एवं 321 से 329.
- चतुर्सेन, परशुराम, आचार्य : महात्मा बुद्ध और बौद्ध धर्म, हिन्दी संस्थान यमुना विहार दिल्ली, प्रथम संस्करण 2008 पृ0सं0 11 से 25.
- राधाकृष्णन, डॉ. : गौतम बुद्ध जीवन और दर्शन, राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट दिल्ली 110006 संस्करण 2008 पृ0 सं0 18 से 20.
- रोमिला, थापर : अशोक एवं मौर्य

साम्राज्य का पतन, ग्रन्थ शिल्पी इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड प्रथम हिन्दी संस्करण 1997 पृ. सं. 7.
- अहिरवार, डॉ.रामकुमार : बौद्ध धर्म का इतिहास, शिवलिक प्रकाशन दिल्ली 110007, संस्करण 2015 पृ. सं. 39 से 45.
- अरिहन्त, प्रकाशन : राजनीति विज्ञान यू.जी.सी. नेट, जे.आर.एफ. सेट, पृ.सं. 162-163.
- अम्बेडकर, डॉ. : संपूर्ण वाड्मय, खण्ड-7 1995, पृ.-3.
- अम्बेडकर, डॉ. : द बुद्ध एंड हिज धम्म (1957) पृ.-240.
- नरसू, पी.एल.: द इसेन्स ऑफ बुद्धिज्म 1950, पृ.-187.
- राधाकृष्णन, एस. : इण्डियन फिलासफी, खण्ड-1 पृ.-370.
- एलिन, जी.एफ. : द बुद्धाज फिलासफी, 1953, पृ.-42.
- चंचरीक, कन्हैया लाल : बुद्ध और बौद्ध धर्म (2011) यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली 110002, पृ.सं. 13-26.
- कुमारी, पूनम : बुद्ध कालीन भारत (2005) जानकी प्रकाशन, पटना बिहार पृ. सं. 156-166.
- पाण्डेय, डॉ.गोविन्द चन्द : बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास (2006) उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ, पृ.सं. 47-104.
- सहाय, डॉ.शिव स्वरूप : प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन (2014) मोती लाल बनारसी दास, नई दिल्ली पृ. सं. 230-38.
- सिंह, डॉ.शिव भानु 2004 : धर्म दर्शन का आलोचनात्मक अध्ययन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद पृ.सं. 377-86.
- कौर मनमीत, शर्मा वन्दना, त्रिपाठी रमेश : भारतीय राजनीतिक चिन्तन प्रगति प्रकाशन मेरठ 2024 पृ.सं. 12 से 13.

• सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग,
सी. आर. डी. पी. जी. कालेज,
गोरखपुर, उ.प्र.।

बौद्ध दर्शन की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में प्रासंगिकता

डॉ. नीरू श्रीवास्तव

सारांश -

भारत वर्ष के इतिहास में बौद्ध युग का स्थान अत्यन्त महत्व पूर्ण है। इस युग में भारतीय विचार जगत में विशेष उथल-पुथल देखने को मिलती है। सामाजिक और धार्मिक नव चेतना के इस युग में बुद्ध सदृश महापुरूष का इस देश में जन्म हुआ, जिन्होने संसार को सत्य और अहिंसा का संदेश दिया जो भव-व्याधि से पीड़ित मानव के लिए वरदान हो गया। उन्होने धार्मिक जीवन को संघीय जीवन पद्वति दी। जिसका आवन्तर कालीन सम्प्रदायों में बड़ा प्रभाव पड़ा। जातिवाद का सर्वप्रथम विरोध बुद्ध तथा महावीर ने किया और ब्राह्मणों की प्रभुता को भी चुनौती दी। इन्होने धार्मिक उपदेश जनता की भाषा में दिये अतः वे सभी के लिए बोधगम्य हो गये।

प्रस्तावना-

सामाजिक व धार्मिक नवचेतना के इस युग में बुद्ध जैसे महापुरूष का इस देश में जन्म हुआ, जिन्होंने संसार को सत्य और अहिंसा का वह सन्देश दिया जो भव-व्याधि से पीड़ित मानव के लिए वरदान हो गया। उन्होंने धार्मिक जगत को संघीय जीवन पद्वति दी जिसका अवान्तर कालीन सम्प्रदायों में बड़ा प्रभाव पड़ा। जातिवाद का सर्वप्रथम विरोध बुद्ध तथा महावीर ने किया इन्होंने ब्राह्मण की प्रभुता को भी चुनौती दी। धर्मोपदेश जनता की भाषा में दिए व सभी के लिए बोधगम्य हो गये।

महात्मा बुद्ध के पहले ब्राह्मण धर्म में अनेक दोष उत्पन्न हो गए थे परम्परागत रूप से चली आ रही धर्म परम्परा का लोप हो रहा था। कर्मकाण्ड बढ़ गए थे, यज्ञों को पाप-कर्मो के प्रायश्चित का साधन माना जाने लगा। यज्ञों में बलि देने की प्रथा का प्रचलन हो चुका था। जिसके कारण अनैतिकता, पाप, अत्याचार में तेजी से वृद्धि हो रही थी। इस संक्रान्ति में महात्मा बुद्ध द्वारा बौद्ध धर्म का प्रादुर्भाव हुआ । भगवान बुद्ध ने अपने दर्शन का प्रमुख उद्वार इन दो तत्वों को बनाया -

1. उन्होंने दर्शन की जटिलताओं में जाकर एवं सर्व बोधगम्य आचार-संहिता के पालन का उपदेश दिया।
2. तत्कालीन रीति-रिवाजों का विरोध न करके एक सुधारक के रूप में तत्युगीन, कुरीतियों के प्रतिकार का प्रयास किया। इन दोनों कारणों से बौद्ध धर्म सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ और अपने युग की चेतना को बहुलांश में प्रभावित कर सका। बौद्ध मत का व्यापक प्रचार हुआ और क्रमशः बौद्ध, पालि, साहित्य समृद्ध होता गया।

आवश्यकता व महत्व -

1. आज शिक्षा जगत में पक्षपात, जातिवाद का गन्दा माहौल बन गया है पहुँचे वाले लोग शिक्षा को प्रभावित करते है जबकि बौद्ध कालीन शिक्षा व्यवस्था में सबको समान दृष्टि से देखा जाता था। जातिवाद, पक्षपात को कोई स्थान नही था वर्तमान समय में हमें बौद्ध कालीन शिक्षा की आवश्यकता है।
2. पिता पुत्र के रूप में गुरू शिष्य का जो पवित्र सम्बन्ध बौद्ध काल में था आज पूरी तरह नष्ट हो गया है, आज आवश्यकता इस बात की है कि गुरू-शिष्य के बिगड़ें सम्बन्धों की और ध्यान दिया जाय।
3. छात्रों के अनुशासन पर विशेष ध्यान दिया गया था अनुशासन भंग करने वाले को कठोर दण्ड के भागी बनते थे, वर्तमान समय में भी ऐसे ही अनुशासन की आवश्यकता है।
4. व्यक्ति में सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, त्याग, परोपकार, संयम आदि का वर्तमान समय में महत्व हो।

समस्या कथन -

बौद्ध दर्शन की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में प्रासंगिकता।

शिक्षा का उदेश्य -

1. बौद्ध कालीन शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य नैतिक व सदाचार की शिक्षा प्रत्येक बच्चे तक पहचान।
2. सार्वजनिक, व्यसायिक शिक्षा देना
3. स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन देना
4. शिक्षा का आधार जनतंत्रीय होना
5. शारीरिक, व्यायाम व खेल की शिक्षा देना
6. गुरू शिष्य का सम्बन्ध स्नेहपूर्ण होना
7. लोक भाषाओं को प्रोत्साहित देना
8. व्यक्तित्व का विकास होना
9. संस्कृति को संरक्षण प्रदान कराना
10. शिक्षा द्वारा शुद्ध उपायों से आजीविका उपार्जन करना आदि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य था ।

समस्या का परिभाषीकरण -

1. **बौद्ध धर्म क्या है -** सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, क्षमा, परोपकार, त्याग, सहानुभूति, संयम, सेवा आदि मनुष्य के हृदय में हो वही बौद्ध धर्म है।
2. **शिक्षा -** बौद्ध आचार्य 'वसुबन्धु' के अनुसार, "जीवन में दुःख

है, और शिक्षा इन दुःखों को दूर करने का मार्ग बताती है।"

परिकल्पना -

बौद्ध धर्म की समाजिक परिकल्पना मानव मूल्यों पर आधारित स्वतंत्रता, मानव समता, विश्वबंधुत्व धर्म स्वतंत्रता एवं विभिन्न संस्कृतियों के प्रति समभाव का गौरवपूर्ण स्थान है। बौद्ध कालीन मानवीय एवं सामाजिक कल्याण की आदर्श परिकल्पना सर्वोपरि थी, उनके दार्शनिक विचारों में दया, सत्य, त्याग, परोपकार, करूणा, संयम, सेवा आदि मनुष्य के लिए आवश्यक माना गया है। बौद्ध दर्शन अपनी परिकल्पना में सांसारिक दुःखों को पहचानने व उससे छुटकारा पाने का उपाय भी बताता है।

अध्ययन विधि -

प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध शोध पत्र बौद्ध धर्म के प्रमुख दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों का आज के सन्दर्भ के प्रासंगिकता दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में लिखा गया। अतः अध्ययन की प्रकृति दार्शनिक है। इसके अन्तर्गत विषय के अनुरूप प्राथमिक एवं अनुपूरक स्रोतों से तथ्यों का संग्रह किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में दार्शनिक विधि का उपयोग महान चिन्तकों के शैक्षिक विचारो, संगठनों एवं आंदोलनों के अध्ययन के सन्दर्भ में किया गया है इस विधि का स्वरूप व्याख्यात्मक है। इस अध्ययन के तहत विश्लेषणात्मक ढंग से मौखिक विचारों पर प्रकाश डाला गया है।

अध्ययन की सीमा -

बौद्ध धर्म एक प्राचीन एवं व्यापक धर्म है, इसमें निहित शैक्षिक व दार्शनिक विचार भी व्यापक रूप से उपलब्ध है पूरे का अध्ययन करना संभव नहीं है, क्योंकि शोधकर्त्ता को शोध के प्रकार, उपलब्ध समय लागत आदि का भी ध्यान रखना है। अतः एक सीमा तक इनका अध्ययन किया गया है इस सीमा के अन्तर्गत शोधकर्त्ता ने उन्ही दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारो का अध्ययन किया है जिनकी प्रासंगिकता आज भी है। तिथि क्रम कि दृष्टि से बौद्ध युग 500 (ई.पू.) 1200 (ई.पू.) तक विस्तृत है लघु शोध में प्रामाणिक किया गया है।

पूर्ववर्ती शोध कृतियों की समीक्षा -

बौद्ध दर्शन की वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिकता के लिए, बुद्धिष्ट एजुकेशन इन इण्डिया, बुद्ध दर्शन की उत्पत्ति एवं विकास, बौद्ध दर्शन के उत्पत्ति के विभिन्न घटकों में प्रभावों का अध्ययन किया गया है।

पूर्व में सम्पादित शोध अध्ययनों से उन लक्ष्यों का पता चलता है जिन पर प्रकाश डालने की वर्तमान समय में आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर विचार करने से यह अभिज्ञान होता है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा और दर्शन के क्षेत्र में बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य हुए हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र : 'बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ 1963।
- शाक्य, राजेन्द्र प्रसाद : बौद्ध दर्शन-मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 2001।
- सिंह, मैदान मोहन : 'बौद्ध कालीन समाज और धर्म' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली वि. वि. 1972।
- सिंह, महेन्द्र नाथ : बौद्ध तथा जैन धर्म, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 1990
- ओड, लक्ष्मी कान्त के : 'शिक्षा के दार्शनिक आधार'-राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 1983।
- अम्बेडकर, भीमराव : 'भगवान बुद्ध और उनका धर्म', सिद्धार्थ प्रकाशन बम्बई 1961
- देव, आचार्य नरेन्द्र : 'बौद्ध धर्म दर्शन' बिहार राष्ट्र भाषा परिषद् पटना 1971
- अल्टेकर, ए.ए.एस. : 'एजुकेशन इन एंशिएंट इंडिया' द इंडियन बुक शॉप बनारस, 1934।
- केई, एफ. ई. : 'भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्याए'।
- थापर, रोमिला : भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1988।

• सहायक आचार्य
अखिल भारतीय वीर बहादुर सिंह जनसेवा संस्थान, पीपीगंज, गोरखपुर

आधुनिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षा

निकिता गुप्ता

सारांश -

यह कहा जाता है कि व्यक्ति का सर्वांगीण विकास अर्थात् उसका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक संवेगात्मक, चारित्रिक तथा आध्यात्मिक विकास शिक्षा पर निर्भर है। यदि व्यक्ति को निष्पक्ष रूप से समानता के आधार पर बिना भेदभाव सहित शिक्षा दी जाती है, तो एक अच्छे राष्ट्र का निर्माण किया जा सकता है। बुद्ध के जन्म के समय तक भारतीय समाज रूढ़िवादी परम्पराओं से बहुत दूषित हो चुका था, जिसके होते हुए समाज का पतन होने लगा था। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं ने भारत के लोगों को उनके कल्याण हेतु नई राह दिखाई। उन्होंने चार आर्य सत्य बताये, पंचशील के पालन का संदेश दिया और अष्टांगिक मार्ग पर चलकर मनुष्य को पूर्ण रूप से मुक्त होने या मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताया। गौतम बुद्ध की शिक्षायें आधुनिक वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में भी बहुत प्रासंगिक हैं।

प्रस्तावना -

गौतम बुद्ध के जन्म तक भारतीय व्यवस्था काफी दोष पूर्ण हो चुकी थी। धर्म ने ऐसी परम्पराओं को जन्म देकर उनकी परवरिश कर दी थी, जो लोगों के लिए बहुत हानिकारक थीं। आस्था के नाम पर लोगों को गुमराह किया जाने लगा था। दुःखों से मुक्ति के नाम पर कर्मकाण्डों का बोल-बाला हो चुका था। कर्मकाण्डों के नाम पर यज्ञ अधिक होने लगे थे, बलि देने की परम्परा ने जीवों की हत्या करनी शुरू कर दी थी और सामाजिक असमानता आदि जैसे-समाज में कई दोष आ गये थे। भारत में कुरीतियां बहुत बढ़ चुकी थी, तो उस समय गौतम बुद्ध का जन्म हुआ। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं ने संसार को सत्य और अहिंसा का संदेश दिया। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं का अनुसरण करके लोगों ने अपने कल्याण के साथ आने वाली पीढ़ियों को भी सत्य और अहिंसा का कल्याणकारी रास्ता बताया। गौतम बुद्ध ने लोगों के कल्याणकारी उपदेश, लोगों की भाषा में दिये और उनके शिष्यों ने भी उनके कल्याणकारी उपदेशों एवं शिक्षाओं को दूर तक पहुँचाया। बुद्ध के उपदेशों के आधार पर तीन पिटकों की रचना हुई, जिनको सम्मिलित रूप से त्रिपिटक कहा गया। जिनमें विनय पिटक, सुत पिटक और अभिधम्म पिटक थे। विनय पिटक में गौतम बुद्ध द्वारा बताये भिक्षु संघ के नियमों का संग्रह, सुत पिटक में गौतम बुद्ध के उपदेशों का संग्रह एवं अभिधम्म पिटक में दार्शनिक विषयों का विवेचन है। बुद्ध काल में सभ्यता में उल्लेखनीय प्रगति हुई। नगर केवल राज सत्ता और व्यापार के ही केन्द्र नहीं रहे, बल्कि शिक्षा के केन्द्र भी बने जैसे तक्षशिक्षा एवं नालन्दा आदि। बुद्ध काल की शिक्षाओं का महत्त्व वर्तमान में भी है। बुद्ध की शिक्षायें सर्वव्यापी हैं। जहाँ गौतम बुद्ध की शिक्षाओं का अनुसरण किया गया, वहाँ-वहाँ अत्यधिक विकास हुआ।

शिक्षा का अर्थ -

आधुनिक शिक्षा का अर्थ मनुष्य को मानव बनाना तथा जीवन को प्रगतिशील बनाना, सांस्कृतिक एवं सभ्य बनाना है। शिक्षा द्वारा मनुष्य अपनी विचार शक्ति तथा तर्क शक्ति, समस्या समाधान तथा बौद्धिकता, प्रतिभा तथा रूझान, धनात्मक भावुकता तथा कुशलता और अच्छे मूल्यों तथा रूचियों को विकसित किया जाता है।

शिक्षा के उद्देश्य -

आधुनिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ज्ञान का विस्तार करना, नये ज्ञान के लिए इच्छा जागृत करना, व्यवसायिक शिक्षा के लिए प्रोत्साहन देना, सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता का विकास करना और देश का आधुनिकीकरण है।

पाठ्यक्रम -

बालक के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्यक्रम सम्बन्धी तथा सहगामी दोनों प्रकार की क्रियाओं को सम्मिलित करके पाठ्यक्रम को लचीला तथा प्रगतिशील बनाने पर बल दिया जाता है।

शिक्षा के स्तर -

वर्तमान समय में शिक्षा के चार स्तर है प्रारंभिक, प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च। जो कि (5+3+3+4) प्रणाली पर आधारित है। बालकों को चार स्तर की शिक्षा दी जाती है। प्रारंभिक स्तर पर पहले पाँच साल की शिक्षा में पहले 3 साल प्री प्राइमरी की शिक्षा के साथ कक्षा एक और दो को शिक्षा दी जाएगी। प्राथमिक स्तर पर 3 साल की शिक्षा में कक्षा तीन, चार, पांच को शिक्षा दी जाएगी। माध्यमिक स्तर पर 3 साल की शिक्षा में कक्षा छः सात, आठ की शिक्षा दी जाएगी। उच्च स्तर पर 4 साल की शिक्षा में कक्षा नौ, दस, ग्यारह, बारह को शिक्षा दी जाएगी।

अनुशासन -

वर्तमान में अनुशासन को बालक के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है। अनुशासन दमनात्मक न होकर प्रभावित करने वाला होता है। अनुशासन में बालक को नियन्त्रित स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है, जिससे उसमें आत्मानुशासन की भावना विकसित होती है।

शिक्षण विधियाँ -

वर्तमान की आधुनिक विचार धारा में बालक के सर्वांगीण विकास हेतु खेल विधि, करके सीखने की विधि तथा योजना आदि विधियों का प्रयोग किया जाता है, जिससे बालक का वास्तविक

विकास होता है, क्योंकि यह माना जाता है कि सभी बच्चों को एक ही शिक्षण विधि से नहीं पढ़ाया जा सकता।

शिक्षक -

वर्तमान में शिक्षक एक मित्र, दार्शनिक तथा पथ-प्रदर्शक समझा जाता है, जिससे यह उम्मीद की जाती है कि वह बालकों के साथ सहानुभूति पूर्ण तथा व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके उनका संतुलित विकास कर सके।

शिक्षार्थी -

वर्तमान में शिक्षा बाल केन्द्रित हैं अर्थात् शिक्षण कार्य में शिक्षक या पाठ्यक्रम को महत्त्व न देकर बालक को महत्त्व दिया जाता है, यदि बालक किसी पाठ्यवस्तु को नहीं समझ पा रहा है, तो उसके लिए शिक्षक या पाठ्यक्रम जिम्मेदार है। आधुनिक शिक्षा में शिक्षक या पाठ्यक्रम को महत्त्व न देकर बालक को महत्त्व दिया जाता है, अर्थात् बालक केन्द्र बिन्दु में होता है।

विद्यालय -

आधुनिक काल में स्कूल को समाज का लघु रूप माना जाता है। शिक्षा को एक उद्योग तथा शिक्षक को इस शिक्षा रूपी उद्योग का व्यवस्थापक समझा जाता है. जो बालकों के लिए सीखने की व्यवस्था करता है।

अनुसंधान विधि -

अनुसंधान की विभिन्न विधियों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है। सामान्यतः अनुसंधान विधियाँ ऐतिहासिक विधि, वर्णनात्मक विधि तथा प्रयोगात्मक विधि आदि नामों से जानी जाती हैं। समस्या की प्रकृति के आधार पर अनुसंधान विधि का प्रयोग किया जाता है। प्रस्तुत शोध कार्य **बौद्ध कालीन शिक्षा की वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता** एक ऐतिहासिक विषय है और इसमें वर्तमान शिक्षा की स्थिति का भी अध्ययन किया गया है। अतः इस शोध कार्य में ऐतिहासिक और वर्णनात्मक प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

अनुसंधान सामग्री के स्रोत -

अनुसंधान सामग्री के स्रोत दो प्रकार के हो सकते हैं -

- **प्राथमिक स्रोत -** प्राथमिक स्रोत में अनुसंधान सामग्री के मूलस्रोत आते हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन में बौद्धकालीन शिक्षा के त्रिपिटिक, मिलिन्द पन्हो, अश्वघोष की बुद्धचरित आदि की सहायता ली गई है।
- **द्वितीय स्रोत -** द्वितीय स्रोत की सामग्री अनुसन्धानकर्ता दूसरों के प्रयोग अथवा अनुसंधान से प्राप्त करता है। इस कारण इसे द्वितीय स्रोत कहते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत शोध कार्य बौद्धकालीन शिक्षा की आज के संदर्भ में प्रासंगिता में ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया है। यह शोध कार्य प्राथमिक एवं द्वितीय दोनों स्रोतों पर आधारित है।

बौद्ध शिक्षा -

गौतम बुद्ध का जन्म 563 ई० पू० में हुआ। गौतम बुद्ध का नाम सिद्धार्थ था, पिता का नाम शुद्धोधन तथा माता का नाम महामाया था। जब महामाया अपने घर देवदह जा रही थी, तो रास्ते में लुम्बिनी वन में सिद्धार्थ का जन्म हुआ। यह स्थान नेपाल की तराई क्षेत्र में कपिलवस्तु और देवदह के बीच था। सिद्धार्थ के जन्म के सात दिन बाद ही उनकी माता का देहान्त हो गया, फिर उनकी मौसी गौतमी ने उनका लालन-पालन किया, 16 वर्ष की आयु में सिद्धार्थ का विवाह यशोधरा से हो गया। राजा शुद्धोधन ने सिद्धार्थ के लिए महल में सारी भौतिक सुविधायें उपलब्ध करायी, क्योंकि बचपन में सन्यासियों ने सिद्धार्थ के सम्बन्ध में यह भविष्यवाणी की थी कि यह बालक भविष्य में या तो एक चक्रवर्ती राजा बनेगा या प्रसिद्ध सन्यासी बनेगा। सन्यासी बनने के डर से सिद्धार्थ को सभी सांसारिक दुःखों से दूर रखा गया, लेकिन 29 वर्ष की आयु तक सिद्धार्थ को जीवन से विरक्ति पैदा हो गई और 29 वर्ष की आयु में अपना घर त्याग कर एक सन्यासी बन गये। छः वर्ष की कठोर तपस्या के बाद उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई। ज्ञान प्राप्ति के बाद उन्होंने कहा कि जीवन में दुःख है, दुःख का कारण है और दुःख का निवारण है और एक स्थिति ऐसी आती है, जब दुःख कम हो जाता है। बुद्ध ने पंचशील अर्थात् पाँच प्रतिज्ञायें बताई, जैसे-चोरी न करना, झूठ न बोलना, किसी महिला से व्यभिचार न करना, जीव हत्या न करना तथा मादक पदार्थों से दूर रहना। बुद्ध ने दुःखों से मुक्ति हेतु आष्ट्रांगिक मार्ग बताये, जैसे - सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक वाक्, सम्यक् कर्म, सम्यक आजीव, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति एवं सम्यक् समाधि। बुद्ध के प्रवचनों को सुनकर उनके भिक्षुओं की संख्या बढ़ने लगी। बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी उनके शिष्य बनने लगे। बुद्ध के पुत्र राहुल भी भिक्षु बन गये। भिक्षुओं की संख्या बढ़ने पर बौद्ध संघों की स्थापना की गई। बाद में स्त्रियों को भी संघ में प्रवेश दिया गया। बुद्ध ने लोगों के कल्याण हेतु अपने उपदेशों को भिक्षुओं के माध्यम से दूर-दूर तक भेजा, 80 वर्ष की आयु में 483 ई०पू० कुशीनगर में उनका देहान्त अर्थात् परिनिर्वाण हो गया।

बौद्धकालीन शिक्षा का अर्थ -

बुद्ध के अनुसार शिक्षा एक ऐसी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है, जो मनुष्य को लौकिक एवं पारमार्थिक दोनों जीवन के योग्य बनाती है। उनके अनुसार वास्तविक शिक्षा वह है, जो मनुष्य को निर्वाण की प्राप्ति कराये।

बौद्धकालीन शिक्षा के उद्देश्य -

लौकिक दृष्टि से मनुष्य के शारीरिक, बौद्धिक, चारित्रिक, नैतिक तथा आर्थिक विकास पर बल दिया है और पारमार्थिक दृष्टि से मनुष्य के निर्वाण की प्राप्ति के लिए चार आर्य सत्यों, पंचशील, आष्ट्रांगिक मार्ग और त्रिरत्न की उपलब्धि पर बल दिया है।

- **ज्ञान का विकास -** महात्मा बुद्ध के अनुसार इस संसार के समस्त दुःखों का कारण अज्ञान है अतः उन्होंने निर्वाण की प्राप्ति के लिए सच्चे ज्ञान के विकास

पर बल दिया। बौद्ध शिक्षा का यह प्रमुख उद्देश्य एवं आदर्श था। परन्तु ज्ञान से उनका तात्पर्य कुछ भिन्न था। वैदिक काल में वेद ग्रन्थों के ज्ञान को सच्चा ज्ञान माना जाता था, आज सामान्यतः वस्तु जगत के स्पष्ट ज्ञान को ज्ञान माना जाता है, परन्तु बौद्ध धर्म दर्शन में चार आर्य सत्यों 1-दुःख है 2-दुःख समुदाय 3-दुःख निरोध 4- दुःख निरोध गामिनी प्रतिपद।

- **सामाजिक आचरण की शिक्षा -** बौद्ध धर्म मानवमात्र के कल्याण का पक्षधर है, यही कारण कि इसमें सबसे अधिक बल करुणा, दया, मानवमात्र के कल्याण के लिए है। मनुष्य, एक दूसरे मनुष्य के दुःखों को तब तक नहीं समझ सकता है जब तक जिसके अन्तःकरण में करुणा भाव नहीं आ जाते अर्थात् जब तक मनुष्य एक दूसरे के दुःखों को पनाह न दे।
- **मानव संस्कृति का संरक्षण एवं विकास -** बौद्ध धर्म मानव जाति विशेष की नहीं, मानवमात्र की संस्कृति के संरक्षण एवं विकास का पोषक है। यही कारण है कि बौद्ध मठों एवं विहारों में बौद्ध धर्म एवं दर्शन के साथ अन्य धर्मो, दर्शनों और संस्कृतियों के अध्ययन की भी व्यवस्था थी। उस काल में सैंकड़ों विद्वान प्राचीन साहित्य के संरक्षण और नवीन साहित्य के निर्माण कार्य में लगे थे। ये प्राचीन ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार करते थे और भिन्न-भिन्न भाषाओं में उनका अनुवाद करते थे।

प्राथमिक स्तर की पाठ्यचर्या -

बौद्ध शिक्षा प्रणाली में प्राथमिक शिक्षा की अवधि 6 वर्ष थी। इस स्तर पर सर्वप्रथम सिद्धहस्त नामक पोथी के द्वारा 49 अक्षरों का ज्ञान कराया जाता था. और इसके बाद भाषा का पढ़ना-लिखना सिखाया जाता था। तत्पश्चात् शब्द विद्या, शिल्प विद्या, चिकित्सा विद्या, हेतु विद्या और अध्यात्म विद्या नामक विज्ञान पढ़ाए जाते थे। इस स्तर पर बच्चों को बौद्ध धर्म की सामान्य शिक्षाओं का ज्ञान भी कराया जाता था। साथ ही कुछ कला-कौशलों की सामान्य शिक्षा का शुभारम्भ कर दिया जाता था।

उच्च स्तर की पाठ्यचर्या -

बौद्ध शिक्षा प्रणाली में उच्च शिक्षा की अवधि सामान्यतः 12 वर्ष थी। इस अवधि में छात्रों को सर्वप्रथम व्याकरण, धर्म, ज्योतिष, आयुर्विज्ञान और दर्शन का सामान्य ज्ञान कराया जाता था और उसके बाद विशिष्ट शिक्षा शुरु की जाती थी। विशिष्ट शिक्षा की पाठ्यचर्या में पाली, प्राकृत और संस्कृत भाषा और इन भाषाओं के व्याकरण एवं साहित्य, खगोल शास्त्र, नक्षत्र शास्त्र, न्याय शास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, कला (चित्रकला, मूर्तिकला और संगीत), कौशल (कताई, बुनाई और रंगाई आदि), व्यवसाय (कृषि, पशुपालन एवं वाणिज्य आदि), भवन निर्माण विज्ञान, आयुर्विज्ञान, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, वैदिक धर्म, ईश्वर शास्त्र, तर्क, दर्शन और ज्योतिष, इन सब विषयों एवं क्रियाओं को स्थान दिया गया था।

भिक्षु शिक्षा की पाठ्यचर्या -

बौद्ध शिक्षा प्रणाली में भिक्षु शिक्षा की अवधि सामान्यतः 8 वर्ष थी, परन्तु जो भिक्षु बौद्ध धर्म-दर्शन का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे, वे अपना अध्ययन आगे भी जारी रख सकते थे। यूँ तो इन्हें केवल बौद्ध धर्म एवं दर्शन का ही ज्ञान कराया जाता था और उसके लिए इनकी पाठ्यचर्या में बौद्ध साहित्य त्रिपटक, सुवन्त, विनय और धम्म को रखा गया था, परन्तु धर्म के तुलनात्मक अध्ययन हेतु वैदिक धर्म का भी ज्ञान कराया जाता था। साथ ही उन्हें भवन निर्माण और मठों एवं विहारों की सम्पत्ति का लेखा-जोखा रखना सिखाया जाता था।

अब थोड़ा विचार करें लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा पर। यूँ तो प्रारम्भ में ये दोनों प्रकार की शिक्षाएँ सभी को दी जाती थीं परन्तु आगे उच्च शिक्षा स्तर पर लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा में विशेष योग्यता प्राप्त करने का प्रावधान था।

1. **लौकिक पाठ्यचर्या -** इसके अन्तर्गत पठन, लेखन, गणित, कला-कौशल और व्यावसायिक शिक्षा (कृषि, पशुपालन, चिकित्सा और वाणिज्य आदि) दी जाती थी।
2. **धार्मिक पाठ्यचर्या -** धार्मिक पाठ्यचर्या को हम दो भागों में बाँट सकते हैं सामान्य छात्रों और भिक्षुओं। सामान्य छात्रों के लिए बौद्ध, जैन और वैदिक धर्मों के अध्ययन की सुविधा उपलब्ध थी। भिक्षुओं की धार्मिक शिक्षा थोड़ी विस्तृत थी। उन्हें बौद्ध साहित्य त्रिपटक, सुवन्त, विनय और धम्म का विशेष अध्ययन करना होता था, बौद्ध धर्म की तुलना हेतु वैदिक धर्म का अध्ययन करना होता था, मठों के निर्माण का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना होता था और मठों एवं विहारों की सम्पत्ति का लेखा-जोखा रखना सीखना होता था। बौद्धकालीन शिक्षा के स्तर शिक्षा के दो स्तर थे। प्राथमिक स्तर तथा उच्च स्तर। प्राथमिक स्तर पर लिखना-पढ़ना तथा साधारण गणित का अध्ययन कराया जाता था। उच्च स्तर पर धर्म, दर्शन एवं चिकित्सा आदि का ज्ञान दिया जाता था।

बौद्धकालीन पाठ्य-सहगामी क्रियायें-

पाठ्यक्रम में पाठ्य सहगामी क्रियाओं को सम्मिलित किया गया था, जिनमें चौपड़, रेखा-चित्र बनाना, गेंद खेलना, तुरही बजाना, हल चलाने की नकल करना, रथों की दौड़ एवं धनुष-बाण प्रतियोगिता आदि थे।

बौद्धकालीन शिक्षा में अनुशासन -

गुरू एवं शिष्य दोनों संघ के आश्रित होते थे। संघ की सत्ता सर्वोपरि थी। प्रत्येक

शिक्षक एवं शिक्षार्थी को संघ के नियमों का पालन करना पड़ता था। संयमी जीवन को अनुशासन माना जाता था।

बौद्धकालीन शिक्षा में शिक्षक -

शिक्षक चार आर्य सत्यों को जानने वाले को कहते हैं और आष्ट्रांगिक मार्ग का अनुसरण करता है, 10 वर्ष के अनुभवी भिक्षु ही शिक्षा दे सकते थे। शिक्षक शुद्ध आचरण, पवित्र विचार, विनम्रता और मानसिक क्षमता से परिपूर्ण होता था।

बौद्धकालीन शिक्षा में शिक्षार्थी -

शिक्षार्थी मठ तथा बिहारों में अपने माता-पिता की आज्ञा से शिक्षा ग्रहण करते थे। ऐसे विद्यार्थी को प्रवेश नहीं मिलता था, जो संक्रामक रोग से पीडित हो, घोर नैतिक अपराधी हो, अविनम्र, दुराचारी एवं पलायनकरने आदि हो। संघ में प्रवेश के समय विद्यार्थी को दस आदेश दिये जाते थे। ये दस आदेश दस सिक्खा पदानि कहलाते थे। प्रत्येक छात्र को इनका पालन करना होता था।

बौद्धकालीन शिक्षा में विद्यालय -

बौद्धकालीन शिक्षा मठों और बिहारों में चलती थी। ये ही इस समय के विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय थे। ये विद्यालय संघ पर आश्रित थे। संघ सर्वोपरि थे, 8 वर्ष की आयु में पब्वज्जा संस्कार के साथ बच्चे का मठ अथवा बिहार में प्रवेश होता था।

बौद्ध शिक्षा की शिक्षण विधियाँ -

बौद्ध शिक्षा में व्याख्यान शिक्षण विधि, वाद-विवाद विधि, पर्यटन विधि, सूत्र विधि तथा स्वाध्याय विधि आदि शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाता था।

बौद्धकालीन शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में बौद्ध शिक्षाओं की प्रासंगिकता -

बौद्ध शिक्षाएँ आज भी प्रासंगिक है, बौद्धकालीन शिक्षा मानव कल्याण हेतु है। बुद्ध ने अपने व्यक्तिगत अनुभव से दुःख को पहचाना एवं इससे मुक्ति हेतु सही मार्ग बताया। बुद्ध के बताये मार्ग पर चलकर मनुष्य अपने दुःखों से मुक्ति पा सकता है। मनुष्य का मनुष्य के प्रति भेदभाव बौद्धकालीन शिक्षा के माध्यम से दूर किया जा सकता है। बुद्ध का पंचशील, मनुष्य को सत्य बोलने, झूठ न बोलने, किसी स्त्री से व्यभिचार न करने, जीव हत्या न करने तथा मादक पदार्थों से दूर रहने की प्रतिज्ञा करता है। इन प्रतिज्ञाओं का पालन करते हुए व्यक्ति अपने आप को श्रेष्ठ बना सकता है। बुद्ध के बताये आष्टांगिक मार्ग पर चलकर मनुष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। आज कल मनुष्य नैतिक मूल्यों से गिरता जा रहा है, यदि वह बौद्धकालीन शिक्षा का अनुसरण करें, तो वह अपना, अपने परिवार का तथा समाज का कल्याण करते हुए एक अच्छे समाज का निर्माण कर सकता है।

निष्कर्ष -

बौद्ध धर्म के शैक्षिक विचारों में समाज को सशक्त बनाने के लिए विशेषतः सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, त्याग, परोपकार, सहानुभूति, संयम एवं सेवा भावना आदि का मनुष्य में विद्यमान होना अति आवश्यक है। गौतम बौद्ध के शैक्षिक विचारों में, बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय के लोक कल्याणकारी आदर्श विद्यमान है। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं में मनुष्य के कल्याण हेतु लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के विषयों एवं क्रियाओं को स्थान दिया गया है। शिक्षा द्वारा मनुष्य को किसी कला-कौशल, उद्योग अथवा व्यवसाय में प्रशिक्षित करने की शुरूआत तो हमारे देश में बुद्ध काल में ही हो गई थी, परन्तु इसे व्यवस्थित रूप बौद्ध शिक्षा ने दिया। निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि भारत में शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक संगठन, विद्यालय, विश्वविद्यालय एवं समूह शिक्षण का प्रारम्भ बौद्ध कालीन शिक्षा में हुआ। बौद्धकालीन शिक्षा ने वर्तमान शिक्षा की नींव रखी। इसी के साथ-साथ बौद्ध शिक्षा ने जन शिक्षा, स्त्री शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा की भी नींव रखी। बौद्ध शिक्षा जन्म के आधार पर मनुष्य में भेद नहीं करती है। उन्होंने सभी के लिए प्रारम्भिक शिक्षा का प्रावधान किया था। जन शिक्षा का समर्थन किया। कहा जा सकता है कि बौद्ध शिक्षा आज के संदर्भ में बहुत प्रासंगिक है। बौद्ध शिक्षा से समाज में समरसता एवं लोगों के बीच मधुर सम्बन्ध कायम किये जा सकते हैं।

सन्दर्भ -

- रमन बिहारी लाल - भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्यायें।
- पी.डी. पाठक, गुरसरनदास-भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
- राम शकल, जोशी - भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास, अग्रवाल प्रकाशन।
- राकेश - भारतीय शिक्षा का इतिहास, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
- भटनागर, सुरेश, कुमार, - भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, आर० लाल बुक डिपो, मेरठ।
- सिंह, गया - भारत में शैक्षिक पद्धति का विकास, आर०लाल बुक डिपो, मेरठ।
- त्यागी, गुरसरनदास - भारतीय शिक्षा का परिदृश्य, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- मित्तल, आर०ए०, अग्रवाल - आधुनिक भारतीय शिक्षा एवं समस्यायें, मॉडर्न पब्लिशर्स, मेरठ।
- वर्मा, जी.एस - भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास, लायल बुक डिपो, मेरठ।
- भीमरायः अंबेडकर - भगवान बुद्ध और उनका धम्म, सिद्धार्थ प्रकाशन, मुम्बई।
- लाल, रमन बिहारी, पलोड, सुनीता- शैक्षिक चिंतन एवं प्रयोग, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।

• छात्राध्यापिका,
बी.एड्. प्रथम सेमेस्टर
चन्द्रकान्ति रमावती देवी आर्य
महिला पी. जी. कालेज, गोरखपुर

पालि धम्मपदट्ठकथा में अभिव्यक्त बौद्ध शिक्षा एवं दर्शन का आधुनिक संदर्भ में मूल्यांकन

कृष्ण कुमार शाह

बौद्ध धर्म एवं दर्शन त्रिपिटक में समाहित है। त्रिपिटक कोई स्वतंत्र ग्रंथ न होकर पालि बौद्ध धर्म एवं दर्शन के ग्रंथों का समूह है, जिसे विषय के आधार पर तीन भागों में सुत्त पिटक, विनय पिटक और अभिधम्म पिटक में बाँटा गया हैं। इसमें सुत्त पिटक के अंतर्गत पाँच निकाय-दीघ निकाय, मज्झिम निकाय, संयुक्त निकाय, अङगुत्तर निकाय, खुद्दक निकाय हैं। इन पाँचों निकायों के अंतर्गत अनेक वग्ग (वर्ग), सुत्त (सूत्र) एवं स्वतंत्र ग्रंथ समाहित हैं। इनमें खुद्दक निकाय का विशेष महत्व है, जिसमें सुत्तों के संग्रह के साथ-साथ छोटे-बड़े स्वतंत्र ग्रंथ हैं। खुद्दक निकाय में संग्रहित ग्रंथों की संख्या पन्द्रह हैं। यह निकाय सुत्त पिटक के अन्य चार निकायों से भिन्न है। इसमें मुख्य रूप से पद्यात्मक और कुछ गद्य-पद्य मिश्रित रचनाएँ मिलती हैं। भाषा और शैली की दृष्टि से भी इसके ग्रंथ अन्य निकायों से अलग एवं वैविध्य पूर्ण हैं। इन स्वतंत्र ग्रंथों में धम्मपद का विशेष स्थान है। धम्मपद बौद्ध वांड्मय की अमूल्य निधि है। इसमें समय-समय पर बुद्ध द्वारा दिए गए वचनों का संकलन है। बुद्ध ने परिनिर्वाण के बाद लगभग पैंतालीस वर्षों तक घूम-घूमकर उपदेश दिया। ये उपदेश अनेक कथानकों पर आधारित हैं एवं अनेक श्रोताओं को लक्ष्य करके कहे गए हैं। ये उपदेश बौद्ध धर्म के मूल हैं। बौद्ध धर्म एवं दर्शन का मूल सिद्धांत संक्षिप्त रूप में इसमें समाहित है। धम्म पदट्ठ कथा इसी लोक प्रसिद्ध ग्रंथ धम्म पद पर लिखी गई अट्ठकथा है। इसे धम्म पद की व्याख्या कही जा सकती है। इसमें धम्म पद के प्रत्येक श्लोक को कथा के माध्यम से समझाया गया है।

धम्म शब्द से धर्म, अनुशासन, नियम आदि का तात्पर्य लिया जाता है और पद का अर्थ वक्तव्य या पथ से किया जाता है। इस प्रकार धम्मपद का अर्थ सत्य-सबंधी वक्तव्य या सत्य का मार्ग है। अट्ठकथा को अत्थ वण्णना, अत्थ सवण्णना एवं वण्ण नाभी कहा जाता है। त्रिपिटक में वर्णित अट्ठ कथाओं के प्राचीन रूप को निद्देस एवं विभंग अट्ठकथा कहा जाता है। पालि अट्ठकथा से आशय अर्थ की कथाएँ, अर्थ की व्याख्या है। दीघ निकाय की अट्ठ कथा सुमंगल विलासिन की लक्खण सुत्तवण्णना में इसे स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि **अत्थकथंति अत्थयुत्तं कथं।** अतः जिस अर्थ में बुद्ध ने उपदेश दिया, उसे बताना तो अट्ठ कथाओं का उद्देश्य है ही, परंतु सहायतार्थ वे उस परिस्थिति को, संदर्भ को, भी स्पष्ट करती हैं, जिसमें बुद्ध ने कभी किसी को कोई उपदेश दिया।

धम्म पदट्ठकथा में धम्मपद के 423 गाथाओं पर कथा है। ये कथाएँ जातक कथाओं के समान ही हैं। गाथाओं के संशय को दूर करने के लिए जातक कथा के समान ही धम्म पदट्ठकथा में गाथाओं की व्याख्या, पच्चूप्पन्नवत्थु, अतीतवत्थु, वैयाकरण एवं अनुसंधि दी हुई है। धम्मपदट्ठ कथा की प्रत्येक कथा के पहले ही यह लिखा हुआ है कि बुद्ध ने यह गाथा एवं कथा अमुक समय, अमुक स्थान में, अमुक व्यक्ति को, अमुख घटना के संदर्भ में कही थी। इसके बाद कथा प्रारंभ होती है और कथा का अंत गाथाओं के साथ होता है। जिसमें स्वतः ही गाथाओं की व्याख्या हो जाती है। कथा के उपसंहार में यह कहा जाता है कि इस कथा एवं गाथा से हजारों व सैंकड़ों श्रोताओं को धर्म लाभ मिला तथा भिक्षुओं को उपसंपदा एवं अर्हत्त्व आदि की प्राप्ति हुई। इसकी अनेक कथाओं में कथा उत्पन्न होने के कारण से पूर्व अतीत की कथा कही गई है। बुलिंगम ने अपनी पुस्तक बुद्धिस्ट लीजेंडस की भूमिका में लिखा है कि वैदिक अथवा संस्कृत टीकाओं में कथा के उल्लेख का प्रयोजन, शब्दों और मूलपाठ की व्याख्या करना तथा उसके अर्थ को कथा के द्वारा उदाहरण देकर स्पष्ट करना होता है, और कथा भाग गौण होता है, किंतु बौद्ध अट्ठकथाओं में यह बिल्कुल उल्टा हो जाता है। धम्म पदट्ठकथा के रचनाकार आचार्य बुद्ध घोष माने गये हैं। धम्म पदट्ठकथा के अंत में परिचयात्मक उपसंहार में स्पष्ट रूप से आचार्य बुद्धघोष को इस अट्ठकथा का रचयिता कहा गया है- **विपुलविसुद्धबुद्धिना बुद्धघोष इति कतायं धम्मपदट्ठकथा।**

जी.पी. मललसेकर अपनी पुस्तक दि पालि लिटरेचर ऑफ सीलोन में पूजावलिय का उल्लेख करते हुए कहा है कि आचार्य बुद्धघोष ने धम्म पदट्ठकथा राजा सिरिनिवास और मंत्री महानिगम की प्रार्थना करने पर लिखा था। पाश्चात्य विद्वान बुलिंगम ने धम्म पदट्ठकथा के नरक कुण्डकी कथा का अंतः साक्ष्य देते हुए इसका समय 450 ई. निश्चित किया है।

बुलिंगम ने यह साक्ष्य बाल वग्ग के अन्यतर पुरूष की कथा के आधार पर दिया है। डॉ0 शिवचरण लाल जैन धम्म पदट्ठकथा को 425 ई0 से 430 ई0 के बीच की रचना मानते हैं। धम्म पदट्ठकथा में व्याख्या का महत्व गौण और कथा प्रमुख हो गई है। यह कथात्मक अट्ठकथाओं के समान नाम और अकार मात्र की अट्ठकथा है। वास्तव में यह पौराणिक एवं लोक कथाओं का वृहत संग्रह है। इसमें प्राचीन

भारतीय सामाजिक संरचना का स्वरूप प्राप्त होता है।

समाज के गठन की नींव मूल्यों पर आधारित है। मूल्यों के द्वारा ही समाज का निर्माण हुआ है। समाज निर्माण के पीछे उद्देश्य यही रहा है कि मनुष्य अपने जीवन को सुचारु रूप से चलाने एवं एक दूसरे का सहयोग करते हुए अपने अस्तित्व की रक्षा करेगा। इसके लिए समाज ने विभिन्न नियम बनाये, इन नियमों से आगे चलकर नैतिक मूल्यों का भी निर्माण हुआ। मानव द्वारा निर्मित ये नैतिक मूल्य मानवता, सेवा-भाव एवं किसी भी जीव-जंतु आदि को नुकसान न पहुँचाने के भाव से प्रेरित था। एक आदर्श एवं स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए नैतिक मूल्यों का होना अनिवार्य था। मूल्य के निर्माण काल, स्थान, परिवेश एवं परिस्थिति का विशेष महत्व रहता है। मूल्य परिवर्तन शील है, जो काल, परिवेश, परिस्थिति के अनुसार बदलता है। कुछ ऐसे मूल्य हैं जिसमें परिवर्तन की संभावना कम होती है, ऐसा नहीं कह सकते कि वह परिवर्तित नहीं होता है। इस प्रकार के मूल्य नैतिकता से संबंधित होते हैं। इन नैतिक मूल्यों के अंतर्गत मुख्यतः चोरी न करना, असत्य वचन न बोलना, मदिरा का सेवन न करना, हिंसा से दूर रहना, व्यभिचार से दूर रहना, मदिरा आदि नशीले पदार्थ का सेवन न करना आदि आते हैं। इन नैतिक मूल्यों का निर्वाह कर मनुष्य एक स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकता है।

बौद्ध धर्म मूलतः आचरण की शिक्षा देने वाला धर्म है। इस धर्म में सदाचार और नैतिकता का विशेष महत्त्व है। आधुनिक समाज में मानवीय नैतिक मूल्यों का ह्रास सबसे अधिक हुआ है। धम्म पदट्ठकथा की अनेक कथाओं में प्राचीन सामाजिक मूल्यों से संबंधित प्रमुख जानकारी प्राप्त होती है। मट्ठकुण्डलीवत्थु में माणवक एक ब्राह्मण को बौद्ध धर्म एवं संघ के प्रति आस्था रखने एवं उसकी आराधना करने के लिए प्रेरित करते हुए कहता है कि -

पाणणातिपाता विरमुस्स खिप्पं,
लोके अदिन्नं परिवज्जयस्सु ।
अमज्जपो मा च मुसा भाणामि,
सकेन दारेन च होमि तुट्ठो ।

अर्थात् तत्काल ही तुम सभी प्रकार की हिंसा, चोरी से सर्वथा दूर हो जाओ। न मद्यपान करो, न असत्य भाषण करो, न व्यभिचार करो, अपितु अपनी धर्म पत्नी से ही संतुष्ट रहो। ये पंचमकार बौद्ध धर्म के मूल्य ही थे।

समाज का निर्माण परिवार से होता है एवं पारिवारिक नियमों के अनुरूप चलना तत्कालीन मनुष्य का परम कर्तव्य था। परिवार में बड़े का आदर करना, माता-पिता बड़े भाई की आज्ञा का पालन करना, विवाह आदि अनुष्ठान बड़े-बुजुर्गों की आज्ञा अनुसार करना इत्यादि पारिवारिक मूल्य थे। इन्हीं पारिवारिक मूल्यों से सामाजिक मूल्य निर्मित होते हैं। बौद्ध धर्म में जीव हिंसा एवं किसी भी प्रकार की हिंसा को उचित नहीं माना गया। हिंसा त्यागने एवं हिंसा से दूर रहने का संदेश बुद्ध देते हैं। धम्मपदट्ठ कथा कालीन समाज में मानवता एवं नैतिक मूल्यच्युत होने लगे थे। बौद्ध धर्म के उद्देश्यों में एक उद्देश्य इन मूल्यों को बचाना भी था। धम्मपदट्ठ कथा की कथाओं में तथागत बुद्ध द्वारा ऐसे मूल्यों के प्रति चेतना जगाने का प्रयास देख जा सकता है। अनत्थपुच्छक ब्राह्मण की कथा में शास्ता ये उपदेश देते हैं कि -

उस्सूरसेय्यं आलस्यं,
चण्डिक्कं दीघसोण्डियं।
एकस्सद्धानगमनं, परदारूपसेवनं ।
एतं ब्राह्मण सेवस्सु,
अनत्थं ते भविस्सती।। ति ।।

अर्थात् सूर्योदय के बाद सोये रहना, आलस्य करना, क्रूरता करना, अधिक मद्यपान करना, एकाकी ही लम्बी यात्रा, परस्त्री के साथ व्यभिचार ऐसे कार्य जो करता है उसका अनर्थ अवश्य होगा। वर्तमान समाज में भी नैतिक मूल्य का पतन हो रहा है। बौद्ध शिक्षा द्वारा मानवीय संवेदना एवं नैतिकता को बचाया जा सकता है।

धम्म पदट्ठकथा में बौद्ध दर्शन के प्रतीत्य समुत्पाद का सिद्धांत और कर्म सिद्धांत का प्रतिपादन मूलरूप से हुआ है। इन दार्शनिक सिद्धांतों में स्वतः ही वर्तमान वैज्ञानिक चिंतन के अंश प्राप्त होते हैं। बौद्धिसत्व की प्राप्ति के बाद बुद्ध ने यह घोषण मुझे शीतलता प्राप्त हो गई है, मुझे निर्वाण प्राप्त हो गया है। सत्य के स्थापना के लिए मैं काशी नगरी जाता हूँ, मैं दुनिया के अंधकार में अमर सत्य का नगाड़ा बजाऊंगा। जिस सत्य का उन्हें बोध हुआ वह चार आर्य सत्य है। बौद्ध धम्म एवं साहित्य का दार्शनिक आधार यही चार आर्य सत्य है। बुद्ध ने माना संसार दुःखमय है, दुःख का कारण है, दुःख का निरोध संभव है, दुःख निरोध का मार्ग है। बौद्ध धम्म एवं साहित्य का संपूर्ण दर्शन इसी चार आर्य सत्य में छिपा है। बुद्ध ने निर्वाण के लिए चार आर्य सत्यका सिद्धांत दिया है। इसी से बौद्ध दर्शन का प्रतीत्य समुत्पाद का सिद्धांत अर्थात् प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति किसी दूसरे वस्तु के उत्पत्ति पर निर्भर है।

तथागत बुद्ध के उपदेश का प्रमुख लक्ष्य ही दुःख से मुक्ति पाना है। वस्तुतः यह ग्रंथ दुःख से मुक्ति का मार्ग बतलाता है। जिसमें दुःख, दुःख के कारण, दुःख का निवारण एवं दुःख से मुक्ति का मार्ग सभी निहित है। धम्म पदट्ठकथा में बुद्ध ने मनुष्य के जीवन से जुड़े अनेक उदाहरणों द्वारा अपने विचारों को स्पष्ट किया है। इसके महत्त्व के संदर्भ में डॉ. विमलाचरण लाहा कहती है - इसमें नीति-संबंधी सभी आदर्श निहित हैं, जो भारतीय संस्कृति और समाज की सामान्य संपत्ति है। तथागत बुद्ध ने दुःख निरोध के मार्ग नामक चौथे आर्य सत्य में दुःख से मुक्ति का मार्ग बताया है। इस मार्ग के आठ अंग है इसे अष्टांगिक मार्ग कहा जाता है।

ये आठ अंग सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वाक्, सम्यक कर्मान्त, सम्यक आजीव, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि हैं। अष्टांगिक मार्ग

बौद्ध धर्म का आचार मार्ग है। बौद्ध धर्म में यह कथन है कि मार्गों में सबसे श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग है मग्गानं अट्ठांगि को सेट्ठो। बुद्ध ने अपने प्रथम उपदेश में धर्मचक्र-प्रवर्तनमें इसी मार्ग का उपदेश दिया है। शील, समाधि और प्रज्ञा बौद्ध धर्म की आधार-शिला मानी जाती है, जिसके माध्यम से दुःख का निरोध किया जा सकता है। शील से यहाँ आशय पापों का न करना, सभी अकुशल कर्मों का नहीं करना, अकुशल कर्मों की ओर प्रवृत्ति न करना एवं तृष्णा का निरोध है। तृष्णा के निरोध से समस्त सांसारिक बाधाएँ समाप्त हो जाती है, क्लेशों से मुक्ति मिल जाती है। शील के प्राप्ति से भिक्षु अहर्त्त्व प्राप्ति के लिए आगे बढ़ता है। इसी के माध्यम से भिक्षु स्रोत आपन्न, सकृदागामी, अनागामी और अहर्त्त्व को प्राप्त करता है। समाधि से आशय कुशल चित्त की एकाग्रता है। समाधि से चित्त एकाग्र और शांत हो जाता है। इससे मन के सभी अकुशल वृत्तियों का नाश हो जाता है और मन कुशल कर्मों की ओर केन्द्रित होने के कारण प्रज्ञा का लाभ प्राप्त होता है। शील और समाधि से ही प्रज्ञा की प्राप्ति होती है और अविद्या का नाश होता है। दुःख निरोध के आठों मार्ग शील, समाधि और प्रज्ञा में ही समाहित हैं। शील के अंतर्गत सम्यक दृष्टि और सम्यक संकल्प, प्रज्ञा के अंतर्गत सम्यक वाक्, सम्यक कर्मान्त, सम्यक आजीव और समाधि के अंतर्गत सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि समाहित है।

चौथे आर्य सत्य दुःख निरोध का मार्गमें सम्यक दृष्टि, सम्यक सकल्प, सम्यक वाणी, सम्यक आजीव आदि की नैतिक पथ पर चलने के लिए बुद्ध कहते हैं। स्पष्ट है कि इन सभी नैतिक आदर्शों का बुद्ध कालीन समाज में हनन हो रहा था। निदान, जातक एवं धम्म पद आदि की कथाओं में इसे स्पष्ट देखा जा सकता है। बुद्ध को यह लगा कि विकृत हो चुके समूचे समाज को नैतिकता एवं इन आदर्शों का पाठ पढ़ना असंभव है इसके लिए प्रयत्न व्यर्थ है, इसीलिए उन्होंने जनता से कहा कि दुःख से मुक्ति पाने के लिए पब्बज्जा तथा उपसम्पदा आदि दीक्षाएँ ग्रहण करें। पब्बज्जा का अर्थ है बाहर जाना अर्थात वास्तविक समाज से बाहर जाना और उपसम्पदा का अर्थ है प्रवेश करना अर्थात् संघ में प्रवेश करना। स्पष्ट है भिक्षु संघ की स्थापना का उद्देश्य उस पुरानी कबायली सामूहिक जीवन को पुनर्जीवित करना एवं ऐसे समाज का निर्माण करना था, जो समाज व्यक्तिगत संपत्ति से रहित हो, जहाँ सभी को बराबरी का अधिकार हो और जिसमें जनवाद का भाव प्रमुख हो। भिक्षु संघ में उसी प्राचीन कबायली जीवन की सीधी-सादी नैतिकता को देखा जा सकता है। बुद्ध का उद्देश्य स्पष्ट है कि वे वर्गों में विभक्त समाज के बीच एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते थे जो वर्गहीन हो, उसका विकास भी वर्गों में बंटे इस समाज की गोद में ही होता रहे और जो समय आने पर हृदयहीन समाज में हृदय और नैतिकता विहीन समाज को नैतिकता का पाठ पढ़ा सके। इसके लिए बुद्ध ने भिक्षु संघ की स्थापना की होगी।

तथागत बुद्ध यथार्थवादी थे। उन्होंने ऐसे ईश्वर पर विश्वास न था जिन्हें भेटें देकर एवं प्रार्थनाओं द्वारा दुःख का निवारण किया जा सके। दुःखों के निवारण के लिए ईश्वर के प्रति आस्था, निवृत्ति मार्गी आत्म दमन, उपासना आदि को बुद्ध निर्थक मानते थे। ईश्वर के अस्तित्व को लेकर जब उनका कोई शिष्य अगर प्रश्न करता ईश्वर है या नहीं? तो वे इस तरह के प्रश्नों का उत्तर नहीं देते थे। ऐसे प्रश्नों से बुद्ध हमेशा बचते हैं जिसका उत्तर वो दे तो सकतें थे, परंतु तर्क या प्रमाण के साथ सामने वाले को पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकते। उनसे जब ऐसे दार्शनिक प्रश्न पूछे जाते हैं, जिस वो उपयोग हीन समझते तो वो चुप हो जाते थे। इस प्रकार के प्रश्नों के संदर्भ में बुद्ध का मानना था कि जब किसी व्यक्ति की कोख में तीर घुसा हुआ है तो कोई मूर्ख की भांति उसे निकाले के बजाय इसमें समय बर्बाद करें की तीर कब बना, किसने बनाया, क्यों बनाया? उसे इसे निकालने और उस पीड़ा से मुक्ति के बारे में सोचना चाहिए। दुःख से मुक्ति के लिए ईश्वर के शरण में जाना, उसकी उपासना करना आदि के संदर्भ में बुद्ध का यही मानना था। बुद्ध को जिस समस्या ने अधिक चिंतित किया वह व्यवहारिक थी सैद्धांतिक नहीं। इस समस्या का संबंध संसार में फैल अपार दुःख से था। इसी दुःख ने बुद्ध को विचलित किया और वे समस्या का समाधान ढूंढने प्रयास करने लगें, यह समाधान भी व्यवहारिक होना उचित था। इसके समाधान के लिए बुद्ध ने साम्राज्यों के विस्तार एवं राज्यों में दिन-प्रतिदिन बढ़ते शान-शौकत के भविष्य की चिंता की अपेक्षा पीछे उस कबालयी सामूहिक जीवन पर ध्यान दिया और उसे पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। इसे ही मार्क्स ने कबालयी जीवन की काल्पनिक छाया कहा है।

अतः कहा जा सकता है पालि धम्मपदट्ठ कथा में अभिव्यक्त बौद्ध शिक्षा एवं दर्शन का आधुनिक समाज में प्रासंगिक है। धम्मपदट्ठ कथा में आचरण की शिक्षा दी गयी है। आधुनिक समाज में मानव-मूल्यों का ह्रास हो रहा है। मानवीय संवेदनाएँ समाप्त हो रही और मनुष्य स्वार्थी बनता जा रहा है। मनुष्य की महत्वाकांक्षा ने आपसी संघर्ष एवं युद्ध की स्थिति को जन्म दिया है। इस स्थिति ने सबसे अधिक मानवता को समाप्त किया है। स्वयं की रक्षा के नाम पर विनाशकारी हथियारों का निर्माण करना हो या युद्ध करना, जाति एवं धर्म की रक्षा के लिए हिंसा करने हो, प्रत्येक स्थिति में मनुष्यता ही मरती है। सुख-सुविधा के नाम पर प्रकृति का दोहन वर्तमान समाज में हो रहा है। आचरण की शुद्धता, सम्पत्ति की समानता, अहिंसा का भाव, स्त्री का सम्मान एवं समानता, प्रकृति की रक्षा आदि की शिक्षा धम्म पदट्ठ कथा की कथाओं में उल्लिखित है। बौद्ध दर्शन अत्यधिक विज्ञान के निकट है। बुद्ध ने संसार को दुःखमय मानकर दुःख निवारण का मार्ग दिया। उसके लिए उन्होंने प्रतीत्य समुत्पाद अर्थात् प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति किसी दूसरे

वस्तु के उत्पत्ति पर निर्भर है। नामक दार्शनिक सिद्धांत दिया, वह वैज्ञानिक है। यह सिद्धांत संसार में निहित पदार्थों उत्पत्ति एवं विनाश पर भी लागू होती है। धम्म पदट्ठ कथा की कथाओं का मूल दर्शन इसी के इर्द-गिर्द है। भिक्षु-भिक्षुणी संघ बनाकर उसे सामाजिक नियमों से अलग रखने का उद्देश्य इन मानवीय संवेदनाओं एवं समानता को जीवित रखना है। अतः धम्म पदट्ठ कथा में वर्णित बौद्ध शिक्षा एवं दर्शन मनुष्य के मानवीय चेतना को जगाने का कार्य कर सकती है।

संदर्भ -

- सिंह, डॉ. महेंद्रनाथ, बौद्ध तथा जैन धर्म: धम्मपद और उत्तराध्ययन सूत्र एक तुलनात्मक अध्ययन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (संस्करण: 1990), पृ.-16
- उपाध्याय, डॉ. भरत सिंह, पालि साहित्य का इतिहास, हिंदी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग, (संस्करण: 2013), पृ-599
- बुलिंगम, ई. डब्लू., बुद्धिस्ट लीजेंडस, भूमिका से, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज, (संस्करणः 1921), पृ-14
- सिंह, डॉ. परमानन्द (संपा.), अनु. स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, धम्म पद ट्ठकथा, चतुर्थ भाग-4, निगमन कथा, बौद्ध आकर ग्रंथमाला, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, (संस्करणः 2000), पृ.-2098
- मललसेकर, डॉ. जी. पी., दि पालि लिटरेचर ऑफ सीलोन, एम0डी0 गुनासेना एंड को. लिमिटेड, कोलोम्बो, (संस्करण: 1958), पृ.-96
- बुलिंगम, ई. डब्लू., बुद्धिस्ट लीजेंडस, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज, (संस्करणः 1921), भाग-5, कथा-1
- जैन, डॉ. शिवचरणलाल, आचार्य बुद्धघोष और उनकी अट्ठकथाएँ, अल्पना प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, (संस्करणः-1968), पृ.-394
- सिंह, डॉ. परमानन्द (संपा.), अनु. स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, धम्म पदट्ठ कथा, चतुर्थ भाग-1, बौद्ध आकर ग्रंथमाला, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, (संस्करण: 2000), पृ.-46
- सिंह, डॉ. परमानन्द (संपा.), अनु. स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, धम्म पदट्ठ कथा, चतुर्थ भाग-2, बौद्ध आकर ग्रंथमाला, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, (संस्करण:2000), पृ.-910
- सिंह, डॉ. परमानन्द (संपा.), अनु. स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, धम्म पदट्ठ कथा, चतुर्थ भाग-1, बौद्ध आकर ग्रंथमाला, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, (संस्करण: 2000), पृ.-124
- लाहा, विमला चरण, हिस्ट्री ऑफ पालि लिटरेचर ,भाग-2, कंगन पॉल, ट्रेंच, ट्रुबनेर, लंदन, (संस्करण: 1933) पृ.-200
- सिंह, डॉ. परमानन्द (संपा.), अनु. स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, धम्म पदट्ठ कथा, चतुर्थ भाग-1, बौद्ध आकर ग्रंथमाला, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, (संस्करण: 2000), पृ-216
- थोमोसन, जॉर्ज, स्टडीज इन एनसिएन्ट ग्रीक सोसाइटी, वॉल्यूम-2, केस्सिंजेर पब्लिशिंग, अमेरिका (संस्करण: 2007) पृ.-42

- शोधार्थी, हिंदी विभाग,
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय,
शिलांग-793022
ईमेल-sahkrishna075@gmail-com
मो.- 7908492732, 8967445302

बौद्ध कालीन शिक्षा दर्शन और योग शिक्षा

कुँवर रिपुदमन सिंह

सारांश -

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में बौद्ध कालीन शिक्षा के बहुत से उद्देश्यों को समाहित करके ही शिक्षा प्रणाली को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। छात्र व शिक्षक का त्यागपूर्ण जीवन ऐसे तत्व है, जो आज कहीं न कहीं हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति में कम ही परिलक्षित हो रहीं हैं। आज के वर्तमान परिदृश्य में छात्र व शिक्षकों में धन की लोलुपता, वैभव पूर्ण जीवन, अस्वस्थ्य जीवन, हिंसा युक्त परिवेश में रहने की आदत, अनुशासन की अदृश्यता जैसे विकार की वृद्धि हुई है, अतः यह नितान्त आवश्यक है कि छात्रों में व शिक्षकों को इन सभी प्रकार के विकारों से निजात योग शिक्षा के माध्यम से दिलाया जा सके। आज समस्त जगत् शरीरिक, मानसिक या अन्य किसी भी रूप में अस्वस्थ्यता से जूझ रहा है। अस्पताल इन मरीजों से खचाखच भरा पड़ा है जिसके कारण अनावश्यक पैसे व समय की बर्बादी होती है। इन सभी से हम निजात पाने के लिए योग शिक्षा का आधार प्राप्त कर सकते हैं। योग शिक्षा कार्यक्रमों को सभी स्तर के पाठ्यक्रमों में अनिवार्य रूप में विस्तार पूर्वक समावेशित करना होगा। तभी जाकर हमारे समाज, राज्य व देश-विदेश में लोगों को अस्वस्थता से निजात दिलाकर स्वस्थता को प्राप्त कराया जा सकता है।

मुख्य शब्द -

योग शिक्षा, बौद्धकालीन शिक्षा दर्शन

प्रस्तावना -

बौद्ध दर्शन को एक नास्तिक दर्शन के रुप में देखा जाता है, किन्तु यहाँ भी मोक्ष की मान्यता है, अतः इसे भी नास्तिक दर्शन कहना उचित नहीं होगा। बौद्ध दार्शनिक मोक्ष को निर्वाण के नाम से पुकारतें हैं और इस निर्वाण की प्राप्ति के लिए इसमें साधना मार्ग का भी वर्णन किया गया है। बौद्ध दर्शन के अनुसार जीवन दुःखमय है। महात्मा बुद्ध कहते हैं सर्वम् दुःख अर्थात् सभी कुछ दुःखमय है। यदि हम विचार करके देखें तो संसार की प्रत्येक वस्तु चाहे वह कितना ही प्रिय दिखाई दे उसके मूल में दुःख ही है। इस दुःख को दूर करने के लिए महात्मा बुद्ध ने निश्चित साधना पद्धति का निर्माण किया। जिसमें योगांगों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया। बौद्ध दर्शन में पुनर्जन्म की मान्यता है इस कारण से कर्म की स्वीकार्यता है। मोक्ष हो जाने पर बौद्ध दर्शन में भी जन्म-मरण के चक्र समाप्ति को माना जाता है। बौद्ध मत में माना गया है कि मानसिक साधना के लिए शरीर का स्वरुप जानना बहुत आवश्यक है, क्योंकि स्वरुप शरीर से ज्ञान की प्राप्ति संभव है। महात्मा बुद्ध ने घर-बार छोड़कर कठिन तप किया। तप के पश्चात् उन्होंनें समाधि की अवस्था में विशुद्ध ज्ञान प्राप्त किया। महात्मा बुद्ध कठिन तपस्या की, जिसमें शरीर को कष्ट दिया जाता है, उसके वे विरोधी थे। उन्होंने मध्यम मार्ग का अनुसरण किया। बौद्ध दर्शन के चारों विषयों दुःख, दुःख का कारण, दुःख नाश एंव दुःख नाश के उपाय इन सभी पर विचार करते हुए महात्मा बुद्ध ने कहा कि इनको सदा ध्यान में रखते हुए दुःख निवारण का प्रयास करना चाहिए।

अध्ययन की आवश्यकता एंव महत्व -

आधुनिक समय में विश्व कई ऐसी समस्याओं से जूझ रहा है, जो मानवता एवं उसकी संस्कृति के लिए काफी हानिकारक है जैसे- कोरोना महामारी, मस्तिष्क ज्वर, डेंगू, इत्यादि विभिन्न प्रकार के मानसिक एंव शारीरिक स्वस्थता। इन सभी प्रकार के अस्वस्थ्यता से निजात पाने के लिए योग शिक्षा अपरिहार्य है। वर्तमान में इसकी महत्ता को देखा जा सकता है, भारत सरकार ने तों 21 जून को योग दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया है। NEP-2020 में भी योग शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है।

अतः स्वस्थ विश्व की कल्पना में योग शिक्षा का शैक्षणिक कार्यक्रमों एंव उपयुक्त उद्देश्यों के माध्यम से ही पारम्परिक शिक्षा के कार्यक्रमों में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।

बौद्ध दर्शन में योग शिक्षा -

जिस प्रकार महर्षि पतंजलि ने अपने ग्रन्थ पातंजल योगसूत्र में अष्टांग योग के अन्तर्गत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह ये पांच यम मानें हैं तथा शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान पांच नियम बताये हैं। ठीक उसी प्रकार बौद्धों में भी यम और नियम का पालन अनिवार्य बताया गया है। भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों के लिए अग्रलिखित नियमों का पालन करना आवश्यक माना है-

बौद्ध दर्शन के अनुसार ये नियम हैं-

अहिंसा, अपरिग्रह, सत्य, धर्म में श्रद्धा, दोपहर के बाद का भोजन निषेध, सुखप्रद शैय्या तथा आसन का परित्याग, विलास से विरक्ति, सुगंधित द्रव्यों का निषेध तथा स्वर्ण या चाँदी आदि मूल्यवान वस्तुओं को अस्वीकार करना। ये सब नियम मोक्ष मार्ग के साधक के लिए अनिवार्य है।

पातंजल योग के अष्टांग योग की भांति बौद्ध साधना में भी निर्वाण के लिए अष्टांग मार्ग का वर्णन किया गया है। बौद्ध साधना के

लिए आठ मार्ग निम्न हैं-

बौद्ध दर्शन के अष्टांग मार्ग -

1. **सम्यक् दृष्टि -** दुःख, दुःख का कारण, दुःख नाश, दुःख नाश का उपाय इन चारों आर्य सत्यों का ज्ञान चित्त में बने रहना सम्यक् दृष्टि है।
2. **सम्यक् संकल्प -** राग, द्वेष, हिंसा, आदि दुर्गुणों और सांसारिक विषयों का परित्याग करने का दृढ़ निश्चय कर लेना ही सम्यक् संकल्प है।
3. **सम्यक् वाक् -** मिथ्या, अनुचित तथा दुर्वचनों का परित्याग करना, जैसा देखा, सुना या अनुभव किया उसको वैसा हीवाणी से बोलना, वैसा आचरण करना, सत्य वचनों की रक्षा करना, सम्यक् वाक् कहलाता है।
4. **सम्यक् कर्म -** हिंसा, पर द्रव्य का अपहरण, वासना कोटि की इच्छा का परित्याग करके शुभ कर्म करना सम्यक् कर्म कहलाता है।
5. **सम्यक् आजीव -** न्यायपूर्वक तथा धर्म के अनुसार बिना किसी दूसरे को हानि पहुंचाये अपनी जीविका के साधन जुटाना सम्यक् आजीव कहलाता है।
6. **सम्यक् व्यायाम -** बुराइयों को नष्ट कर अच्छे कर्मो के लिए सदैव उदात्त रहना सम्यक् व्यायाम है।
7. **सम्यक् स्मृति -** काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुर्गुणों को हटाकर चित की शुद्धि करना, सदैव आत्मचिन्तन में रत रहना सम्यक् स्मृति है।
8. **सम्यक् समाधि -** चित् को एकाग्र कर राग-द्वेष आदि सांसारिक बन्धनों से अपने आपको मुक्त रखना सम्यक् समाधि है।

महात्मा बुद्ध कहते हैं कि साधक को इन आठो अंगों का पालन करना आवश्यक है। इनके पालन करने से अंतःकरण की शुद्धि होती है, और ज्ञान का उदय होता है। बौद्ध मत में योग के मुख्य अंग आसन का भी विधान दिया गया है। साधना के लिए किसी स्थिर आसन में बैठना अनिवार्य माना गया है। महात्मा बुद्ध की मूर्ति प्रायः पद्मासन में ही मिलती है। प्राणायाम का उपदेश भी महात्मा बुद्ध ने दिया है।

बौद्ध दर्शन के अनुसार त्रिरत्न -

बौद्ध साधना मुख्यतः तीन वर्गों में वर्गीकृत है जिन्हें त्रिरत्न के नाम से जाना जाता है। बौद्ध साधना के अनुसार ये त्रिरत्न हैं -

1. शील 2. समाधि 3. प्रज्ञा

1. **शील -** अर्थात् शारीरिक मानसिक शुद्धि। यह साधना का पहला अंग है जिनका पालन करने पर हर साधक साधना मार्ग में आगे बढ़ सकता है ।
2. **समाधि -** अर्थात् चित्त की एकाग्रता। पूर्व के साधनों के अभ्यास से चित्त राग द्वेष से रहित होकर शुद्ध हो जाता है और आसानी से एकाग्र हो जाता है।
3. **प्रज्ञा -** अर्थात् परम ज्ञान। यह परम ज्ञान भी शील और समाधि की पूर्णता से उदित होता है जिसकी प्रप्ति से दुःख का आत्यांतिक नाश संभव है।

ध्यान योग साधना का मुख्य अंश है। महात्मा बुद्ध के अनुसार भी एकांत में ध्यान करना ही आध्यात्मिक शांति एवं अनाशक्ति प्राप्त करने का एक मात्र साधन है। बौद्धों में 05 प्रकार के ध्यानों का वर्णन किया गया है। जो योग दर्शन की सम्प्रज्ञात समाधि के चारों अंगों के समान है। इन चारों में भी योग की भाँति कुछ विभिन्न वर्णित किये गये हैं।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि बौद्ध मत योग दर्शन से बहुत अधिक समानता रखता है। यह कहा जा सकता है कि बौद्ध साधना में योग के सभी अंगों का समावेश किया गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य -

1. प्रस्तुत शोध पत्र में बौद्ध कालीन शिक्षा दर्शन में योग शिक्षा का अध्ययन करते हुए, उसे वर्तमान योग शिक्षा के व्यापक आधारों का अध्ययन करना।
2. प्रस्तुत शोध पत्र में विश्वशान्ति, योग एवं सद्भावना के सम्बंध में सामाजिक कुशलताओं का अध्ययन करना।
3. योग शिक्षा के पाठ्यक्रमों का व्यापक एवं विस्तार पूर्वक अध्ययन करना व अभ्यास करना।
4. विश्वशांति सदभाव एवं अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास में बौद्धकालीन शिक्षा व्यवस्था एवं योग शिक्षा कार्यक्रमों का अध्ययन।

योग शिक्षा का क्षेत्र -

योग शिक्षा को विभिन्न स्तरों पर लागू किया जा सकता है।

- विश्व स्तर पर
- राष्ट्र स्तर पर
- स्वयं सक्रिय स्तर पर
- विभिन्न स्तर के विद्यालयी शिक्षा में

विद्यालयों के विभिन्न स्तरों पर योग शिक्षा -

यह स्तर सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। चूँकि बालक विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करता है, विद्यालय के शांत वातावरण में योग शिक्षा प्रदान करना चाहिए तथा इसके फायदों को छात्रों को बताना चाहिए कि निरन्तरता से अभ्यास करने से आप निरोग रह सकते हैं।

स्वंय सक्रिय स्तर पर -

परिवार ही बालक की प्रथम

पाठशाला होती है और परिवार में हीं बच्चा सर्वप्रथम सीखना शुरु करता है। अतः परिवार के प्रत्येक सदस्य का स्वंय के सर्वांगीण विकास हेतु यह कर्तव्य है कि बच्चों के समक्ष आदर्श व्यवहार एवं योगासन का अभ्यास करें जिससे बालक के मन में जिज्ञासा का निर्माण हो कि यह क्यों करना चाहिए तथा इसके क्या फायदे हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर योग शिक्षा -

योग पर वर्तमान में हमदेख सकते हैं कि कितना अधिक जोर दिया जा रहा है, वर्तमान में यह राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। किसी भी देश का भविष्य वहाँ के नागरिक संसाधन निर्धारित करतें हैं, ऐसी स्थिति में उनका स्वस्थ्य रहना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। जिसके लिए योग शिक्षा अति आवश्यक हो जाती है।

वैश्विक स्तर पर योग शिक्षा -

इस भूमण्डलीकरण के दौर में यह शिक्षा अब राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि विश्वव्यापी बन गया है। योग शिक्षा के द्वारा हम सभी वैश्विक स्तर से अस्वस्थता को दूर करके निरोग विश्व की कल्पना को साकार बना सकते हैं।

निष्कर्ष -

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आज विश्व में जहाँ पर भी देखा जाय तो, सभी व्यक्ति किसी न किसी रूप से अस्वस्थता का शिकार हो रहे हैं या असुरक्षा की भावना बनी रह रही है और सभी को स्वस्थ्य होना अति आवश्यक है जो हमें योग शिक्षा ही प्रदान करा सकती है और योग शिक्षा के व्यापक स्वरूप को हमें अपने शैक्षिक पाठ्यक्रमों में समावेशित करने की आवश्यकता है। जिसका आधार हमारे आंगन में ही पले बढ़े हुए बौद्ध धर्म की शिक्षाओं व पातंजलि की योग शिक्षाओं में मिलता है, जिसमें योग शिक्षा की विस्तृत रुपरेखा है। प्रस्तुत शोध पत्र में यह प्रयास किया गया है, कि बौद्ध कालीन शिक्षा दर्शन में योग शिक्षा का आधार प्रदान करने वाले तत्वों को पाठ्यक्रम में शामिल कर इसे मानव स्वस्थ्य के विकास में लगाया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

- पाण्डेय,बी.एल.(2009) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बध, आगरा, साहित्य प्रकाशन।
- फाड़िया, बी. एल. (2009) प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
- द्विवेदी राहुल, जे.डी. सिंह (2007) जैन एवं बौद्ध एक समग्र अध्ययन।
- गाँधी, इन्दिरा (1981), पीस स्टडी एवं श्रीवास्तव, के० के०-प्राचीन भारत का राजनीतिक रंग सांस्कृति इतिहास।

• शोध-छात्र, शिक्षाशास्त्र
रतनसेन स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बांसी, सिद्धार्थनगर

शोध पत्र

बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं उसकी वर्तमान में उपयोगिता

डॉ० फूलचन्द यादव

सारांश -

मानव एक चिन्तनशील प्राणी है तथा मानव जीवन स्वयं एक दर्शन है। संसार का प्रत्येक मनुष्य दार्शनिक हैं। क्योंकि वह जन्म से मृत्यु तक प्रकृति में घटित होने वाली सभी घटनाओं को अनुभव करता है। फिर वह इन अनुभवों पर चिन्तन-मनन करता है, और इसके बाद वह किसी न किसी निष्कर्ष पर पहुँचता है। यही निष्कर्ष ही दर्शन की ओर अग्रसर करती है और मनुष्य के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा की आवश्यकता होती है। जीवन को उन्नत बनाने के लिए शिक्षा का अन्तिम ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है और इसी कारण शिक्षा दर्शन की आवश्यकता अनुभव की जाती है। बुद्ध के जन्म के समय तक भारतीय समाज रूढ़िवादी परम्पराओं से बहुत दूषित हो चुका था। जिसके होते हुए समाज का पतन होने लगा था। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं ने भारत के लोगों को कल्याण हेतु, चार आर्य सत्य, पंचशील एवं अष्टांगिक मार्ग आदि बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं उसकी वर्तमान में उपयोगिता को बढ़ाती है।

प्रस्तावना -

गौतम बुद्ध के जन्म तक भारतीय व्यवस्था अत्यधिक दोष पूर्ण हो चुकी थी। धर्म ऐसी परम्पराओं को जन्म देकर उसकी परवरिश कर दी थी जो लोगों के लिए बहुत हानिकारक थी आस्था के नाम पर लोगों को गुमराह किया जाने लगा था। दुःखों से मुक्ति के नाम पर कर्म काण्डों का बोल वाला हो चुका था। कर्म काण्ड के नाम पर यज्ञ अधिक होने लगे थे। बलि देने की परम्परा में जीवों की हत्या करनी शुरू कर दी थी, और सामाजिक असमानता आदि जैसे समाज में कई दोष आ गये थे। भारत में कुरितियाँ बहुत बढ़ चुकी थी। तो उस समय गौतम बुद्ध का जन्म हुआ। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं ने संसार को सत्य और अहिंसा का संदेश दिया। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं का अनुसरण करके लोगों ने अपने कल्याण के साथ-साथ आने वाली पीढ़ियों को भी सत्य और अहिंसा का कल्याणकारी रास्ता बताया।

बौद्ध शिक्षा दर्शन -

गौतम बुद्ध का परिचय-गौतम बुद्ध का जन्म 563 ई०पू० कपिलवस्तु के समीप लुम्बनी में हुआ था। उनके पिता शुद्धोधन कपिल वस्तु के शाक्यगण के प्रधान थे। एक दिन नगर भ्रमण में इन्होंने एक वृद्ध, एक व्याधिग्रस्त मनुष्य, एक मृत व्यक्ति और एक प्रसन्नचित सन्यासी को देखा। उनका हृदय मानवता को दुःख में फँसा हुआ देखकर अत्यधिक द्रवित हो उठा। सांसारिक समस्याओं ने उनके जीवन का मार्ग बदल दिया और इन समस्याओं के ठोस समाधान के लिए उन्होंने 29 वर्ष की आयु में अपनी पत्नी यशोधरा एवं पुत्र राहुल को सोते हुए छोड़कर गृह त्याग दिया। ज्ञान की खोज में उन्होंने एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण किया, उनके गुरूओं की शरण ली, परन्तु इनकी ज्ञान पिपासा शान्त नहीं हुई। अन्त में 6 वर्षों की साधना के पश्चात् 35 वर्ष की आयु में वैशाख पूर्णिमा के रात को एक पीपल के वृक्ष के नीचे उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ उस समय से वे बुद्ध के नाम से विख्यात हुए। ज्ञानप्राप्ति के पश्चात् वे सर्वप्रथम सारनाथ आये यहाँ उन्होंने पाँच ब्राम्हण उपदेश सन्यासियों को अपना पहला उपदेश दिया। इस प्रथम उपदेश को धर्मचक्र परिवर्तन की संज्ञा दी जाती है। धीरे-धीरे उनके विचार एवं उपदेश सारे भारत में फैलने लगें। अन्त 483 ई०पू० 80 वर्ष की अवस्था में कुशीनगर में पावापुरी नामक स्थान पर उन्हें महापरिनिर्वाण की प्राप्ति हुई।

गौतम बुद्ध ने बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय को दृष्टि में रखकर अपने उपदेश सरल स्थानीय पालि भाषा में दिये। अत्त दीपो भव का आदर्श अपनाने की शिक्षा ही, साथ ही तृष्णा रहित नैतिक आचरण पर मुख्य जोर दिया, पारलौकिकता की जगह इह लौकिकता का महत्व दिया, इन्द्रिय निग्रह एवं कठोरता के स्थान पर मध्यम मार्ग का सिद्धान्त दिया। कालान्तर में धार्मिक मतभेदों के कारण बौद्ध धर्म दो भागों- हीनयान और महायान में विभाजित हो गया।

बौद्ध धर्म की मीमांसा -

- **तत्व मीमांसा -** गौतम बुद्ध ने तत्व मीमांसा के विवेचन में अपनी शक्ति व्यय नहीं की है।
- **ज्ञानमीमांसा -** बौद्ध दर्शन में तर्क व मुक्ति के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले गये है उन्हीं पर ज्ञान मीमांसा आधारित है।
- **मूल्य मीमांसा -** बौद्ध दर्शन में मध्यम मार्ग का प्रतिपादन किया गया है। मध्यम मार्ग एक व्यावहारिक मार्ग है।

चार आर्य सत्य -

ये चार आर्य सत्य इस प्रकार है - दुःख, दुःख समुदाय, दुःख निरोध दुःख निरोध मार्ग आदि। दुःख निरोध के मार्ग अष्टांगिक मार्ग भी कहा जाता है - सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वाक, सम्यक कर्मान्त, सम्यक आजीविका, सम्यक् व्यायाम्, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि आदि है।

 ISSN-2456-0413

बौद्ध धर्म के दार्शनिक सिद्धान्त -

बौद्ध दर्शन के दार्शनिक सिद्धान्तों निम्न प्रकार है - (i) प्रतीत्य समुदत्पाद (ii) क्षणिकवाद (iii) अनात्मवाद (iv) कर्मवाद (v) अनीश्वरवाद (vi) पाँच स्कन्ध (रूप स्कन्ध, वेदना स्कन्ध, संज्ञा स्कन्ध, स्कन्ध, संस्कार संस्कार स्कन्ध, स्कन्ध, विज्ञान स्कन्ध)।

बौद्ध दर्शन और शिक्षा -

बौद्ध दर्शन के अनुसार शिक्षा एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो मनुष्य को लौकिक रूप एवं परमार्थिक जीवन के योग्य बनाती है। वास्तविक शिक्षा वह है, जो व्यक्ति को दुःखों से छुटकारा दिलाकर निर्वाण की प्राप्ति कराये।

शिक्षा के उद्देश्य -

महात्मा बुद्ध ने जीवन के लिए जो अष्टांगिक मार्ग बताये है, वे ही शिक्षा के उद्देश्य है जो इस प्रकार है -

1. **नैतिक जीवन -** आचार्य का मुख्य कार्य नैतिक जीवन का विकास करना था, चरित्र निर्माण के लिए आवश्यक नियमों का निर्धारण किया गया था।
2. **व्यक्तित्व का विकास -** आत्म सम्मान, आत्म निर्भरता, आत्म संयम आत्म विश्वास तथा विवेक आदि गुणों का विकास करना।
3. **संस्कृति का संरक्षण -** बौद्ध दर्शन में धर्म को संस्कृति का अंग माना गया है। तथा संस्कृति के संरक्षण से ही धर्म का संरक्षण हो सकता है।
4. **सर्वांगीण विकास -** बौद्ध शिक्षा प्रणाली में हाल के शारीरिक, मानसिक, और नैतिक विकास को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान की जाती थी।

शिक्षा की पाठ्यचर्या -

बौद्ध मठों और विहारों में पाँच प्रकार की विद्याओं का अध्ययन-अध्यापन मिलता है, जो निम्न प्रकार है, शब्द विद्या, शिल्पासन विद्या, चिकित्सा विद्या, हेतु विद्या, अध्यात्मक विद्या आदि। प्राथमिक स्तर पर लिखना-पढ़ना, भाषा ज्ञान, साधारण गणित आदि का ज्ञान कराया जाता था। उच्च स्तर पर धर्म, ज्योतिष, व्याकरण दर्शन, राजनीतिक, न्याय प्रशासन, आयुर्वेद, शल्य चिकित्सा आदि।

शिक्षण विधियाँ -

बौद्ध शिक्षण विधियों को दो भागों में बॉटा जा सकता है -

1. **व्यक्तित्व शिक्षण विधियाँ -** इसके अन्तर्गत स्वाध्याय, मनन और चिन्तन विधियों का उल्लेख मिलता है।
2. **सामूहिक शिक्षण विधियाँ -** इसके अन्तर्गत व्याख्यान, व्याख्या प्रश्नोत्तर और चर्चा की विधियों का उल्लेख मिलता है।

शिक्षक -

बौद्ध दर्शन में शिक्षक चार आर्य सत्य को समझ लिया है और जो अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण एवं 10 वर्ष के अनुभवी भिक्षु भी शिक्षा दे सकते थे। दो प्रकार के शिक्षकों का उल्लेख है। उपाध्याय और आचार्य। उपाध्याय विषय का ज्ञाता तथा आचार्य के अधित उपाध्याय शिक्षण छात्रों के देते थे।

शिक्षार्थी -

बौद्ध काल में पब्बजा संस्कार द्वारा शिक्षा का आरम्भ होता था। इसमें बालक सिर मुड़ाकर पवित्रता धारण करता था और गुरू उससे तीन प्रतिज्ञाएँ कराता था।

बुद्ध शरणं गच्छामि
धम्मं शरणं गच्छामि
संघ शरणं गच्छामि

विद्यालय -

बौद्ध शिक्षा की व्यवस्था मठों एवं विहारों में थी। कालान्तर में मठ एवं विहार ही विश्वविद्यालय का रूप धारण कर लिया। तक्षशिला, नालन्दा सरीखे बड़े-बड़े विश्वविद्यालय बौद्ध काल में संचालित हुए।

अनुशासन -

अनुशासन बौद्ध दर्शन का मेरूदण्ड है। पंचशील का पालन करना प्रत्येक छात्र एवं शिक्षक के लिए आवश्यक था पंचशील में हिंसा से, चोरी से, परस्त्री गमन से, झूठ कपट और चुगुली से और मदिरा पान से दूर रहने को कहा गया है।

बौद्ध शिक्षा दर्शन की वर्तमान में उपयोगिता -

वर्तमान शिक्षा का अर्थ मनुष्य को मानव बनाना तथा जीवन को प्रगतिशील बनाना है। जो बौद्ध शिक्षा के दृष्टि से काफी व्यवहारिक है। आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान विस्तार करना तथा बौद्ध शिक्षा का उद्देश्य परिनिर्वाण प्राप्त करना था। पाठ्य चर्या में लौकिक एवं परमार्थिक दोनों विषयों को स्थान दिया जो आज भी मान्य है। बौद्ध शिक्षा में प्रभावी शिक्षण विधियों का विकास किया गया। जिसमें स्वाध्याय, चिन्तन-मनन, पर्यटन आदि ये सभी आधुनिक स्तर (5,3,3,4) पर कहीं न कहीं उपयोगी है। शिक्षक और शिक्षार्थी को अनुशासन पर जोर दिया जाता था जो आत्म अनुशासन का प्रभाव मिलता था। सर्वप्रथम हमें बौद्ध शिक्षा प्रणाली में लोकतन्त्रीय प्रणाली के बीच देखने को मिलते है। जिससे शिक्षा में गुणात्मक सुधार हुए।

अतः यह कहा जा सकता है कि भारत में शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक संगठन विद्यालयी एवं विश्वविद्यालयी शिक्षा की शुरूआत कर बौद्धों ने वर्तमान शिक्षा की नींव रख दी थी।

सन्दर्भ-सूची -

- लाल, रमन विहारी - भारतीय शिक्षा का विकास एवं उनकी समस्यायें, मेरठ।
- मदान, पूनम, एवं यादव सियाराम-ज्ञान एवं पाठ्यक्रम।
- त्यागी, गुरूसरन दास, - भारतीय शिक्षा का परिदृश्य, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
- सारस्वत (डा०) मालती - भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक समस्यायें।

❖ ❖ ❖

शोध पत्र

बौद्धकालीन शिक्षा की आधुनिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

अनुप्रिया सिंह

प्रस्तावना

गौतम बुद्ध के जन्म तक भारतीय व्यवस्था काफी दोषपूर्ण हो चुकी थी। धर्म ने ऐसी परम्पराओं को जन्म देकर उनकी परवरिश कर दी थी, जो लोगों के लिए बहुत हानिकारक थीं। आस्था के नाम पर लोगों को गुमराह किया जाने लगा था। दुःखों से मुक्ति के नाम पर कर्मकाण्डों का बोलबाला हो चुका था। कर्मकाण्डों के नाम पर यज्ञ अधिक होने लगे थे, बलि देने की परम्परा ने जीवों की हत्या करनी शुरू कर दी थी और सामाजिक असमानता आदि जैसे-समाज में कई दोष आ गये थे। भारत में कुरीतियां बहुत बढ़ चुकी थी, तो उस समय गौतम बुद्ध का जन्म हुआ। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं ने संसार को सत्य और अहिंसा का संदेश दिया। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं का अनुसरण करके लोगों ने अपने कल्याण के साथ-साथ आने वाली पीढ़ियों को भी सत्य और अहिंसा का कल्याणकारी रास्ता बताया। गौतम बुद्ध ने लोगों के कल्याणकारी उपदेश, लोगों की भाषा में दिये और उनके शिष्यों ने भी उनके कल्याणकारी उपदेशों एवं शिक्षाओं को दूर-दूर तक पहुँचाया। बुद्ध के उपदेशों के आधार पर तीन पिटकों की रचना हुई, जिनको सम्मिलित रूप से त्रिपिटक कहा गया। जिनमें विनय पिटक, सुत पिटक और अभिधम्म पिटक थे। विनय पिटक में गौतम बुद्ध द्वारा बताये भिक्षु संघ के नियमों का संग्रह, सुत पिटक में गौतम बुद्ध के उपदेशों का संग्रह एवं अभिधम्म पिटक में दार्शनिक विषयों का विवेचन है। बुद्ध काल में सभ्यता में उल्लेखनीय प्रगति हुई। नगर केवल राज सत्ता और व्यापार के ही केन्द्र नहीं रहे, बल्कि शिक्षा के केन्द्र भी बने जैसे-तक्षशिक्षा एवं नालन्दा आदि। बुद्ध काल की शिक्षाओं का महत्त्व वर्तमान में भी है। बुद्ध की शिक्षायें सर्वव्यापी हैं। जहाँ-जहाँ गौतम बुद्ध की शिक्षाओं का अनुसरण किया गया, वहाँ-वहाँ अत्यधिक विकास हुआ। यह कहा जाता है कि व्यक्ति का सर्वांगीण विकास अर्थात् उसका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक बौद्वकालीन शिक्षा की आधुनिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिक है।

शिक्षा का अर्थ:-

शिक्षा का अर्थ मनुष्य को मानव बनाना तथा जीवन को प्रगतिशील बनाना, सांस्कृतिक एवं सभ्य बनाना है। शिक्षा द्वारा मनुष्य अपनी विचार शक्ति तथा तर्क शक्ति, समस्या समाधान तथा बौद्धिकता, प्रतिभा तथा रूझान, धनात्मक भावुकता तथा कुशलता और अच्छे मूल्यों तथा रूचियों को विकसित किया जाता है।

शिक्षा के उद्देश्य:-

आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा का उद्देश्य बालक का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, सांस्कृतिक, नैतिक, चारित्रिक, व्यवसायिक एवं आध्यात्मिक विकास करना है।

पाठ्यक्रम:-

बालक के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्यक्रम सम्बन्धी तथा सहगामी दोनों प्रकार की क्रियाओं को सम्मिलित करके पाठ्यक्रम को लचीला तथा प्रगतिशील बनाने पर बल दिया जाता है।

शिक्षा के स्तर -

प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च स्तर। बालकों को तीन स्तर की शिक्षा दी जाती है। प्राथमिक स्तर पर कक्षा एक से पाँच तक, माध्यमिक स्तर पर छठीं से बारहवीं कक्षा तक तथा बारहवीं से ऊपर की कक्षाओं को उच्च स्तर पर रखा जाता है।

पाठ्य सहगामी क्रियायें:-

वर्तमान में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को बालक के विकास का महत्त्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है। पाठ्यक्रम के साथ-साथ बालकों के विकास हेतु पाठ्यसहगामी क्रियाओं जैसे विभिन्न खेल, अंताक्षरी, वार्तालाप आदि को भी सम्मिलित किया जाता है, जिससे बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास होता है।

अनुशासन:-

वर्तमान में अनुशासन को बालक के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है। अनुशासन दमनात्मक न होकर प्रभावित करने वाला होता है। अनुशासन में बालक को नियन्त्रित स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है, जिससे उसमें आत्म-अनुशासन की भावना विकसित होती है।

शिक्षण विधियाँ:-

वर्तमान की आधुनिक विचारधारा में बालक के सर्वांगीण विकास हेतु खेल विधि, करके सीखने की विधि तथा योजना आदि विधियों का प्रयोग किया जाता है, जिससे बालक का वास्तविक विकास होता है, क्योंकि यह माना जाता है कि सभी बच्चों को एक ही शिक्षण विधि से नहीं पढ़ाया जा सकता।

 ISSN–2456–0413

शिक्षक:-

वर्तमान में शिक्षक एक मित्र, दार्शनिक तथा पथ-प्रदर्शक समझा जाता है, जिससे यह उम्मीद की जाती है कि वह बालकों के साथ सहानुभूति पूर्ण तथा व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके उनका संतुलित विकास कर सके।

शिक्षार्थी:-

वर्तमान में शिक्षा बाल केन्द्रित हैं अर्थात् शिक्षण कार्य में शिक्षक या पाठ्यक्रम को महत्त्व न देकर बालक को महत्त्व दिया जाता है, यदि बालक किसी पाठ्य-वस्तु को नहीं समझ पा रहा है, तो उसके लिए शिक्षक या पाठ्यक्रम जिम्मेदार है। आधुनिक शिक्षा में शिक्षक या पाठ्यक्रम को महत्त्व न देकर बालक को महत्त्व दिया जाता है। बालक, केन्द्र बिन्दु होता है।

विद्यालय:-

आधुनिक काल में स्कूल को समाज का लघु रूप माना जाता है। शिक्षा को एक उद्योग तथा शिक्षक को इस शिक्षा रूपी उद्योग का व्यवस्थापक समझा जाता है, जो बालकों के लिए सीखने की व्यवस्था करता है।

अनुसंधान विधि:-

अनुसंधान की विभिन्न विधियों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है। सामान्यतः अनुसंधान विधियाँ ऐतिहासिक विधि, वर्णनात्मक विधि तथा प्रयोगात्मक विधि आदि नामों से जानी जाती हैं। समस्या की प्रकृति के आधार पर अनुसंधान विधि का प्रयोग किया जाता है।

प्रस्तुत शोध कार्य ''**बौद्ध कालीन शिक्षा की आधुनिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता**'' एक ऐतिहासिक विषय है और इसमें वर्तमान शिक्षा की स्थिति का भी अध्ययन किया गया है। अतः इस शोध कार्य में ऐतिहासिक और वर्णनात्मक प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

अनुसंधान सामग्री के स्रोत:-

अनुसंधान की सामग्री के स्रोत दो प्रकार के हो सकते हैं:-

1. प्राथमिक स्रोत:-

प्राथमिक स्रोत में अनुसंधान सामग्री के मूलस्रोत आते हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन में बौद्धकालीन शिक्षा के त्रिपिटिक, मिलिन्द पन्हो, अश्वघोष की बुद्ध चरित आदि की सहायता ली गई है।

2. द्वितीय स्रोत:-

द्वितीय स्रोत की सामग्री अनुसन्धानकर्ता दूसरों के प्रयोग अथवा अनुसंधान से प्राप्त करता है। इस कारण इसे द्वितीय स्रोत कहते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत शोध कार्य बौद्ध कालीन शिक्षा की आज के संदर्भ में प्रासंगिकता में ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया है। यह शोध कार्य प्राथमिक एवं द्वितीय दोनों स्रोतों पर आधारित है।

निष्कर्ष-

बुद्ध ने पंचशील अर्थात् पाँच प्रतिज्ञायें बताई, जैसे-चोरी न करना, झूठ न बोलना, किसी महिला से व्यभिचार न करना, जीव हत्या न करना तथा मादक पदार्थों से दूर रहना। बुद्ध ने दुःखों से मुक्ति हेतु अष्टांगिक मार्ग बताये, जैसे- सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक वाक्, सम्यक् कर्म, सम्यक आजीव, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति एवं सम्यक् समाधि। बुद्ध के प्रवचनों को सुनकर उनके भिक्षुओं की संख्या बढ ने लगी। बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी उनके शिष्य बनने लगे। बुद्ध के पुत्र राहुल भी भिक्षु बन गये।

हिंसा एवं आतंक के कारण संपूर्ण विश्व भयाक्रान्त है। एक-दूसरे की पीड़ा को समझने वाला कोई नहीं है। इन समस्त कुत्सित बुराइयो से निजात दिलाने के लिए बौद्ध धर्म पूर्णतया सक्षम है। सीमाओं पर विवाद का जो खेल आज अनवरत गतिमान हो रहा है वह कही न कही राक्षसी प्रवृत्ति का ही द्योतक है।

महात्मा बुद्ध के विचारो का आज के सन्दर्भ मे प्रेरणादायी पक्ष यह भी है कि वे **सदगुणों के विकास** पर बल देते थे। उन्होने अपने अनुयायियों की जो आचरण संहिता बताया उसमे कष्टो को सहने की ताकत और अनुशासित जीवन को अत्याधिक महत्व दिया गया। **उदाहरण** के लिए उन्होने अहंकार को बहुत बड़ा अवगुण माना और सलाह दिया कि जिन लोगो के अन्दर मै की भावना बहुत अधिक होती है वे अक्सर बाकी लोगो को अपने साथ लेकर नही चल पाते। उन्हे प्रायः हर व्यक्ति मे अपना प्रतिस्थर्धा और शत्रु ही नजर आता है। दोस्त या शुभ चिन्तक नही। **उदाहरण** के लिए आज अहं की भावना के चलते व्यक्तिगत सम्बन्ध खराब हो रहे है, परिवार मे विखराव आ रहा है, आपसी संघर्ष बढ़ रहे है। ऐसे मे यह सिद्धन्त दूसरे को समझने मे सहायक हो सकता है।

सन्दर्भ -

- लिन इंट. द न्यू कल्वरल हिरटी, 1908
- स्टुअर्ट कलार्क, फंफेच हिस्टोरियंस एंड अली मार्डन कल्लार पोस्ट एण्ड प्रजेन्द्र संख्यां 100, 1984
- पीटर बर्क, न्यूपर्सपेक्टिव ऑफ हिस्टोरिकल राइटिंग्स, 2001
- रणजीत गुहा, सम्पादित सबाल्टर्न स्टडीयर 1982-1994
- रोजर पर्त कल्चरल हिस्टी 1988
- विष्णु प्रभाकर, संस्कृति क्या है? साहित्य मण्डल प्रकाषन, 2007
- Bharatiya Shikhar Itihas-Education in Ancient, Mediaeval and British India. Rita Book Agency, Roy, (S- (2015)- BharaterShiksha ShikhsharAbhaijan. Kolkata

• बी.एड्. विभाग,
चन्द्रकान्ति रमावती देवी
आर्य महिला पी. जी. कालेज, गोरखपुर

शोध पत्र

मानव उत्थान हेतु बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं संतुलित दृष्टिकोण

आराधना श्रीवास्तव

सारांश -

बौद्ध शिक्षा दर्शन का सदा से मुख्य उद्देश्य रहा है। परिवर्तन ही सत्य है। इस परिवर्तन का कोई अपरिवर्तनीय आधार ही नहीं है। बौद्ध शिक्षा अहिंसा पर बल दिया। बौद्ध धर्म हिंदू धर्म से बहुत ही भिन्न नहीं है इसके सिद्धांतों में अनेक हिंदू धर्म के सिद्धांत सम्मिलित है। बौद्ध शिक्षा दर्शन समय की मांग को समझा और अपने सिद्धांतों में कुरीतियों और आडंबरों की निंदा की। बौद्ध शिक्षा दर्शन हिंदू धर्म के दोषों को सुधारने की चेष्टा की। सदाचार, संयम और पवित्र जीवन पर बल दिया, धार्मिक परिवर्तन का शिक्षा के क्षेत्र पर भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा। बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं संतुलित दृष्टिकोण के लिए शिक्षा और धर्म के प्रचार का माध्यम जन साधारण की भाषाएँ बनाई गई। बौद्ध शिक्षा में प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्र, बुद्धिमान, नैतिक, अहिंसक और धर्म निरपेक्ष बनाने का मार्ग भी बताया। बौद्ध शिक्षा दर्शन का अंतिम लक्ष्य लोगों को निर्वाण तक पहुंचाने में मदद करना है।

प्रस्तावना-

बुद्ध ने जीवन के चार आर्य सत्य बताएं दुःख, दुःख निरोध प्रतिभाग इस संसार में दुःख ही दुःख है। बौद्ध शिक्षा दर्शन के अनुसार जीवन में दुःख है और शिक्षा इन दुःखों को दूर करने का मार्ग बताती है। इसके अतिरिक्त बौद्ध दर्शन में शिक्षा की संकल्पना आत्मज्ञान अथवा आत्मबोध के रूप में भी की गई है इसके अतिरिक्त चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व का विकास सामाजिक कुशलता की उन्नति, राष्ट्रीय संरक्षण, संस्कृति का संरक्षण और प्रसार भी शिक्षा की अवधि वर्ष थी। बौद्ध शिक्षा दर्शन में यदि कोई चाहे तो जीवनपर्यंत शिक्षा ग्रहण कर सकता था। डॉ0 राधाकृष्णन ने कहा कि बौद्ध धर्म नया धर्म नहीं है अपितु हिंदू धर्म का परिवर्तित रूप है। राधाकृष्णन इंडियन फिलॉसफी बौद्ध शिक्षा दर्शन में धर्म का प्रचार का माध्यम जनसाधारण भाषाएं बनाएँ गए। डॉ0 आर0 के0 मुखर्जी के अनुसार "बौद्ध शिक्षा प्रणाली व्यावहारिक रूप में बौद्ध संघ की अनुशीलन प्रणाली है।"

बौद्ध शिक्षा में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रत्येक व्यक्ति को था। बौद्ध धर्म जातिवाद में विश्वास नहीं करता था। बौद्ध धर्म जातिवाद में भेदभाव नहीं करता था। अनुशासन प्रणाली का पालन करना आवश्यक समझता था एवं पूर्ण रूप से चरित्र और व्यवहार में परिवर्तन करना था। संघ के सभी सदस्यों के लिए समान था।

भारतीय ज्ञान का स्वरूप से संबंधित महाकाव्यों, धार्मिक ग्रंथों, पुराणों, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। अतएव समकालीन भारतवर्ष की शिक्षा में व्याप्त अव्यवस्थाओं की समाप्ति हेतु यह परम आवश्यक है कि प्राचीन भारतीय बौद्ध शिक्षा दर्शन का सर्वांगीण अवलोकन किया जाए दर्शन, नैतिक मूल्यों, जीवन मूल्यों तथा अध्यात्मिक आदर्शों से युक्त करना होगा और इसकी निरन्तरता को स्थापित करना होगा।

वर्तमान परिवेश में शिक्षा विकास की वह प्रक्रिया है जिसमें लौकिक, पारलौकिक एवं सामाजिक जीवन में सामंजस्य स्थापित करता है तथा अपने आप पर नियंत्रित करने की क्षमता का ज्ञान प्राप्त करता है, अपने आचार-विचार द्वारा सामाजिक जीवन शैली में परिवर्तन हो जाता है। परिवर्तन का यह क्रम स्थिर नहीं है अपितु गतिशील व्यक्ति का समाज मे दूसरे व्यक्तियों कि तुलना में ज्यादा आदर होता है, इस प्रकार के अनुभवों में बुद्धिजीवी विचारकों को शीघ्रता तथा सहजता से अनुग्रहीत करता है।

उद्देश्य -

बौद्ध शिक्षा दर्शन के आदर्शों और उद्देश्यों के समक्ष रखकर निमित हुई। इसी कारण उद्देश्यों और आदर्शों मे समानता अत्याधिक हैं प्राचीन आदर्शों में बौद्ध धर्म के अनुकूल रूप धारण कर लिया था मूलतत्व वही है केवल बाह्यरूप ही भिन्न था।

धर्म उत्प्रेरक शिक्षा -

प्रारम्भ में शिक्षा का उद्देश्य केवल भिक्षुओं और श्रमणों को ही शिक्षित था। लेकिन बदलते परिवेश में जनसाधारण को शिक्षित करना अज्ञानता को समाप्त करना ही उद्देश्य है क्योंकि धर्म के अनुसार अज्ञानता व अशिक्षा दुःख का कारण भी कहा है।

सहज चरित्र निर्माण -

सहज चरित्र भी शिक्षा का उद्देश्य था तब तक समाज में नैतिक स्तर बहुत नीचे गिर चुका था। सदाचार और संयम पर विशेष बल दिया तथा सात्विक जीवन और शुद्ध चरित्र का निर्माण उसका उद्देश्य हो गया।

व्यक्तित्व का विकास -

आत्म नियंत्रण अनुशासन और व्यक्तित्व का विकास करना भी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य था बौद्ध शिक्षा अंध श्रद्धा का विरोधी था।

राष्ट्रीय संस्कृति का प्रचार प्रसार -

बौद्ध शिक्षा दर्शन के अन्तर्गत विपुल साहित्य रचना हुई जिसके द्वारा राष्ट्रीय संस्कृति चिरकाल तक अक्षुण्ण है। विदेशों में धर्म प्रचार के साथ संस्कृति का प्रसार भी बौद्ध धर्म में जन शिक्षा की ओर पर्याप्त

ध्यान दिया जाता है। बौद्ध शिक्षा दर्शन में परिभ्रमण में प्रवचन करना गृहस्थ अनुयायियों को धर्म शिक्षा देना शंकाओं का समाधान।

सिद्धांत -

महात्मा बुद्ध ने चार आर्य सत्यों का प्रचार किया। उन्होंने लोगों के दुःख निवारण और उनके कल्याण के लिए ही उपदेश दिया था। बौद्ध दर्शन में वर्णित शिक्षण विधियों को निम्न प्रकार में बांटा गया था -

- प्रवचन विधि
- प्रश्नोत्तर विधि
- वाद विवाद विधि
- व्याख्यान विधि
- कक्षानाटकीय प्रणाली
- पुस्तक अध्ययन
- सम्मेलन विधि
- देशाटन एवं प्रकृति निरीक्षण
- निशिध्याय विधि

बौद्ध शिक्षा अध्ययन की आवश्यकता तथा महत्व -

बौद्ध शिक्षा दर्शन मानव को उत्थान हेतु मूल्यों को जागृत करने में मानव मूल्यों की स्थापना को सक्षम है। भारतीय जीवन दर्शन का चार मूल आधार तत्व है। बौद्ध दर्शन में इन चारों तत्व में अद्भुत समन्वय स्थापित करता है जो व्यक्ति बिना किसी अहित एवं बिना किसी को कष्ट पहुँचाए जीवन व्यतीत करता है। बौद्ध दर्शन के अंतर्गत धर्म को नैतिक आचार संहिता के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। अर्थ तथा काम को बौद्ध दर्शन मर्यादाओं के भीतर स्वीकार्य करता है। बौद्धकालीन शिक्षा के तीन अंग थे- ज्ञान की प्राप्ति हेतु संघ का होना परम आवश्यक है तत्कालीन संघ का तात्पर्य शिक्षा केंद्र से माना जाता है। ज्ञान प्राप्ति हेतु संगम प्रवेश लेना परम आवश्यक था। धर्म के ज्ञान से ही सच्चे तथा वास्तविक ज्ञान की प्राप्त होती थी।

समकालीन शिक्षा स्वरूप में जो ज्ञान व्यवस्था प्राप्त होती है वह बहुत कुछ अप्रत्यक्ष रूप में बौद्ध धर्म दरअसल से एवं प्रभावित है पाठ्यक्रम, विस्तृत, उपयोगी तथा अलग अलग थे। नालंदा, तक्षशिला बल्लभी, विक्रमशिला, काशीद, में बड़े बड़े शिक्षा केंद्रों की स्थापना थी, जहाँ सुयोग्य विद्वानों तथा आचार्यों द्वारा हजारों की संख्या में विद्यार्थियों को अलग अलग प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। इन केन्द्रों को विश्वविद्यालय की संज्ञा दी गई।

वर्तमान ज्ञान के स्वरूप में शासन की देन हैं जिससे यह ज्ञान का स्वरूप अपने कृत्रिम वातावरण के फल स्वरूप स्वाभाविक भारतीय सामाजिक वातावरण के साथ समुचित सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती, अतः शिक्षा वास्तविक जीवन से दूर, व्यावहारिकता से, औपचारिकता के शिंकाजेसे जकडी होने के कारण अपना वास्तविक स्वरूप और उद्देश्य खो बैठी है।

बौद्धकालीन शिक्षा और वर्तमान परिवेश के संतुलित दृष्टिकोण -

बौद्ध कालीन शिक्षा की वर्तमान या सामयिक परिवेश में प्रासंगिकता कि बात की जाए, तो बौद्ध शिक्षा के अनेक गुण वर्तमान परिवेश मे बहुत लाभकारी है। बौद्ध के अनेक गुण अभी भी हमारे शिक्षा मे प्रतिबिंबित होते है सामान्य विद्यालय, सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा, सभी धर्म और जाति के बालकों हेतु समान शिक्षा का अवसर, महिलाओं हेतु उच्च शिक्षा की व्यवस्था. लौकिक और सामान्य पाठ्यक्रम, पाठ्यविषयों का ज्ञान प्रदान करने का स्वरूप शिक्षा सैद्धान्तिक और प्रयोगात्मक शिक्षा व्यवस्था शिक्षा के अनेक स्तरों का विकास, खेलकूद एंव शारीरिक शिक्षा संरचना ज्ञान के विभिन्न स्तरों पर अध्यापन की निश्चित अवधि कि व्यवस्था इत्यादि गुण वर्तमान समय मे भी हमारी संरचना मे बने हुए हैं।

बौद्ध शिक्षा दर्शन के पाठ्यक्रम व संतुलित दृष्टिकोण -

बौद्ध शिक्षा दर्शन पाठ्यक्रम प्रधान थी। इसका प्रमुख उद्देश्य जीवन में निर्वाण की प्राप्ति था। अधिकांश 'सामनेर' बौद्ध धर्म शास्त्रों का अध्ययन करते थे। परन्तु उस समय जीवन उपयोगी शिक्षा का अभाव भी नहीं था। साहित्य, दर्शन, कला, व्यापार, कृषि, सैनिक आदि क्षेत्रों में भारत अपने सर्वोच्च शिखर पर आसीन था।

महात्मा बुद्ध के अनुसार स्वास्थ्य विचारों के लिए सवस्थ मस्तिष्क एवं शरीर आवश्यक माना जाता है। इसलिए बिहार में व्यायाम, खेलकूद का भी प्रबंध था। बौद्ध शिक्षा दर्शन के पाठ्यक्रम छात्र की उन्नयन में निहित है जहाँ बौद्ध शिक्षा हमारी मोक्ष का साधन है जिसका उद्देश्य सिर्फ ज्ञान पाना ही नहीं बल्कि समग्र विकास करना था, बौद्ध दर्शन से प्रेरणा लेकर हमें वर्तमान शिक्षा के पाठ्यक्रम को चेतन्य बनाना चाहिए।

बौद्ध शिक्षा दर्शन में अनुशासन व संतुलित दृष्टिकोण -

अनुशासन की पहली पाठशाला परिवार होती है और दूसरी विद्यालय। इसके बिना एक सभ्य समाज की कल्पना करना दुष्कर है। एक स्वस्थ समाज के निर्माण की संकल्पना बेकार है। शिक्षा का उद्देश्य समाज को बेहतर नागरिक प्रदान करना होता है जो स्वस्थ समाज के निर्माण में भागीदार बनकर नैतिकता का समर्थन करना हैं। समकालीन समय में ज्यादातर गुरु विद्यालय में अनुशासन के सही अर्थों से अनभिज्ञ होते हैं। वास्तव में खेल "आत्म प्रेरित अनुशासन प्राप्ति का सबसे उपयुक्त माध्यम है।"

बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं शिक्षक के संतुलित दृष्टिकोण -

बौद्ध काल में गुरु का स्थान महत्वपूर्ण था प्रत्येक विद्यार्थी के लिए किसी को गुरु बनाना अनिवार्य था इस प्रणाली में गुरुओं के अधीन अनेक छात्रों का समूह ज्ञान प्राप्त करने का काम करता था। शिक्षण संस्थानों में आपसी संबंध सुदृढ़ रखने हेतु गुरुओं द्वारा अनेक विधान बनाए जाते थे। अनेक छात्र जो बाद में शिक्षण का काम करने को इच्छुक रहते

थे उन्हें उपाध्याय कहा जाता था इस दर्शन के अनुसार उसी व्यक्ति को शिक्षक बनने का सौभाग्य प्राप्त होता था जिसे चारों आरोपियों को सत्य का ज्ञान हो जाता था वह आष्टांगिक मार्ग का अनुशरण करता था जैसे छात्रों में यह उम्मीद रखी जाती थी कि वह सद्व्यवहार करें। ठीक उसी प्रकार शिक्षकों से आशा की जाती थी कि वह अच्छा चरित्र, विद्वता आदि को प्रदर्शित करें उसका कर्तव्य था की वह अपने छात्रों में ज्ञान के भंडार समावेश करने के साथ ही विद्यार्थियों से किसी बात को न छुपाएं, छात्र के दुर्गुणों का उत्तरदायी गुरु को माना जाता था।

समकालीन शिक्षक स्वरूप में परीक्षा का खास स्थान है जो कि सुनिश्चित पद्धति है। विद्यार्थी परीक्षा पास करने में अधिक रुचि लेते हैं अधिकांश विश्वविद्यालयों में वर्तमान परीक्षा का स्वरूप छात्रों को बुद्धिमान तथा विषय गहनता की अपेक्षा और स्मरण शक्ति के प्रदर्शन को उत्साहित करती है।

बौद्ध शिक्षा दर्शन व छात्रों के लिए संतुलित दृष्टिकोण -

बौद्ध काल में बौद्ध भिक्षुओं को संघों में शिक्षा प्रदान की जाती थी उस समय अनेक राजा, महाराजाओं ने तक्षशिला, विक्रम सिंह, नालंदा जैसे बड़े विश्वविद्यालय को निर्मित करवाया था। केंद्रों में बौद्धो को शिक्षा प्रदान की जाती थी इन्हीं संस्थानों के छात्रावासों में विद्यार्थी तब तक रहे रहता था, जब तक वह संपूर्ण अध्ययन समाप्त नहीं कर लेता था। इस प्रकार छात्र गुरु के समीप ही अपना अधिकांश समय बिताते थे और गुरु सेवा में लगे रहते थे। इससे यह लाभ विद्यार्थियों को मिलता था कि विद्या अध्ययन में किसी दिन भी विघ्न नहीं पहुंचता था।

बौद्ध शिक्षा दर्शन के शैक्षिक व संतुलित दृष्टिकोण -

इस देश में शिक्षण संस्थाओं का जन्म वास्तविक रूप से देखा जाए तो, बौद्ध काल में ही आरंभ हुई थी और बाद में ये ज्ञान के केंद्र बन गए इसका अस्तित्व गुरुकुलों की भाति था। जहाँ पर किसी मठ या बिहार का मुख्य संरक्षक गुरु ही हुआ करते थे यहाँ पर भी सभी जातियां को सामान रूप से ज्ञान प्रदान किया जाता था। किसी भी प्रकार का भेदभाव का अभाव था परंतु प्राचीन ग्रंथों से यह ज्ञात होता है कि संस्थाओं के आरंभ होने पर यहाँ पर केवल इस धर्म को मानने वाले छात्र एवं छात्राओं को ही प्रवेश की अनुमति थी, बाद में सभी जाति एवं धर्मों को अनुमति दी गई। यहाँ पर दी जाने वाली शिक्षा उस समय की शिक्षा के समान ही निःशुल्क थी, तत्कालीन संस्थाओं में विक्रमशिला, बल्लभी और नालंदा से शिक्षा के प्रमुख केंद्र हुआ करते थे यहाँ का खर्च समुद्र लोगों के द्वारा दिए गए सहायता राशि से की जाती थी, यहाँ पर ज्ञान प्राप्त करने वाले छात्रों हेतु बुनियादी आवश्यकताएँ बिल्कुल निःशुल्क थी। जिनमें आवास, चिकित्सा, भोजन, परिधान आदि प्रमुख हैं।

आज हमारे देश में करोड़ों संस्थाएँ हैं जो जनतांत्रिक मूल्यों पर आधारित नहीं है और उन पर कोई बाहरी नियंत्रण भी नहीं है। संस्थाओं का स्वरूप प्राचीन भारतीय शैक्षणिक संस्थाओं के अनुरूप होना वांछनीय है।

बौद्ध शिक्षा दर्शन व प्रौढ शिक्षा एवं सतत शिक्षाए व संतुलित दृष्टिकोण -

प्रौढ शिक्षा के अंतर्गत अनपढ़ प्रौढ अपने कार्य को करते हुए शारीरिक, सामाजिक, बौद्धिक आर्थिक तथा नैतिक विकास करता है। जिससे वह एक पूर्ण मनुष्य बन सकें। वास्तव में प्रौढ शिक्षा विकलांगों या शिक्षा विहीन व्यक्तियों के **पुनर्वास का एक सामाजिक प्रयास है।**

शैक्षिक निहितार्थ -

बौद्ध दर्शन न तो केवल भौतिकवादी है और न केवल आध्यात्मिक है, इसने मध्यमा प्रतिपदा सिद्धांत का अनुसरण किया। एक दर्शन के रूप में इसके अनेक सिद्धांत उपनिषद दर्शन से बड़ा मेल खाते हैं। जैसे भव प्रपंच के मूल में अज्ञान का वजह होना, तथा कर्म सिद्धांत की विस्तापना, परंतु अनात्मवाद, क्षणिकवाद तथा शून्यवाद के सिद्धांत पूरी तरह से उपनिषद विरोधी है, अनात्मवादी होने के वजह से ही भारतीय भूमि पर ज्यादा दिनों तक न रह सका। किन्तु शिक्षा दर्शन के रूप में यह भारत के लोगों को स्पर्श किया है तथा शिक्षा के क्षेत्र में जो काम भारत वर्ष के दूसरे दर्शन न सके वह काम इस दर्शन ने किये है। यह कहना उचित होगा कि बौद्ध शिक्षा पद्धति तत्कालीन संसार की श्रेष्ठ शिक्षा प्रणाली थी किंतु आज भारतवर्ष के समाज में इसकी संरचना तथा उसके भविष्य की आवश्यकताओं की दृष्टि से कुछ तत्व ग्रहण है तथा कुछ योग्य हैं, तत्वों को आधुनिक शिक्षा में स्थापित कर सकते हैं।

सन्दर्भ -

- पाण्डेय, डॉ. गोविंद चंद (1973), बौद्ध धर्म का विकास, हिन्दी समिति, सूचना विभाग उ०प्र० लखनऊ, पृष्ठ 213।
- उपाध्याय, भरत सिंह (2011), बौद्ध दर्शन, तथा अन्य, भारतीय प्रकाशक हिन्दी मण्डल, वि०स०पृष्ठ 67।
- आचार्य नरेंद्र देव (2011), बौद्ध धर्म दर्शन, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, वाराणसी पृष्ठ 124।
- राय, राम कुमार (1986) बौद्ध न्याय, भाग-1 व भाग-2, चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, पृष्ठ 156।
- ओड. यल. के. (1986). शिक्षा के नूतन आयाम, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, राजस्थान पृष्ठ-19।

• छात्राध्यापिका,
बी.एड्. प्रथम सेमेस्टर,
चन्द्रकान्ति रमावती देवी आर्य महिला पी.जी. कालेज, गोरखपुर।

बौद्ध रामकथा : स्वरूप एवं प्रतिपाद्य

प्रो. बीर पाल सिंह यादव

रामकथा भारत की सबसे अधिक प्रचलित और पुरानी कथा है। राम कथा को आधार बनाकर भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी बहुत सारा साहित्य रचा गया है। एक तरह से देखा जाए तो रामकथा विश्व साहित्य में भारतीय संस्कृति और धर्म साधना का प्रतिनिधि ग्रंथ है। इसे हम भारतीय काव्य चेतना का प्रतिनिधि ग्रंथ भी कह सकते हैं। रामकथा और उसके प्रसंगों के विभिन्न रूप लोक में प्रचलित रहे हैं। लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य दोनों में ही रामकथा का रूप मिलता है। रामकथा को हिंदुओं के अतिरिक्त बौद्ध और जैन धर्मावलंबियों ने भी अपने काव्य का विषय बनाया। पालि भाषा में जितने भी रामकथा विषयक ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं, वे सब बौद्ध मतावलम्बी विद्वानों द्वारा रचे गए हैं। इसलिए बौद्ध रामकथा बौद्ध धर्म के सिद्धांतों के अनुरूप ही रची गई है।

बौद्ध धर्म भारत का प्रसिद्ध धर्म है, जिसका प्रचार-प्रसार विदेशों तक हुआ। बौद्ध धर्म में त्रिपिटक की बहुत महिमा है। त्रिपिटक के अंतर्गत तीन ग्रंथ आते हैं- विनय पिटक, अभिधम्म पिटक और सुत्त पिटक। विनय पिटक में भिक्षुओं के लिए संयम एवं आचरण आदि नियमों का वर्णन किया गया है। अभिधम्म पिटक में अध्यात्म विद्या एवं दार्शनिक विचारों का प्रतिपादन किया गया है। सुत्त पिटक में महात्मा गौतम बुद्ध के उपदेश एवं वचन संग्रहीत हैं। सुत्त पिटक के पाँच निकाय हैं- दीघ निकाय, मज्झिम निकाय, संयुक्त निकाय, अंगुत्तर निकाय और खुद्दक निकाय। खुद्दक निकाय के अंतर्गत पंद्रह ग्रंथों की गणना होती है। इन पंद्रह ग्रंथों में एक 'जातक' है। जातक शब्द 'जन्' धातु में 'क्त' प्रत्यय जोड़कर बना है, जिसका अर्थ है 'जन्म संबंधी'। बुद्धत्व प्राप्त करने से पूर्व गौतम बुद्ध बोधिसत्त्व कहलाए। बोधिसत्त्व शब्द का अर्थ है बोधि प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील साधक। "बोधिसत्त्व वह भावरूप है जिसने निजता का अन्त कर दिया है और जो करुणा, मैत्री, मुदिता आदि से परिपूर्ण होकर परहित में सर्वस्व न्यौछावर कर देता है। भगवान बुद्ध अपने पूर्वजन्मों में ऐसे ही बोधिसत्त्व रहे हैं जिनकी जातक कथाएं उनके विभिन्न पूर्वजन्मों में पर दुःखनिवारण के अन्यतम उदाहरण हैं। बुद्धत्वकाल में भी अपने महापरिनिर्वाण काल तक उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन दूसरों के दुःख को शान्त करने में लगाया।"[1] बुद्धत्व प्राप्ति से पूर्व दूसरों का दुःख दूर करने के लिए ही वे अपने पूर्व जन्मों में बोधिसत्त्व का आचरण करते हुए पृथ्वी पर बार-बार जन्म लेते रहे। बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात् महात्मा गौतम बुद्ध ने सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याण के लिए उपदेश दिया और अपने शिष्यों को लोककल्याण के लिए प्रेरित किया। ए. एल बाशम ने महात्मा गौतम बुद्ध की महानता को लक्ष्य कर लिखा है, "यदि विश्व के ऊपर उनके मरणोत्तर प्रभावों के आधार पर भी उनका मूल्यांकन किया जाए तो वे भारत में जन्म लेने वाले महानतम व्यक्ति थे।"[2] माना जाता है कि जातक कथाएं महात्मा गौतम बुद्ध के समय से प्रचलित हैं और जातक कथाओं में बुद्ध के पूर्वजन्मों की कहानियाँ हैं। अधिकांश कहानियों में गौतम बुद्ध मुख्य पात्र के रूप में चित्रित हैं। बौद्ध धर्म में जातक कथाओं का बहुत महत्व है। जातक कथाएं विश्व की सबसे पुरानी लिखित कहानियाँ मानी जाती हैं। मूल रूप से पालि भाषा में रचित 'द जातक' का अंग्रेज़ी अनुवाद वी. फॉसबोल (V। FAUSBOLL) ने सात भागों में किया है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में (1877-1897) ट्रबनर एंड कंपनी, लंदन से इस ग्रंथ का प्रकाशन हुआ। इन्हीं जातक कथाओं में से तीन में रामकथा की रूपरेखा मिलती है। इनमें 'दशरथ जातक' में रामकथा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इसलिए कुछ बौद्ध मतावलम्बियों की मान्यता है कि 'सुत्तपिटक' के 'खुद्दक निकाय' में उल्लिखित 'दशरथ जातक' वाल्मीकि रामायण से पहले की रचना है। पाश्चात्य विचारक ए. वेबर ने अपनी पुस्तक 'ऑन दि रामायण' में सबसे पहले यह मत प्रतिपादित किया कि 'दशरथ जातक' और होमर के 'इलियड' में रामकथा का मूलरूप विद्यमान है। वेबर का मानना था कि 'दशरथ-जातक' तीसरी शताब्दी ईसापूर्व की रचना है। दिनेशचंद्र सेन आदि आधुनिक भारतीय विद्वान भी ए. वेबर के मत से सहमत हैं। दिनेशचंद्र सेन रामकथा के दो स्रोत मानते हैं। इन दो स्रोतों में से एक स्रोत 'दशरथ जातक' है। फ़ादर क़ामिल बुल्के ने अपने ग्रंथ में ए. वेबर के मत का उल्लेख करते हुए लिखा है, "डॉ. वेबर के अनुसार रामकथा का मूलरूप बौद्ध दशरथ-जातक में सुरक्षित है। इस कथा में सीताहरण तथा रावण से युद्ध का कोई उल्लेख नहीं मिलता। डॉ. वेबर का अनुमान है कि सीताहरण की कथा का मूल स्रोत संभवत: होमर में वर्णित पैरिस द्वारा हेलेन का हरण है और लंका में जो युद्ध हुआ, उसका आधार संभवत: यूनानी सेना द्वारा ट्राय का अवरोध है।"[3]

'दशरथ जातक' में 461 कथाएं हैं। बौद्ध रामकथा में राम बोधिसत्त्व और एक आदर्श चरित्र हैं। बौद्ध रामकथा के अनुसार वाराणसी के राजा दशरथ के तीन पुत्र थे। राम और लखन सगे भाई थे और भरत उनके सौतेले भाई थे। इस कथा में राम बोधिसत्त्व रूप में हैं। बौद्ध रामकथा में सीता राम की बहिन और पत्नी के रूप में चित्रित हैं। शाक्य वंश की उत्पत्ति की कथा से पता चलता है कि परिस्थितिवश शाक्य वंश में बहिन से विवाह करने की रीति चलन में आई। फ़ादर क़ामिल बुल्के ने 'दशरथ-जातक' का परिचय देते हुए लिखा है, "यह जातक जिस जातकट्ठवण्णना में पाया जाता है। वह पाँचवीं शताब्दी ई० की एक सिंहली पुस्तक का पाली अनुवाद है। इस सिंहली पुस्तक में जो

कथाएँ पाई जाती हैं, वे प्राचीन पाली गाथाओं की टीका के रूप में लिखी गई हैं। प्रत्येक जातक में पहले 'वर्तमान कथा' (पच्चुप्पन्न वत्थु) दी जाती है जिसमें यह बतलाया जाता है कि किस अवसर पर महात्मा बुद्ध ने इस जातक को कहा है। इसके बाद 'अतीत कथा' (अतीतवत्थु) उद्धृत है, जिसे वास्तविक जातक मानना चाहिए। अन्त में महात्मा बुद्ध 'जातक का सामंजस्य' (समोधान) प्रस्तुत करते हैं जिसमें वह वर्तमान कथा और अतीत कथा के पात्रों की अभिन्नता प्रकट करते हैं।"[4]

'दशरथ जातक' में रामकथा महात्मा बुद्ध द्वारा जैतवन में किसी गृहस्थ को बताई गई है। कथा के अनुसार किसी गृहस्थ के पिता की मृत्यु हो गई। शोकाकुल गृहस्थ को मृत व्यक्ति के प्रति शोक न करने का संदेश देते हुए महात्मा बुद्ध ने उस गृहस्थ को 'दशरथ-जातक' सुनाया। इस कथा में दशरथ की मृत्यु हो जाने के संदेश को सुनकर भी राम के विचलित न होने का वर्णन है। कथा में बताया गया है कि वाराणसी में राजा दशरथ राज्य करते थे। उनकी बड़ी रानी के दो पुत्र (राम-पंडित और लक्खण) और एक पुत्री (सीता), तीन संतान थीं। बड़ी रानी की मृत्यु के पश्चात् दूसरी रानी का एक पुत्र (भरत) पैदा हुआ। राजा ने प्रसन्नतापूर्वक रानी को एक वरदान दिया। पुत्र भरत के सात वर्ष का हो जाने पर रानी ने राजा से अपने पुत्र के लिए राज्य माँगा। राजा ने स्पष्ट मना कर दिया। रानी के बार-बार अनुरोध करने पर राजा अपने पुत्रों के प्रति किसी षड्यंत्र की आशंका से भयभीत हो गया और उसने दोनों पुत्रों को बुलाकर किसी अन्य राज्य या वन में जाने के लिए कहा। राजा ने भविष्यवक्ताओं को बुलाकर अपनी मृत्यु की अवधि पता की। भविष्यवक्ताओं द्वारा बारह वर्ष की अवधि बताई गई। राजा ने अपने पुत्रों से बारह वर्ष बाद आकर राज्य पर अधिकार करने के लिए कहा। सीता भी पिता से आज्ञा लेकर दोनों भाइयों के साथ चली गईं। तीनों हिमालय में आश्रम बनाकर रहने लगे। राजा दशरथ पुत्रों के वियोग में आठ वर्ष में ही मृत्यु को प्राप्त हो गए। रानी ने पुत्र भरत को राजा बनाने का प्रयास किया लेकिन सफल नहीं हो सकीं क्योंकि अमात्यों और स्वयं भरत ने इसका विरोध किया। भरत चतुरंगिणी सेना लेकर राम को वापिस लाने के लिए वन की ओर गए। आश्रम के पास सेना को छोड़कर भरत थोड़े अमात्यों के साथ राम के पास गए और पिता के देहावसान का समाचार देकर रोने लगे। राम पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर न तो रोये और न ही शोक किया। संध्या के समय लौटकर आए लक्खण और सीता ने भी पिता का देहान्त सुनकर शोक और रुदन किया। तब रामपंडित ने उनको धैर्य देने के लिए अनित्यता का धर्मोपदेश दिया, जिसे सुनकर सबका शोक मिट गया। राम द्वारा गाथा दो से बारह तक अनित्यता का उपदेश दिया गया है। फ़ादर क़ामिल बुल्के ने अपने ग्रंथ 'रामकथा उत्पत्ति और विकास' में इस उपदेश को उद्धृत किया है -

केन रामप्यभावेन सोचितब्वं न सोचसि।
पितरं कालकतं सुत्वा न तं पसहते दुखं
॥२॥

'हे राम! शोक का कारण होते हुए भी आप किस धैर्य के बल पर शोक नहीं करते। पिता का देहान्त सुनने पर भी आप दुःख के वशीभूत नहीं होते।'

यं न सक्का पालेतुं पोसेन लपतं बहुं।
स किस्स विञ्ञु मेधावी अत्तानं उपतापये
॥३॥

'बहुत विलाप करने पर भी जो रखा नहीं जा सकता, उसके लिए बुद्धिमान् शोक नहीं करता।'

एको व मच्चो अच्चेति एको व जायते कुले।
सञ्जोगपरमा त्वेव संभोगा सब्बपाणिनं
॥१०॥

'मनुष्य अकेला मर जाता है और अकेला कुल में जन्म लेता है। सब प्राणियों का सुख एक दूसरे के सम्बन्ध पर निर्भर रहता है (अथवा सब प्राणियों के सुख का उद्देश्य है, उनका संयोग या मैत्री)।'

तस्सा ही धीरस्स बहुस्सुतस्स
सम्पस्सतो लोकमिमं परं च।
अञ्ञाय धर्मं हृदयं मनं च।
सोका महंतापि न तापयंति ॥ ११॥

अतः जो इहलोक और परलोक (का यथार्थ रूप) देखने वाले और धर्म को जानने वाले धीर और श्रुतिमान् मनुष्य होते हैं, इनका हृदय और मन महान् शोक से भी संतप्त नहीं होता।"[5]

भरत के बहुत अनुरोध करने पर भी राम ने बारह वर्ष से पूर्व राज्य में लौटकर चलना स्वीकार नहीं किया। तब भरत राम की तृण-पादुकाएँ तथा लक्खण और सीता के साथ वाराणसी लौट आए। बारह वर्ष की अवधि व्यतीत हो जाने पर राम लौटकर वापिस आए, अपनी बहिन सीता से विवाह किया और सोलह हज़ार वर्ष तक राज्य करने के पश्चात् स्वर्गारोहण किया। अंत में महात्मा बुद्ध समोधान करते हुए स्पष्ट करते हैं कि उस समय महाराज शुद्धोदन महाराज दशरथ थे; महामाया (बुद्ध की माता) राम की माता, यशोधरा (राहुल की माता) सीता, आनन्द भरत थे और स्वयं महात्मा गौतम बुद्ध रामपंडित थे। रामकथा के मर्मज्ञ फ़ादर क़ामिल बुल्के ने विविध विद्वानों जैसे ए वेबर, हरमन याकोबी, दिनेशचंद्र सेन आदि के मतों की समीक्षा के बाद 'दशरथ-जातक' के संबंध में यह निष्कर्ष दिया है कि, "दशरथ-जातक का वृत्तांत ब्राह्मण रामकथा का विकृत रूप मात्र है।"[6]

प्राचीन बौद्ध साहित्य में रामकथा-सम्बन्धी अन्य जातक भी हैं, जिनकी कथा में थोड़ा सा बदलाव दिखाई देता है। बौद्ध रामकथा किंचित परिवर्तनों के साथ 'अनामकं जातक' में मिलती है। तीसरी शताब्दी ई० के ग्रंथ 'अनामकं जातक' का चीनी भाषा में अनुवाद किया जा चुका है। 'अनामकं जातक' में उल्लिखित रामकथा में राम और सीता का वनवास, सीता-हरण, जटायु का वृत्तांत, बालि और सुग्रीव का युद्ध, सेतुबन्ध, सीता की अग्निपरीक्षा आदि प्रसंगों के संकेत मिलते हैं। इस रामकथा के अनुसार किसी समय बोधिसत्त्व एक महान् राजा था। वह दान, प्रियवचन, न्याय और समभाव से अपनी प्रजा का पालन करता था। उसका मामा भी

राजा हो गया था। वह लालची, निर्दयी और दुष्ट प्रवृत्ति का था। उसने बोधिसत्त्व के राज्य पर आक्रमण करने के लिए सेना तैयार की। बोधिसत्त्व ने अपने स्वार्थ के लिए अनगिनत मनुष्यों के प्राण संकट में न डालकर स्वयं राज्य छोड़ने का निश्चय किया। इस प्रकार इस रामकथा में राम को उनकी सौतेली माँ के कारण पिता के द्वारा वनवास नहीं दिया जाता बल्कि राम के मामा द्वारा राज्य पर आक्रमण की तैयारियों का समाचार पाकर वे स्वेच्छा से अपना राज्य छोड़ देते हैं। बोधिसत्त्व मंत्रियों को राज्य सौंपकर अपनी रानी के साथ वन चले गए। मामा ने बोधिसत्त्व के राज्य पर अधिकार कर लिया। पहाड़ी वन में निवास करते हुए एक दिन बोधिसत्त्व की रानी का एक दुष्ट नाग ने अपहरण कर लिया। उस समय बोधिसत्त्व फल लेने गए थे और नाग ऋषि का रूप धारण करके आया था। रास्ते में नाग को एक विशाल पक्षी ने रोकने का असफल प्रयास किया, नाग ने पक्षी को मारा और उसका दाहिना पंख तोड़ डाला। नाग रानी को लेकर समुद्र में स्थित अपने द्वीप में चला गया। वापिस आने पर बोधिसत्त्व अपनी रानी को न पाकर बहुत दुखी हुए और धनुष-बाण लेकर पर्वतों में इधर-उधर घूमने लगे। रानी की खोज में भटकते हुए बोधिसत्त्व को एक बड़ा वानर मिला। वानर ने बताया कि उसके चाचा ने उसका राज्य छीन लिया है। बोधिसत्त्व ने भी आपबीती कही और परस्पर सहायता हेतु मित्र बन गए। वानर ने बोधिसत्त्व की सहायता से अपने चाचा से युद्ध किया। बोधिसत्त्व को धनुष लक्ष्य करते देखकर वानर का चाचा भाग गया। इस तरह कथा में बालि वध का प्रसंग बौद्ध सिद्धांतों के अनुरूप परिवर्तित रूप में चित्रित हुआ है। इस कथा में राम को धनुष लक्ष्य करते देखकर बालि के भयभीत होकर भाग जाने के चित्रण से स्पष्ट है कि राम के द्वारा बालि वध नहीं कराया गया है क्योंकि बौद्ध रामकथा के राम बोधिसत्त्व हैं।

वानर ने अपने साथियों को बोधिसत्त्व की रानी की का पता लगाने का आदेश दिया। वानरों को एक घायल पक्षी मिला, जिसने बताया कि एक नाग ने रानी को चुराया है। वानर की सेना के समुद्र पार करने में असमर्थ होने पर इन्द्र ने छोटे वानर का रूप धारण कर उनकी सहायता की। वानर सेना ने नाग के द्वीप को घेर लिया। छोटे वानर यानि इन्द्र की सहायता से नाग, राजा के बाण से मारा गया और रानी को मुक्त करा लिया गया। अंत में महात्मा बुद्ध समोधान करते हुए बताते हैं कि उस समय वे राजा थे, गोपा रानी थी, मामा देवदत्त था और मैत्रेय इन्द्र था।

'दशरथ जातक' एवं 'अनामकं जातक' के अलावा बौद्ध साहित्य के एक और ग्रंथ 'दशरथकथानम्' में भी रामकथा मिलती है। 'दशरथकथानम्' की कथा के अनुसार जम्बू द्वीप में दशरथ नाम का एक राजा राज्य करता था। राजा की चार रानियों से एक-एक पुत्र पैदा हुए। राजा को तीसरी रानी अधिक प्रिय थी। राजा ने रानी से अपनी इच्छा की कोई चीज माँगने के लिए कहा। रानी ने उस समय कोई इच्छा प्रकट नहीं की। राजा बीमार हो गए, उन्होंने अपने बड़े पुत्र राम का राज्याभिषेक किया। रानी ने राजा के दिए हुए वचन का स्मरण दिलाते हुए अपने पुत्र भरत का राज्याभिषेक करने की इच्छा प्रकट की। वचनबद्ध राजा रानी की बात सुनकर दुखी हुआ। रामण यानि लक्ष्मण ने अपने बड़े राम भाई राम से शक्ति प्रदर्शन की बात कही लेकिन पितृभक्त राम ने ऐसा करने से मना कर दिया। राजा ने अपने दोनों पुत्रों को वनवास देकर बारह वर्ष बाद बाद लौटने का आदेश दिया। भरत उस समय राज्य में नहीं थे। भरत राजा दशरथ की मृत्यु के बाद लौटकर आए। वह सेना के साथ राम को लौटाने के लिए गए। राम ने पिता की आज्ञा तोड़ने से मना कर दिया। तब भरत राम की चमड़े की खड़ाऊँ लेकर अयोध्या लौट आए और खड़ाउंओं को राजसिंहासन पर रखकर शासन की देख-भाल करने लगे। वनवास की अवधि समाप्त होने पर राम अपने देश वापिस या गए। भरत ने राम से राज्यभार ग्रहण करने की प्रार्थना की। पहले राम ने अस्वीकार किया परन्तु भरत के बहुत आग्रह करने पर राज्यभार स्वीकार किया। सब लोग अपने-अपने धर्म का पालन करने लगे। इस प्रकार इस कथा में सीता का कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

उपर्युक्त बौद्ध रामकथाओं का उल्लेख करने के बाद फ़ादर क़ामिल बुल्के ने यह अनुमान लगाया है कि संभवत: कालांतर में बौद्ध धर्म के अनुयायियों में रामकथा की लोकप्रियता घटने लगी थी। इसलिए अन्य बौद्ध ग्रंथों में रामकथा के प्रसंग नहीं मिलते।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि बौद्ध धर्म के अनुयायियों ने ई. सन् के कई शताब्दियों पहले राम को बोधिसत्त्व के रूप में स्वीकार किया। यह रामकथा के प्रति आम जन की लोकप्रियता और आकर्षण का प्रमाण है। इस प्रकार रामकथा की परम्परा कभी न समाप्त होने वाली परम्परा है जो हर युग के संदर्भों से जुड़कर समाज को दिशा देती रही है। आज इक्कीसवीं शताब्दी तक अनेक रचनाकारों की कलम से विविध रूपों में निसृत होकर भी रामकथा की प्रासंगिकता, उपादेयता और लोकप्रियता में कमी नहीं आई है।

संदर्भ:

1. बोधिसत्त्व और उनकी चर्या, भवानीशंकर शुक्ल, ज्ञानायनी, अप्रैल-सितम्बर 2005
2. द वन्डर दैट वाज इण्डिया, ए. एल बाशम, पृष्ठ 256
3. रामकथा उत्पत्ति और विकास, फ़ादर क़ामिल बुल्के, पृष्ठ 79
4. वही, पृष्ठ 44
5. वही, पृष्ठ 63-65
6. वही, पृष्ठ 85

• अध्यक्ष, हिंदी विभाग
मानविकी तथा सामाजिक विज्ञान संकाय
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय महेंद्रगढ़,
पिनकोड- 123031, हरियाणा
मो. 8055290240/ 7020925102

Research Paper

Contribution of Buddhism to the Indian Culture

Ranjana Singh*
Prof. M.C. Shrivastava**

Abstract -
As a result of the religious revolution that took place in the Sixth Century B.C. another religion similar to Jainism emerged called Buddhism. The founder of Buddhism was Mahatma Buddha, one of the world's leading religious reformers and philosophers, who attacked the system of Brahmin religion and Propounded new principles based on moral values. This religion had a wide impact on Indian culture. Because of which people started giving up violence. Buddhism had a significant impact on every area of Indian culture. Be it political or literary, religious or economic.

Introduction -

Buddhism was a modified form of Hindu religion and both the religions had many similarities .Despite this; Buddhism had a wide impact on Indian Culture. Mahatma Buddha had won the hearts of the common people with his high character, influential and attractive personality. He was influenced by "Spirit of Bahujan", Welfare. Mahatma Buddha's Simplicity, Spiritual Practice, Irrefutable, Logic and Powerful teachings influenced everyone from the rank and file to the king. Mahatma Buddha strongly opposed the caste system but he also advocated freedom, has focused on equality and morality. Buddhism has left its mark in every area of Indian Culture. Although Buddhism itself became extinct from India, its influence proved to be life-giving for Indian Culture.

Literary Contribution -

Buddhism added to the corpus of Indian literature. Jatakas literature written by Buddhists in Pali languages throws light on various aspects of India. Jatakas literature throws light on various aspects of India. The economic, social and religious condition of contemporary India can be clearly understood from Jataka literature. Apart from Jataka literature, many Buddhist texts written in Sanskrit language are invaluable treasures of Indian literature. Among these texts, Divyavadana, Buddhacharita, Saundaranand, Sariputra Prakaran, Sadharmpundarika, Manjushree – Moolkalp, Lalitvistara, Amarkosh, Milindpanho, Mahavastu and Lankavatarsutra, Amarkosh Milindpanho, Mahavastu and Lankavatar are Prominent. Which has not only literary but also historical importance? Apart from this, Buddhism also made an important contribution in the development of folk languages.

Philosophical Contribution-

Buddhism laid special emphasis on intellectual and freedom of thought .Mahatma Buddha was of the opinion that work should be done only by being self–enlightened. Many philosophical ideologies like Samutpada, Shunyavad, Yogachara, Sarvastivada, Sautantrik, Vijnanavada and Anityavada etc. emerged. No person can be called an Acharya of Indian Philosphy without studying the work of Asanga, Vasumitra, Dinganaga and Dharmakirti and the Buddhist Philosophers.

Art Contribution -

The greatest influence of Buddhism is visible on Indian art. *The artifacts made under Buddhist art are amazing in beauty and skill.*The stupas of Sanchi, Bharhut and Amravati, the rock- pillar of emperor Ashoka and the Buddhist cave of Karle are the contribution of Buddhism. The Sanchi Stupa and its archway and altar are wonderful example of art. The Buddhist temple of Gaya is the finest expression of Buddhist Art. There are unique works of architecture and painting of the Buddhist period in the caves of Ajanta, Ellora, Barbra and Bagh. The pace rhythm and sensitivity of Buddhist

 ISSN–2456–0413

art seems to be lacking in western art. The power to generate emotions and feelings in paintings was also inherent in Buddhist art. The influence of Buddhism is evident on Gandhara art and Mathura art as well as on Buddhist art.

Establishment of Sangha -

The Credit for establishment the Sangha system goes to Buddhism only. These unions awakened democratic sentiments among the common people because the bases of these unions were democratic. Awakening democratic sentiments among the masses was undoubtedly an achievement of Buddhism.

Spread of Indian Culture -

A great contribution of Buddhism was the promotion and spread of Indian culture to other countries. Like China, Japan, Sri Lanka, Tibet, Myanmar, Java, Sumatra, Cambodia etc. to propagate Indian religion and culture. As a result, Scholars from foreign countries also started coming to India to quench their thirst for knowledge. In this way, cultural relations of India were established with other countries and gradually Indian culture had a wide impact on these countries.

Political and Cultural Influences -

Buddhism tried to establish, political and social unity in India. People's language and people's participations strengthened the feelings of nationalism .On one hand Buddhism made efforts for the political unity of India, on the other hand, he taught non- violence to the kings , due to which they were not interested in wars .The obviously had many side effects . Indian rulers could not face foreign invaders due to which they lost interest in war. This obviously had many side effects. Indian rulers could not face the foreign invaders due to which India's political independence was in danger.

Religious Contribution -

The popularity of Buddhism inspired the followers of Brahmanism to introspect, because the emergence of Buddhism was due to the reaction against Brahmanism. In the religious, field, Buddhism was given the maximum importance in such a society when the common people were tired of the evil practices, violent sacrifices and complex rituals of Brahmin religion. Buddhism emerged as one such religion which did not have the above mentioned defects. Buddhism presented a simple understandable and ideal religion to the public in every respect.

Conclusion -

From the above description it becomes clear that Buddhism has a contribution in every field of Indian culture. At a time when the common people prefer ostentation, simplicity and understanding in place of Brahmin religion and every field has contribution. At a time when the common people needed a simple religion without ostentation in place of Brahmin religion, Buddhism fulfilled their wishes. Buddhism took Indian religion and culture to distant countries and added new dimensions in the fields of literature, philosophy and art.

But the non-violent policy of Buddhism showed its followers the path to religious victory, which was appropriate from the point of view of humanity, but when foreign invaders came to India, the power of the sword was needed. As a result, India became slave, but despite this defect, the importance of Buddhism cannot be denied.

References:

- Singhnia Nitin, Indian Art and Culture, 2013,p. 1.22
- Tiwari Jalaj Kumar, Madhya Pradesh Mein Bauddha Kala Ek Addhyan, 2001,p. 5
- Mittal A.K. , Indian History, 2022,p.150
- Ahirwar Ramkumar, Bauddha Dharma Ka Itihas, 2015, p.102
- Brown Percy, Indian Architecture, Buddhist and Hindu Periods, 2014, p.13
- Cunningham Alexander, Archaeology Survey of India , part10, p. 38
- Marshall John , A Guide to Sanchi, 1918, p.38
- Rao M., An Early Buddhist stupas, Chaityas and Monasteries from 2nd BC to 2nd AD, p.172

*Research Scholar, A.P.S. University Rewa (M.P.)

**Research Guide A.P. S. University Rewa (M.P.)

Research Paper

Buddhist Perspectives On Environmental Ethics

Anant Kumar Pathak

Abstact -
This research paper attempts to investigate the intersection of Buddhist teachings on interconnectedness and compassion within the realm of environmental ethics. Buddhism, rooted in the principles of karma, interdependence (pratityasamutpada) and compassion (karuṇa), offers a unique philosophical framework for comprehending humanity's relationship with the environment. Through an exploration of these foundational concepts, this paper elucidates their significant implications for modern environmental ethics. The interconnectedness doctrine elucidates the intricate web of relationships binding all existence, highlighting humanity's inseparable link with the natural world. Complementing this is the doctrine of compassion, fostering a deep sense of empathy and responsibility towards all sentient beings. Together, these principles form the bedrock of Buddhist environmental ethics, advocating for conscientious stewardship of the environment and a compassionate approach to sustainable practices. By analyzing Buddhist texts, teachings, and contemporary applications, this paper illuminates how these profound philosophical tenets provide invaluable guidance for navigating and mitigating pressing environmental challenges. It underscores the potential of incorporating these teachings into environmental discourse to inspire ethical action, foster sustainable behaviors, and promote a harmonious coexistence between humanity and the natural world.

Keywords - Buddhist Ethics, Compassion, Environmental Ethics, Interconnectedness, Sustainability

Introduction -

Environmental ethics stand as a critical framework guiding human behavior and interaction with the natural world, especially in the face of pressing global ecological concerns. It encompasses the moral principles that inform our responsibilities and duties toward the environment, emphasizing the need for sustainable practices to ensure the well-being of ecosystems and species diversity (Callicott, 1989). Rooted in ancient wisdom, Buddhism presents a profound philosophical system founded on two fundamental principles: interconnectedness (pratityasamutpada) and compassion (karuṇa). Inter-connectedness encapsulates the Buddhist belief in the intricate and inseparable connections among all phenomena in the universe, asserting that nothing exists in isolation (Gethin, 1998). This principle underscores the interdependence of humanity and the environment, highlighting the reciprocal relationship between human actions and nature's balance.

Compassion, a core value within Buddhism, extends beyond mere empathy; it reflects an active desire to alleviate suffering in all sentient beings (Harvey, 1990). This compassionate outlook extends to the environment, fostering a deep sense of responsibility for the welfare of all living entities, including the natural world. This paper aims to investigates the synergies between Buddhist teachings on interconnectedness and compassion and the realm of environmental ethics. It seeks to explore how these ancient philosophical tenets can illuminate contemporary environmental discourse, offering insights and guidance for fostering sustainable practices.

Early Buddhist teachings contained inherent respect and appreciation for nature. The Jataka tales, for instance, depict the Buddha in previous lives as various animals, emphasizing the

interconnectedness between humans and the natural world (Edelglass, 2021). Moreover, the Buddha frequently retreated to natural settings for meditation, emphasizing the spiritual connection between humanity and the environment. Early Buddhist monastic codes included regulations for environmentally conscious living, such as admonitions against damaging plant life or harming animals (Edelglass, 2021). Throughout history, Buddhist practitioners and scholars have acknowledged the intrinsic relationship between humanity and nature, recognizing the environment as a source of spiritual insight and reflection (Edelglass, 2021). This historical reverence for nature within Buddhist teachings laid the groundwork for ethical considerations regarding humanity's interaction with the environment. By examining these intersections, the paper endeavors to highlight the relevance of Buddhist principles in guiding ethical environmental action in the modern world.

Karma in Buddhism -

The mechanism of the law of karma revolves around the ethical value attached to each action and its repercussions on an individual's future experiences. Popularly understood, actions towards other beings circle back to affect the individual in subsequent lives. Karma embodies a certain inevitability, as one cannot evade the consequences of their actions. However, it also signifies the belief that individuals possess the ability to consciously shape their future conditions, thus creating their own karma. This perspective offers a potential pathway out of challenging situations, including environmental crises. The 14th Dalai Lama emphasizes the practicality of believing in karma's laws in everyday life. Acknowledging the connection between actions and their outcomes prompts greater attentiveness towards the consequences of personal actions on one's life and the lives of others. This mindfulness cultivates a sense of responsibility and awareness in individuals, influencing their behaviors and their impact on the world around them.

Characteristics of karma identified by Geshe Jampa Thinley :

Certainty of Karma: The law of karma dictates that the actions we engage in determine the outcomes we experience. Negative actions yield negative results; harming others cannot lead to personal happiness. This law remains constant, an unchanging facet of nature.

Cause and Effect : Every phenomenon is grounded in causes; positive actions naturally yield positive outcomes. Assurance lies in the understanding that positive actions inevitably bring about wholly positive results.

Persistence of Actions: The effects of our actions endure; they do not simply vanish or dissipate over time. Every action leaves an imprint that contributes to our experiences.

Multiplicative Nature: Like ripples expanding from a stone cast into water, every action generates multiple consequences. A single positive action can yield abundant positivity, just as a negative deed can result in a multitude of adverse outcomes.

Interconnectedness in Buddhism -

The concept of interconnectedness (pratityasamutpada) forms the cornerstone of Buddhist philosophy, asserting that all phenomena are interdependent and interconnected. In the Mahayana tradition, the doctrine of dependent origination elucidates this interconnectedness, emphasizing that all things arise in dependence upon multiple causes and conditions (Gethin, 1998). This principle implies that nothing exists independently; rather, everything is contingent upon other elements, forming an intricate web of relationships.

Buddhism perceives interconnectedness not just as a philosophical notion but as an experiential truth. The teachings emphasize the understanding that each individual's existence is entwined with the entirety of the universe. This interconnectedness extends beyond the human realm to encompass all living beings and the environment, emphasizing the interdependence of all life forms and their environments (Thich Nhat Hanh, 2015).

Compassion in Buddhist Ethics -

Compassion, known as karuṇā in Buddhism, embodies profound empathy and the genuine desire to alleviate suffering in all sentient beings (Harvey, 1990). It is a guiding ethical principle that underpins the practice of ahimsa, or non-harming. This principle of non-harming extends not only to human beings but to all forms of life, recognizing the inherent value and interconnectedness of all living entities (Dalai Lama, 1999).Moreover, compassion in Buddhism transcends mere sympathy; it is an active force that motivates individuals to act selflessly for the well-being of others. It fosters a sense of responsibility and care for all beings, encouraging ethical conduct and promoting harmony within the interconnected web of existence.

Buddhist environmental ethics find their foundation in the profound principles of interconnectedness (pratītyasamutpāda) and compassion (karuṇā), embodying a holistic understanding of the relationship between humanity and the natural world. These principles, deeply ingrained in Buddhist philosophy, form the bedrock of ethical considerations regarding environmental stewardship.

Interconnectedness and Environmental Ethics -

Central to Buddhist thought is the recognition of the interconnectedness of all phenomena. This principle underscores the intimate connection between human beings and the environment, emphasizing that human existence is inseparable from the natural world (Gethin, 1998). Buddhist teachings stress that actions affecting the environment reverberate through the intricate web of existence, impacting not only present but also future generations.

The doctrine of dependent origination, elucidating the interdependence of causes and conditions, accentuates the ethical implications of human actions on nature. It asserts that every action-be it constructive or destructive-affects the balance and harmony of the environment. This understanding fosters a sense of responsibility and ethical consideration for the well-being of the entire ecosystem, advocating for mindful and harmonious interaction with nature (Thich Nhat Hanh, 2015).

Compassion and Responsible Stewardship -

Compassion, a cornerstone of Buddhist ethics, extends beyond human-centric concerns to encompass all sentient beings and the environment. The ethical imperative of karuṇa inspires a profound sense of empathy and care for the natural world, promoting non-harming and ethical conduct toward all living entities (Harvey, 1990). Buddhist texts emphasize the ethical obligation to protect and nurture the environment out of compassion for all beings. The teachings advocate for moderation, emphasizing the importance of mindful consumption and sustainable living practices (Dalai Lama, 1999). This compassion-driven ethos encourages responsible stewardship of natural resources, discouraging exploitation and advocating for the preservation of ecological balance.

Examples of Buddhist Practices Promoting Sustainability -

Buddhist traditions across various cultures exemplify practices aligned with environmental sustainability and conservation. For instance, the concept of "dana" or generosity in Buddhism extends to acts of environmental care. Monastic communities often engage in tree planting, forest conservation, and clean-up campaigns as acts of generosity toward the environment (Thich Nhat Hanh, 2015).

Moreover, mindfulness practices central to Buddhism encourage individuals to develop an acute awareness of their interconnection with nature. This heightened awareness fosters a deep respect for the environment, motivating adherents to adopt eco-friendly lifestyles and reduce their ecological footprint. Buddhist environmental ethics, grounded in interconnectedness and compassion, advocate for a mindful and compassionate approach to environmental stewardship. These principles underscore the ethical responsibility of

individuals and societies to protect and cherish the environment, offering guidance for sustainable practices that uphold the well-being of all life forms.

Current Environmental Challenges and Buddhist Perspectives -

Contemporary environmental crises such as climate change, deforestation, and pollution are seen through a lens of interdependence and compassion in Buddhism. Climate change, for instance, is perceived as a consequence of humanity's disregard for interconnectedness, disrupting the delicate balance of the environment (Loy, 2019). Deforestation and pollution are viewed as manifestations of human actions that harm not only nature but also sentient beings.

Guidance from Interconnectedness and ompassion -

Buddhist principles offer profound guidance for addressing these challenges. Understanding interconnectedness encourages a shift in perspective, emphasizing that environmental issues are not isolated problems but interconnected manifestations of broader systemic imbalances. This perspective promotes holistic solutions that consider the interdependence of all life forms.

Compassion motivates action toward mitigating these challenges. It inspires responsible behavior, urging individuals and communities to make choices that prioritize the well-being of all living beings, including future generations. Practices such as mindful consumption, sustainable living, and ethical decision-making align with compassionate values and contribute to mitigating environmental degradation (Dalai Lama, 1999).

Buddhist-Inspired Initiatives for Environmental Conservation -

Several Buddhist-inspired initiatives worldwide exemplify the application of these principles. For instance, in Thailand, the "Sai Thong" forest restoration project led by Buddhist monks involves reforestation efforts and environmental education within local communities (Kasemsook & Nuntasen, 2018). This project aims to restore ecosystems and raise awareness about the interconnectedness of life.

Similarly, Bhutan's Gross National Happiness philosophy, rooted in Buddhist principles, prioritizes environmental conservation alongside societal well-being. Bhutan's commitment to maintaining at least 60% forest cover and prioritizing sustainable development reflects a compassionate approach to environmental stewardship (Thinley, 2016).

Furthermore, Engaged Buddhism movements, such as those initiated by Thich Nhat Hanh's Plum Village community, advocate for mindful consumption, ecological sustainability, and activism as expressions of compassion toward the environment (Thich Nhat Hanh, 2015).

Criticism and Limitations –

Anthropocentrism in Policies: Critics argue that Buddhist environmental ethics might prioritize the well-being of sentient beings, including humans, possibly leading to an anthropocentric focus. This may overlook the intrinsic value of nature independent of its utility to humans (Loy, 2019).

Conflict with Economic Growth: In a globalized world driven by economic growth, Buddhist principles advocating moderation and contentment might conflict with the prevailing consumerist culture and growth-centric economic policies (Derr, 2018).

Translating Philosophical Teachings into Actionable Policies -

I. **Lack of Universality :** One challenge lies in the universal application of Buddhist principles across diverse cultures and belief systems. Implementing these teachings globally might face resistance due to cultural differences and varying ethical frameworks (Grim & Tucker, 2019).

II. **Policy Implementation Challenges:** While Buddhist ethics offer guidance, implementing policies derived from these principles in governance systems encounters obstacles due to political complexities, vested interests, and competing priorities (Derr, 2018).

Integration with Other Ethical Frameworks-

I. **Collaboration with Science and Technology:** Buddhist environmental ethics might need integration with scientific approaches to gain wider acceptance. Harmonizing traditional wisdom with scientific understanding could enhance the credibility and effectiveness of policies (Grim & Tucker, 2019).
II. **Cultural Adaptation:** To foster acceptance, there is a need for adapting Buddhist teachings to resonate with diverse cultural contexts. This involves incorporating local values and beliefs into the environmental discourse without diluting the core ethical principles (Brockington, 2016).

Modern World Challenges and Examples -

Climate Change Mitigation: Despite ethical principles advocating for responsible stewardship, addressing climate change on a global scale remains a challenge due to inadequate international cooperation and policy implementation (IPCC, 2021).

Consumerism and Materialism: Buddhist teachings promoting contentment and moderation face challenges in a world driven by consumerism. The pursuit of economic growth often prioritizes consumption over sustainability (Derr, 2018).

Resource Exploitation: The rapid depletion of natural resources due to industrialization and unchecked consumption poses a significant challenge to ethical environmental management (United Nations, 2021).

Conclusion -

In conclusion, the profound principles of interconnectedness and compassion within Buddhist teachings offer invaluable insights for shaping environmental ethics in a modern, globalized world. The relevance of these teachings lies in their ability to illuminate the intricate relationships between humanity and the environment, emphasizing the ethical imperative of responsible stewardship.

Buddhist philosophy, rooted in the understanding of interconnectedness, highlights the interdependence of all life forms and ecosystems. This perspective transcends anthropocentrism, emphasizing the ethical implications of human actions on the broader web of existence (Gethin, 1998). Furthermore, the ethical principle of compassion promotes a deep sense of care and responsibility toward all sentient beings, inspiring a shift towards sustainable and conscientious approaches to environmental stewardship (Harvey, 1990).

The potential of Buddhist environmental ethics lies in their capacity to inspire transformative action. By integrating these teachings into environmental discourse, societies can cultivate a holistic perspective that encourages mindful consumption, conservation, and ecological harmony (Dalai Lama, 1999). The teachings have already influenced initiatives like forest restoration projects led by Buddhist communities, demonstrating the practical application of these principles in environmental conservation efforts (Kasemsook & Nuntasen, 2018).

Further Research and Practical Implementation-

To further explore the applicability of Buddhist environmental ethics, future research should focus on -

Examining the adaptability of these principles across diverse cultural and geographical contexts. Investigating the integration of Buddhist teachings with contemporary environmental policies and governance structures. Exploring innovative approaches that combine scientific insights with Buddhist wisdom to address pressing environmental challenges (Grim & Tucker, 2019).

Practical implementation involves fostering dialogue and collaboration among diverse stakeholders, including policymakers, environmental activists, religious leaders, and communities. Initiatives that promote education and awareness about the ethical dimensions of environmental issues, drawing from Buddhist teachings, can significantly contribute to practical implementation (Loy, 2019).

In essence, the integration of Buddhist teachings

of interconnectedness and compassion into environ-mental ethics holds promise for inspiring a paradigm shift towards more sustainable and ethical practices, offering a holistic framework that acknowledges the intrinsic value of all life forms and the environment.

References -

- Loy, D. (2019). Ecodharma: Buddhist Teachings for the Ecological Crisis. Wisdom Publications.
- Kasemsook, T., & Nuntasen, W. (2018). Sai Thong Forest Restoration Project: A New Development of Engaged Buddhism in Thailand. In Environmental Consciousness (pp. 139-152). Springer.
- Thinley, L. (2016). Bhutan: A higher path to conservation. Conser-vation International.
- Gethin, R. (1998). The Foundations of Buddhism. Oxford University Press.
- Thich Nhat Hanh. (2015). The Heart of the Buddha's Teaching: Transforming Suffering into Peace, Joy, and Liberation. Harmony.
- Harvey, P. (1990). An Introduction to Buddhist Ethics: Foundations, Values, and Issues. Cambridge University Press.
- Dalai Lama. (1999). Ethics for the New Millennium. Riverhead Books.
- Callicott, J. B. (1989). In Defense of the Land Ethic: Essays in Environmental Philosophy. SUNY Press.
- Derr, T. (2018). Buddhist Environmental Ethics: Moving Beyond Anthropocentrism. Environmental Ethics,
- Edelglass, William. (2021). Buddhism and the Environment. 10.1093/acrefore/780199340378. 013.721. 40(1), 37-55.
- Grim, J., & Tucker, M. E. (2019). Ecology and Religion. Island Press.
- Brockington, D. (2016). Buddhist environmentalism and the ethics of inherent value. Journal of the Oxford Centre for Buddhist Studies, 10, 18-39.
- IPCC. (2021). Climate Change 2021: The Physical Science Basis. Contribution of Working Group I to the Sixth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on Climate Change.
- United Nations. (2021). Sustainable Development Goals Report 2021.

• Research scholar, Dept of education
D.D.U Gorakhpur University, Gorakhpur
Email- anantpathak01@gmail.com

Research Paper

Buddhism And its Relevance in Modern World

Sneha Yadav

Abstract -
Buddhism, as one of the four major religions in the world today, is an empiricistic and antimetaphysical religion. We can think of Buddhism in terms of three main categories philosophy, science and religion. The Four Noble Truths contain the essence of the Buddha's teachings. It was these four principles that the Buddha came to understand during his meditation under the Bodhi tree. Today in this scientifically and technologically developed global village, though there are many amenities, for easy living and pleasure, people are both physically and mentally not satisfied and do not have a feeling of security. Buddhism offers a few very simple and very efficacious methods to combat that. Buddhism has a role to play in our life and a role in which we, from the Buddha's birth land, have an important part to play.

Introduction -

Buddhism, as one of the four major religions in the world today, is an empiricistic and antimetaphysical religion. What the Buddha taught is not only for the 6th century B.C., but it is a timeless (akalika) teaching, surely it can be practised by the wise during 21st century as well and in many more centuries or millennia to come Buddhism has a special role to play in the modern world because unlike many other religious traditions, Buddhism un query propounds the concept of independence which accords closely with the fundament fundamental notions of modern science. Tibetan spiritual leader the Dalai Lama said, "The 20th century was a century of war and violence, now we all need to work to see that the 21st century is of peace and dialogue.

We can think of Buddhism in terms of three main categories. Philosophy, science and religion. The religious part involves principles and practices that are of of concern to Buddhism alone, but the Buddhist philosophy of interdependence as well as the Buddha science of mind and human emotions are of great benefit to everyone,". The spiritual leader said while "modern. Science has developed a highly sophisticated understanding of the physical world, including the subtle workings of the body and the brain, Buddhist science on the other hand has devoted itself to first-person understanding of many aspects of emotions areas that are still new to modern science".

Noble Truths of Buddhism -

Wheel of Life overview The Bhavachakra, the Wheel of Life or Wheel of Becoming, is a mandala a complex picture representing the Buddhist view of the universe. To Buddhists, existence is a cycle of life, death, rebirth and suffering that they seek to escape altogether. The Wheel is divided into five or six realms, or states, into which a material and mental phenomenon can be reborn. It is held by a demon. Around the rim are depicted the twelve stages of dependent origination.

The Four Noble Truths -

The Four Nobel Truths contain the essence of the Buddha'sTeachings. It was these four principles that the Buddha came to understand during his meditation under the bodhi tree.

1. The truth of suffering (Dukkha).
2. The truth of the origin of suffering (Samudaya).
3. The truth of the cessation of suffering (Nirodha).
4. The truth of the path to the cessation of suffering (Magga).

The Buddha is often compared to a physician. In the first two Noble Truths, He diagnosed the problem (suffering) and identity its cause. The third Noble Truth is the realisation that there is a cure. The fourth Noble Truth, in which the Buddha set out the Eightfold Path, is the prescription, the way to achieve a release from suffering.

The First Noble Truth : Suffering (Dukkha) -

Three obvious kinds of suffering correspond to the first three sights the Buddha saw on his first journey outside his palace: old age, sickness and death, But according to the Buddha, the problem of suffering goes much deeper. Life is not ideal and it frequently fails to live up to our expectations. Even when we are not suffering from outward causes like illness or bereavement, we are unfulfilled and unsatisfied. This is the truth of suffering.

The Second Noble Truth: Origin of suffering (Samudaya) -

Our day-to-day troubles may seem to have easily identifiableCauses thirst, pain from an injury, sadness from the loss of a loved one. In the second of His Noble Truths, though, the Buddha claimed to have found the cause of all suffering and it is much more deeply rooted than our immediate worries. The Buddha taught that the root of all suffering is desireTanha. This comes in three forms, which he described as the Three Roots of Evil, or the Three Fires, or the Three Poisons.

The following depicts the Three Fires -

The three roots of evil These are the three ultimate causes of suffering: Greed and desire, represented by a rooster. Ignorance or delusion, represented by a pig. Hatred and destructive urges, represented by a snake. Tanha means craving or misplaced desire. Buddhists recognise that there can be positive desires, such as desire for enlightenment and good wishes for others. A neutral term for such desires is chanda.

The Fire Sermon :

The Buddha taught more about suffering in the Fire Sermon, de vered to a thousand bhikkus (Buddhist monks). Burning implies burning with the fire of lust, hate and delusion. We can interpret it is burning with birth, aging and death, with sorrows, lamentations, pains, grieves and despairs

The Third Noble Truth: Cessation of suffering (Nirodha):

The Buddha taught that the way to extinguish desire, which causes suffering, is to liberate oneself from attachment. This s the third Noble Truth the possibility of liberation. The Buddha was a living example that this is possible in a human life- time.

Nirvana -

Nirvana means extinguishing. Attaining nirvana reaching enlightenment means extinguishing the three fires of greed, us on and hatred. Someone who reaches nirvana does not immediately disappear to a heavenly realm.

The Fourth Noble Truth: Path to the cessation of suffering (Magga) :

The final Noble Truth is the Buddha's prescription for the end of suffering. This is a set of principles called the Eightfold Path, the Middle Way: it avoids both indulgence and severe asceticism, neither of which the Buddha had found helpful in his search for enlightenment.

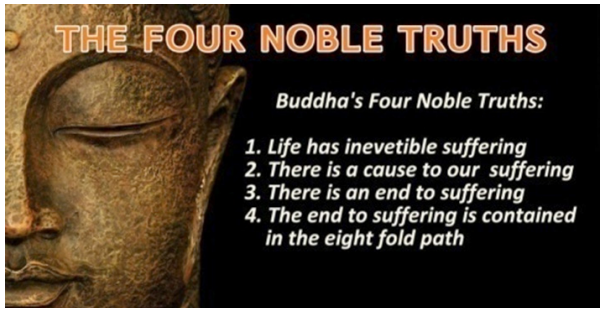

The wheel of the Dharma, the symbol of the Eightfold Path –

The eight divisions : The eight stages are not to be taken in order, but rather support and reinforce each other .

1. **Right Understanding :** Sammaditthi Accepting Buddhist teachings. (The Buddha never intended his followers to believe his teachings blindly, but to practice them and judge for themselves whether they true.
2. **Right Intention :** Sammasarikappa A commitment to cultivate the right attitudes.
3. **Right Speech :** Sammavaca o Speaking truthfully, avoiding slander, gossip and abusive speech.
4. **Right Action :** Sammakammanta o Behaving peacefully and harmoniously; refraining from stealing, killing and overindulgence in sensual pleasure.
5. **Right Livelihood :** SammaajivaAvoiding making a living in ways that cause harm, such

as exploiting people or killing animals, or trading in intaxicants or weapons.

6. **Right Effort :** Samma vaylama o Cultivating positive states of mind; freeing oneself fromevil and unwholesome states and preventing them arising. in future.
7. **Right Mindfulness :** Samma sati o Developing awareness of the body, sensations, feelings and states of mind.
8. **Right Concentration :** Sammasamadhi Developing the mental focus necessary for this awareness.

Relevance of Buddhism in Modern World -

The eight stages can be grouped into Wisdom (right under- standing and intention), Ethical Conduct (right speech, actionand livelihood) and Meditation (right effort, mindfulness and concentration). The Buddha described the Eightfold Path as a means to enlightenment, like a raft for crossing a river.

The Buddha was one of those who were very conscious of the many effects of hatred. He had seen people ruining them- selves as s a result of hatred. Buddha believed that hatred never ceases by hatred. To the Buddha the only way to solve it is that one party must stop. Loving kindness, which is the cor- nerstone of Buddhism, has not been taken. by the Buddha as merely a simple ethical principle. He had analysed the principle of loving kindness into sublime life.

The Buddha also preached Karuna -

compassion. Compassion is more easily generated. When we see somebody in trouble,our heart moves towards that person and we rush to help him. Last of all comes the fourth aspect of loving kindness and that is total equanimity.

We haveabsolutly no distinctions between one person and another, and are totally merged in a kind of unity with all beings, all things and all situations. So once you are able to live a life in which all these four characteristics govern your actions, there is no place for hatred, rivalry and competition. So this second principle of Sila looks after this set of troubles that we wouldhave.

Today in this scientifically and technologically developed global village, though there are many amenities, for easy living and pleasure, people are both physically and mentally not satisfied and do not have a feeling of security. When the mind is satisfied that the person is free of physical danger, the mind produces an experience of safeness in the world today. There are many multinational and multipurpose projects which are vast for the development of countries ,but people are not satisfied with what they have, there is no contentment, craving, grasping, arising and perishing are the main features in the world. When one thinks of modern life one can think in terms of agreat degree of optimism and an equal degree of pessimism. One can be so pleased that we live today at a time when there seems to be nothing that man cannot conquer, except few diseases and places in the universe, however the pessimistic aspect is that we have, in the process, lost something. Buddhism has an application today and has a place in modem life because of its timeless relevance, emanating from a set of eternal values.

Conclusion -

Modern developments have nothing to offer but insecurity and competitiveness as well as tensions and boredom associated with them. Buddhism offers a few very simple and efficacious methods to combat that. Buddhism has a role to play in our life and a role in which we from the birth land of Buddha, have an important part to play. It is our responsibility to share our thinking, knowledge and experience, with as many as possible, so that ultimately we all see that the message of the Buddha continues to reach mankind in every nook and corner of the world.

References -

- Buddha relevent in modern world : Dalai Lama.
- Buddhism in Modern life , Ananda, w. P. Gurage.
- The Relevance in Buddhism in Modern world, AlexanderBezin, Kiev, Ukrain, September 2011.

• Student of B.Ed 1st Semester
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

Research Paper

Relevance and Applicability of Buddhist Principles In Modern Education

Gulsheen Parvez

Abstract -

In India during the time of Buddha, there was a racial discrimination in the society. This discrimination was according to profession of man, and according to birth. In the society there were four division of the society of whom Brahman was superior. Brahmanism dominated the society and established their supremacy in the country. They enjoyed rights for religious training and education. But other category of people were deprived of their religious and educational rights.

In this background a religious revolution started in ancient India in 600 B.C. and a new doctrine or system developed which is called Buddhist doctrine or Buddhist philosophy. It is to be said that on the foundation of Buddhism a new and special Education System originated in ancient India. Buddhism made a tremendous movement which played a valuable role in the development of Education System in ancient India or ancient Buddhist world. It is well-known that with the rise of Buddhism in India there dawned the golden age of India's culture and civilisation. There was progress in all aspects of Indian civilisation under the impact of Buddhism. There arose many centres of learning which did not exist before.

In the early period Buddhist Education was limited within the monasteries and only for the members of the monastery. But later on it was open to the mass, even lay people got scope to have education in those institutions. In Modern days Buddhist Education became wide open and embraced people of all walks of life. The aim of Buddhist education is to change an unwise to wise, to provide education of social conduct and preparation for life. In modern education Buddha's wisdom offers a foundation for personal growth, students became judicious, humanist, logical, free from greed and Ignorance.

Introduction -

Buddhism which originated in India and later spread to China and Japan presented a systematic elaboration on the nature of the soul and its relation to material world. The term 'Buddha' is a general term meaning one who is enlightened or awakened. It applied to the founder of Buddhism known as Sakyamuni whose personal name was Siddhartha (560-480 B.C). The teachings of Buddha was oral an were recorded by his disciples much later. Buddha was primarily an ethical teacher and a social reformer. He repeatedly told his disciples: "Two things only do I teach misery and cessation of misery" Human existence is full of misery and pain. Our urgent and immediate duty , therefore is to get rid of misery and pains. In our country the Buddhist period occurred after the Vedic period. When in the post Vedic period, harsh class system and rituals became excessive, these were opposed. Mahatma Buddha took birth in a royal family and was made all luxuries of life available to him; however, he felt the worldly sufferings of the people. To get rid people of these sufferings he undertook hard penance and set up merciful Buddhism in place of ritualistic Vedic religion. This religion enjoyed prominence from 500 BC to 1200 AD.

Lord Buddha discovered the four Noble Truth (char arya satya). First there is suffering (Dukham); second, there is cause of suffering (Dukha Samudaya) third, there is cessation of suffering (Dukha Nirodha) and fourth there is a way for the cessation of suffering (Dukham nirodha marg) lord Budda delivered his first sermon at Sarnath at a distance of 8 km from Varanasi. This

deliverance of his first sermon is also known as the Turning of the Wheel of Law or Dharma chakra pravartana. He was assisted by the contemporary kings and monarchs and in a very short time so many "Matths" and 'Vihars' were built up in different parts of the country. These Matths and Vihars, in the initial stage, were developed as the centres of Buddha's teachings. But later on they also started organising education. Thus, during this period a new system of education was developed by Buddhist monks (Bhikshus) which is known as Buddhist system of Education. By it is meant the education run by Buddhist monasteries and viharas. During this period, education was not considered a synonym to learning but as a process of receiving knowledge.

Contribution of Buddhist Educational System In The Development of Modern Indian Educational System -

In our country, the Vedic educational system developed first, and is the foundation stone of our present day Indian educational system. After that a new educational system was introduced during the Buddhist period, which is called Buddhist Educational System. Though this educational system saw its last in the Muslim period, yet it has left behind visible footmarks which can be considered its contribution to the development of Indian education. These are as follows:

1. Beginning of Central Control over Education -

(a) The Buddhist educational system was under the central control of Buddhist Sanghas; at present it is under the central control of states. It can be considered as a contribution of Buddhist education.

(b) The state gave protection to education during the Buddhist period, but it has become the sole responsibility of the state today.

(c) In the Buddhist educational system, primary education was free. It is so in our modern educational system too. It is also a contribution of the Buddhist educational system.

2. Division of education into levels -

In the Buddhist educational system, education was divided into three levels: primary, higher and monk education. Now, education is divided into pre-primary, primary, junior, secondary, higher and specialisation levels.

3. Aims of Education as per the time -

The aims of education under the Vedic educational system continued during the Buddhist educational system, with more emphasis on crafts, arts and vocations under the latter. In the modern educational system, more emphasis is laid on these. This is the contribution of the Buddhist educational system.

4. Wide Curriculum and Minute Specialisation of Education -

Though the foundation of uniform curriculum at primary level and specific curriculum at higher level was laid down during the Vedic educational system, yet it was understood more minutely in the Buddhist educational system. Besides, several specialisation curriculum were introduced at the higher level.

5. Commencement of Class Teaching and Self-study -

The chief contribution of the Buddhist educational system to the modern Indian educational system is as follows:

(a) First, the Buddhist educational system made a vernacular (Pali) as the medium of instruction; on this very basis mother tongues are made the medium of instruction today.

(b) Secondly, collective or class teaching was started

(c) Thirdly, it developed the method of self-study. Libraries wers constructed during the Buddhist period for self-study.

6. Amiable Relations between Teachers and Pupils -

In the Buddhist period, both teachers and pupils had to remain under the discipline of Buddhist Sanghas, they had to follow their duties towards each other. Teachers were devoted to pupil, and vice-versa. It is also expected in the present times that teachers are devoted to pupils and the

latter respect the former.

7. Commencement of College Education -

In the Buddhist educational system, education was provided in Buddhist monasteries and viharas. It was the commencement of school education. In these, there were large teaching rooms or classrooms where students studied together. Different teachers taught different subjects as per their specialisation. This was the beginning of multi-teacher system and teaching by subject specialists.

8. Beginning of Mass Education -

Buddhists gave right to education to children of all classes. Also, primary education was provided by monasteries and viharas. It was the first step towards mass education.

9. Equal Education for Men and Women -

In the Buddhist educational system, there was no proper arrangement for women education; harsh rules were laid down for them which allowed only a few girls and women to get admission in monasteries and viharas, though this contribution is quite significant that some sort of education was started for women. It is a great contribution of Buddhist education to modern Indian education.

10. Emphasis on Arts, Crafts and Vocational Education -

The Buddhists looked at all arts, crafts and vocations with an equal eye and provided for their suitable education. This provision of modern Indian educational system can be considered a contribution of Buddhist education.

11. Continuity of Religious and Moral Education-

In the Buddhist educational system, it was necessary to learn Buddhism; in the present educational system, this is not at a necessity to learn any religion specifically but everyone is free to learn and study any religion. Of course, moral education has been included, and this ethics is not based on any one religion but on human values.

12. Learning from Bitter Experiences -

Whatever has been learnt from the shortcomings of the Buddhist educational system can be considered an indirect contribution to the modern Indian educational system. The chief aim of Buddhist educational system was to propagate Buddhism and it was the chief and compulsory subject of its curriculum. As a result followers of Vedic religion were not attracted to it and could not be benefitted by it. Today India is home to people of different religions so we have adopted the policy of secularism. As a consequence of harsh discipline of Buddhist educational system and its demerits, today it is neither expected students to follow excessive restrained life, nor they are chained to not do anything they feel like.

As mentioned above, the Buddhist Education did not completely discontinue the Vedic education. The main essence of Buddhist education was based on Vedic education where spirituality was the main focus. With this the Buddhist education propagated the development of education in India.

Aims And Ideals of Education During The Buddhist Period Which Are Also Applied Today

1. Education of Social Conduct -

In Buddhist religion, emphasis had been laid on well-being, kindness and mercy of humanity. According to it, without kindness an individual cannot understand the sufferings of other peoples, without mercy, he cannot eradicate others' sufferings. Today this thinking is also a part of social conduct.

2. Preservation and Development of human culture-

Buddhism is preserver and developer of human culture. Scholars engaged themselves in preserving ancient literature and creation of new literature. They prepared handwritten copies of manuscripts of ancient scriptures and translate them into different languages. Some scholars also created original literatures. In modern days there are provision for the study of Buddhist religion and philosophy, as well as the study of other religions, philosophies and cultures.

3. Character Building -

Buddhist education laid emphasis on character building of pupils. It was used to teach pupils to perform duty, truthfulness, virtuous

conduct and other moral qualities and these are very much important in today times.

4. Personality Development-

In Buddhist monasteries, an effort was made for all-round development of personality of pupils in order to make them able and efficient human beings. It was aimed to make them able to carry out their family, social, political, religious, economic duties successfully. A good personality development is a much needed trait to have a better enhancement of an individual at every domain today.

5. Preparation for life -

The Buddhist educational system trained pupils in livelihood by giving them knowledge useful for living, so that after they entered domestic life, they could earn and look after their family members. Buddhism did not teach renunciation of worldly life, but teaches to prevent sufferings of the world. In our country by then, much progress had been achieved in the fields of agriculture, herding, crafts and commerce. Therefore, these were included in Buddhist education in monasteries. Despite of the Vedic period Buddhism started to teach all pupils on the basis of their abilities and capabilities. As a result, more progress was achieved in the fields of agriculture, herding, crafts and commerce. Modern education also gives main emphasis on the vocational life after education.

Conclusion -

The Buddhist education played a major role in the development of Indian Education. It was Buddhism which for the first time broke the dominance of Brahmanism prevalent in the society at that time. Buddhism brought all the other castes to the main stream to attain education equally with Brahmans, thus attempted in breaking the tough clutch of caste system prevalent in India. They also did not completely discourage the education of women.

Moreover it was Buddhism that worked on to construct world class universities to develop and spread education as well as propagated their religion with its help. India became a centre of learning for the foreign students owing to the high quality of these universities. The Buddhist Philosophy profoundly incorporated the modern education, as it's principles and values are highly applied and working with modern aspects in every domain for a better understanding and living of life.

Relevance -

Buddhist educational principles can definitely have relevance in modern education in India. Buddhism emphasizes mindfulness, compassion, and ethical conduct, which are valuable qualities for students to cultivate. It can contribute to a holistic approach to education, promoting emotional well-being and fostering a sense of social responsibility. Incorporating Buddhist principles can help students develop a deeper understanding of themselves, others, and the world around them. In a nutshell, Buddhist educational principles can bring mindfulness, compassion, ethical conduct, and holistic development into modern education in India. It helps students develop self-awareness, empathy, moral values, and a balanced approach to learning. It's all about creating a more inclusive and fulfilling educational experience.

References –

1. Ankita Masih, Vidyapati (2018). Role of Buddhism in the Development of Indian Education, Research Paper.
2. Singh A.K (2017) The Comprehensive History of Psychology. Motilal Banarsidass Publishers Private limited. Delhi.
3. Buddhist Educational Philosophy Retrieved from https // w.w.w. wikipedia.in / Buddhist Educational Philosophy.

• Student of B.Ed. Ist Semester
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

Research Paper

Buddhist Educational Philosophy : Challenges And Solutions

Dr. Madhurima Tiwari*
Dr. Mamata Tiwari**

Abstract -
The core principles of Buddhism, emphasizing its goal of conquering suffering and achieving happiness through the Four Noble Truths. It acknowledges the psychological roots of suffering-greed, hatred, and delusion-and highlights the pursuit of liberation from these afflictions as central to Buddhist practice. The paper aims to explore the relevance of Buddhist values in addressing contemporary global challenges such as conflicts, moral decay, poverty-induced crimes, and violence. It proposes recommendations for the Buddhist community to adapt to modern society's needs, especially as Buddhism gains traction in Western civilizations. The abstract underscores the importance of intelligent adaptation to ensure Buddhism's continued relevance and effectiveness in fostering well-being and societal harmony.

Buddhism can serve as a fortress against war and poverty by promoting peace, compassion, and ethical conduct. By cultivating inner peace and wisdom, individuals can contribute to conflict resolution and socioeconomic development, thus alleviating suffering on both personal and societal levels. Presenting Buddhism not merely as a religion but as a philosophy or way of life could potentially benefit more people by making its teachings more accessible and appealing to a broader audience. By emphasizing its universal principles of compassion, mindfulness, and wisdom, Buddhism can resonate with individuals from diverse cultural and religious backgrounds, fostering greater understanding and cooperation.

Introduction -

The topic highlights the evolving landscape of Buddhism, particularly in regions where it's practiced primarily as a religion centered on rituals, which may not resonate with younger generations. It emphasizes the need for Buddhism to adapt to modernity, shifting its focus from ceremonial practices to addressing contemporary issues and engaging with younger audiences. The paper advocates for changes within the Buddhist community, including fostering unity, embracing a non-sectarian approach, and promoting interfaith dialogue for the benefit of humanity. It suggests enhancing the skillets and service quality of Buddhist practitioners to effectively address societal problems such as war and poverty. Furthermore, it proposes rebranding Buddhism as a "philosophical way of life," leveraging technological advancements and avoiding rigid adherence to sectarian practices. The passage emphasizes the fundamental Buddhist principle of selflessness, suggesting a willingness to transcend personal lineage for the greater good of alleviating suffering in others

Applying Buddhist Values in Modern Terms -

In today's world, characterized by widespread moral decay and unethical behavior, Buddhism's humanistic approach remains highly relevant and necessary. The teachings advocate for ethical conduct, mindfulness, and compassion, offering a counterbalance to the prevailing culture of deceit and unscrupulousness. Despite originating in ancient India, Buddhism has transcended geographical and cultural boundaries, taking root in many societies worldwide, including Western civilizations. As more people encounter Buddhism and its teachings, they come to recognize that true fulfillment does not solely derive from the pursuit of wealth and pleasure, but rather from cultivating inner peace, wisdom, and compassion.

Unity as a foremost premise in Transcendental Buddhism -

Unity as a foremost premise in Transcendental Buddhism emphasizes the

importance of fostering unity and harmony among individuals and communities. Transcendental Buddhism acknowledges the interconnectedness of all beings and promotes the idea that true liberation and enlightenment can only be achieved through collective effort and collaboration. In Transcendental Buddhism, unity goes beyond mere tolerance of diversity; it entails recognizing the inherent dignity and worth of every individual, regardless of background or belief. By cultivating a sense of unity, practitioners of Transcendental Buddhism strive to overcome divisions and conflicts, promoting mutual respect, empathy, and cooperation. The concept of unity in Transcendental Buddhism extends not only to human relationships but also to the interconnectedness of all living beings and the natural world. This holistic perspective underscores the interdependence of all phenomena and emphasizes the importance of cultivating compassion and stewardship towards all forms of life. Overall, unity serves as a foundational principle in Transcendental Buddhism, guiding practitioners towards a deeper understanding of interconnectedness and promoting harmony, both within themselves and in the world around them.

The Roles of Buddhists Adapting to Societal Changes -

The passage highlights the evolving roles of Buddhists in adapting to societal changes. While there is admiration for those following the traditional Forest tradition, there is recognition that modern society presents new challenges and opportunities that require adaptation. As living standards improve and material pursuits become dominant, there is a growing need for spiritual guidance and moral support, particularly in addressing the ethical and social issues arising from neglecting spiritual cultivation. Members of the Sangha are called upon to serve their communities voluntarily, especially in urban areas with high crime rates and declining moral values. Establishing temples, organizing retreats, and engaging with lay supporters are seen as vital ways to maintain the balance between traditional Buddhism and the changing needs of the modern world. However, the passage also acknowledges that contemporary society presents unique challenges, such as technological advances, environmental crises, and cultural shifts, which may require creative responses and adaptations in Buddhist teachings and practices. It emphasizes the importance of studying and carefully considering the potential social and economic impacts of these changes, while ensuring they remain true to the essence and principles of Buddhism. Overall, the passage underscores the need for Buddhists to adapt to societal changes while upholding the core values and teachings of Buddhism, in order to effectively address the evolving needs of individuals and communities in the modern era.

Buddhism as a Fortress against War and Poverty -

Peace must be cultivated within the minds of individuals to prevent conflicts. Throughout his life, the Buddha emphasized the eradication of evil-mindedness and the pursuit of inner peace as essential steps towards enlightenment. Comparatively, it suggests that while other major religions may not explicitly condone violence, Buddhism uniquely prioritizes non-violence and peace-building. The scriptures of Buddhism, both in the Pali and Mahayana canons, extensively focus on these themes. Moreover, the passage emphasizes the importance of discernment, urging people to distinguish between true orthodoxy characterized by righteous behavior and the misuse of religion for personal or political gain. The Buddha himself disapproved of the use of force and violence. Overall, it suggests that Buddhism offers valuable principles and practices for promoting peace and combating social injustices like war and poverty, emphasizing the importance of cultivating inner peace and discernment in addressing these challenges.

Would Buddhism Benefit More People if it is not presented as a Religion -

From a Buddhist perspective, presenting Buddhism as a philosophy or way of life rather than a religion could potentially benefit more people. By emphasizing the universal principles of compassion, mindfulness, and wisdom, Buddhism can appeal to individuals from diverse backgrounds and beliefs who may be hesitant to

identify with a specific religious tradition. This approach may also make Buddhist teachings more accessible and relevant to modern society, particularly in cultures where organized religion is less prominent or where there is a growing interest in secular spirituality. Furthermore, presenting Buddhism as a philosophy or way of life may help dispel misconceptions and stereotypes associated with religion, making it more appealing to those who are skeptical or disillusioned with traditional religious institutions. It may also facilitate dialogue and collaboration with other philosophical and spiritual traditions, fostering greater understanding and cooperation in addressing common challenges facing humanity. Ultimately, whether Buddhism is presented as a religion or a philosophy, the key is to convey its core principles in a way that resonates with individuals and promotes personal growth, ethical conduct, and societal well-being.

Conclusion -

In conclusion, the prevalence of moral decay and societal unrest in today's world underscores the urgent need for individuals, both within the Sangha and among lay Buddhists, to reevaluate their commitment to the teachings of the Buddha. As we witness a myriad of troubling events reported in the media, it becomes clear that the ethical values espoused by Buddhism are increasingly disregarded in contemporary society. To address these challenges, it is imperative for Buddhists to transcend differences and focus on commonalities, seeking unity and collaboration for the greater good. Whether one chooses a life of contemplation or active engagement in promoting global welfare, the essence of Buddhist teachings lies in their ability to provide a sturdy foundation, akin to the resilient roots of a bamboo tree, capable of withstanding the winds of change. However, this resilience should not be mistaken for rigidity. Buddhist dharma must remain adaptable and responsive to the evolving needs of diverse communities, embracing inclusivity and cultural diversity. While considering changes to institutional structures, roles, and practices, it is essential to preserve the core principles of compassion, wisdom, and ethical conduct that lie at the heart of Buddhism. In this way, Buddhists can navigate the complexities of the modern world with integrity and purpose, embodying the teachings of the Buddha for the betterment of humankind and the realization of universal peace and harmony.

References -

- Heine, Steven, S. Prebish, Charles. "Buddhism In The Modern World: Adaptations of An Ancient Tradition". London: Oxford University Press, 2003.
- Bhikkhu, Bodhi. "Facing The Future". Sri Lanka: Buddhist Publication Society, 2000.
- His Holiness The Dalai Lama. Beyond Religion: Ethics for a Whole World. NY: Houghton Mifflin Harcourt Publishing Company, 2011.
- "Buddhists and Buddhism in the United States: The Scope of Influence", edited by Robert Wuthnow & Wendy Cadge. Journal for the Scientific Study of Religion 43:3 (2004)363–380.
- Bhikkhu, K. Sri Dhammananda. "Buddhism for the Future". Kuala Lumpur: Susana Abhiwurdhi Wardhana Society.
- Bhikkhu, K. Sri Dhammananda. "Buddhism As A Religion". Kuala Lumpur: Sasana Abhiwurdhi Wardhana Society, 1994.
- Sayadaw U Thittila. "Essential Themes of Buddhist Lectures". Buddha Dharma Education Association Inc., 1997.
- Narada, Mahathera. "The Buddha And His Teachings". Sri Lanka: BPS, 2010.
- Nakamura, Hajime. "Gotama Buddha. Vol. 1: A Biography based on the most reliable texts". Tokyo : Kosei Publishing Company, 2001.
- Nakamura, Hajime. "Gotama Buddha. Vol. 2 : A Biography based on the most reliable texts".

*Assistant Professor (B.Ed),
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

**Assistant Professor (B.Ed),
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

Research Paper

Role of Buddhism in the Development of Indian Education

Anshika Jaiswal

Abstract -

In India during the time of Buddha, there was a radal discrimination in the sodety. This discrimination was according to profession of man and a society there were four divisions of whom they enjoyed rights for religious training and education. But other category of people deprived of their religious and educational rights. In the It should be observed that it is "the life of holiness" which Buddhism emphasizes much more than the philosophy of life, speculations concerning the mysteries of liíe and death and such ultimate truths. The entire system of Buddhist education must be Doted in faith (saddh)-faith in the Triple Gem, and above all in the Buddha as the fully enlightened one, the peerless teacher and supreme guide to right advising and right understanding, Based on this faith, the students must be inspired become accomplished in virtue (sila) by following the moral guidelines spelled dominates in present-day society. Enjoyed by the five precepts students should come to appreciate the positive virtues The Aies, monesty, purity, truthfulness, and mental sobriety, sinee (cága), so essential or overcoming selishness on rancement In the early period Buddhist Education was limited within the monasteries and only for the members of the monastery. But later on it was open to the mass, even lay people got scope to have education in those institutions. In modern days Buddhist Education became wide open and embraced people of all walks of life. The aim of Buddhist Education is to change an unwise to wise, beast hood to Buddhahood.

Keywords :

Triple gem, Five precepts, Monasteries, Enlightened, Buddha hood. India came to have five major universities which achieved wide fame. These five were 1. Nalanda, 2. Vickramasila, 3. Odantapuri, 4. Jagadalala and 5. Somapur.

The Buddha's teachings on ethics and living a good life also extended to the realm of the social and political. He was ahead of his time in many ways; considering all people as equal, he rejected the caste system and did not completely discourage the women education. He taught that governments have the responsibility to lead by example to teach people ethics and to eliminate poverty by providing opportunities for the people to become prosperous. As mentioned above, the Buddhist Education did not completely discontinue the vedic education. The main essence of Buddhist Education was based on vedic education where spirituality was the main focus. With this the difference between evdic education and Buddhist education was wiped out and this was the historic development of education in India.

Merits of Buddhist Education -

Well organized centres- Buddhist education was imparted in well organized centres, monasteries and Vihara which were fit places for the purpose. Cosmopolitan-Buddhist education was free from communal narrowness. Simple and austere-Bhikshus led a life of austerity and simpliity. Total development- Buddhist education laid much emphasis on the physical mental and spiritual development of the students. Disciplined Life-both the teachers and students led disciplined life. ldeal student teacher relationship.

International importance -

Buddhist education helped to gain international importance it also developed cultural exchange between India and other countries of the world.

Demerits of Buddhist Education -

Buddhist education could not give the

proper attention to the occupational, industrial and technical education. It gave severe blow to the social development because it derided family ties. Leaving their family life Buddha Bhikshus devoted their whole lives to sangh and Buddhism. Role of Buddhism in the Development of Indian Education With the rise of Buddhism in India, there arose many centres of learning which did not exist before. Buddhist monks could opt for a life of meditation in the forests, or a life of teaching preaching, propagating the Dharma as a result of the activities of the teaching monks, seats of learning arose.

These seats of monastic learning (Pirivenas) gradually developed and some of them became full-fledged universities. As a result Buddhist The student was expected to serve his teacher with all devotion. On rising in the morning the student will arrange everything for the daily routine of the teacher. He will cook his food and clean his clothes and utensils. Whatever he acquired through begging alms, he would place before teacher. The student had to prepare himself to receive education at any time whenever the teacher required him. Discipline The Core of Buddha's teaching-the Buddha teaching contains three major points discipline, meditation and wisdom. Wisdom is the goal and deep meditation or concentration in the crucial process toward achieving wisdom. Discipline through their observing the precepts, is the method that helps one to achieve deep meditation; wisdom will then be realized naturally. Buddha's entire teaching as conveyed in the sutras never really depart from these three points. After getting education in the Buddhist schools, colleges and universities one cannot do any injustie, tell a lie, commit theft, cannot kill, cannot be addicted in wine and make himself free from moral turpitude. In this way students become free from greed, lust, enmity and ignorance.They followed eight fold path vigorously. Curriculum Buddhist Education system developed on the basis of some basic principles. This education gave emphasis on the moral, mental and physical development and also to divert the students towards the sangha rules and guide them to follow it. The main stress was as given to clear idea of Tripitaka which consists of Sutta Pitaka, Binoy Pitaka Abhidhamma The entire Tripitaka consists of Buddhas teachings, message, philosophy and rules for the Bhikkhus and Bhikkhunies.

There were two types of education primary and higher education. In primary education reading, writing and arithmetic were taught and in higher education religion, philosophy, soiety. The Buddhists in the world first made education open to all. Students irrespective of caste, creed, religion got opportunity to have education which was denied by the superior dass in the society. In India also, in Vedic Educational schools students from lower casses were refused to get admission. Women education during Buddhist period was at its lowest ebb, as the women folk were despised in the sense that Lord Buddha had regarded them as the source of all evils, so he had advised during his life time not to admit women in n monasteries but after some time due to the insistence of his dear pupil Anand, Buddha had permitted about 500 women along with his step mother for admission in the Vihars with many restriction and reservations.

When Buddhist monasteries had developed into colleges of international reputation, women did not receive any education because of their early marriages. In the early history of Buddhism, however the permission was given to women to enter the order and gave a fairly good impetus to female education, espedally in aristocratic and commercial sections of society. Large number of ladies from these circles joined the order and became life-long students of religion and philosophy. Qualities and Responsibilities of the teacher himself must spend at least ten years as a monk and necessarily must have the purity of character, purity of thoughts and generosity. Both the teacher and student were responsible to the monastery. But regarding education, dothes, food and residence of the student monk, the teacher was fully responsible. The teacher was also responsible for any treatment of the student whenever he fell ill.

Sufferings, Causes and Solutions -

The Four Noble Truths The teachings on the four noble truths are regarded as central to the teachings of Buddhism, and are said to provide a conceptual framework for Buddhist thought. These four truths explain the nature of dukkha (suffering,

anxiety, unsatisfactoriness), its causes, and how it can be overcome.

The four truths are -

The truth of dukkha (suffering, anxiety, unsatisfactoriness) The truth of the origin of dukkha 3. The truth of the cessation of dukha The truth of the path leading to the cessation of dukkha Noble Eightfold Path The Noble Eightfold Path-the fourth of the Buddha's Noble Truths-consists of a set of eight interconnected factors or conditions, that when developed together, lead to the cessation of dukkha. These eight factors are: Right View (or Right Understanding), Right Intention (or Right Thought), Right Speech, Right Action, Right Livelihood, Right Effort, Right Mindfulness, and Right Concentration.

Aims of education The goal of Buddha's teaching-the goal of Buddhist education is to attain wisdom. In Sanskrit, the language of ancient India, the Buddhist wisdom was called-Anuttara-Samyak Sambhodi meaning the perfect ultimate wisdom. The chief aim of Buddhist education was all round development of child's personality. This included his physical, mental, moral and intellectual development. The aim of Buddhist Education is to make a free man, a wise, intelligent, moral, non-violent & secular man. Students became judicious, humanist, logical and free from superstitious. Students became free from greed, lust and ignorance.

Buddhist Concepts -

Samsra Within Buddhism, samsara is defined as the continual repetitive cycle of birth and death that arises from ordinary beings' grasping and fixating on a self and experiences. Specifically, samsara refers to the process of cycling through one rebirth after another within the six realms of existence, where each realm can be understood as physical realm or a psychological state characterized by a particular type of suffering. Samsara arises out of avidya (ignorance) and is characterized by dukkha (suffering, anxiety, dissatisfaction). In the Buddhist view, liberation from samsara is possible by following the Buddhist path. Karma in is the force that drives samsra -the cycle of rebirth (Pali. “kusala”) and bad, unski urering and each being. Good, skillful deeds skillful "akusala") actions produce "seeds" in the mind that come to fruition either in this life or in a subsequent rebirth the avoidance of unwholesome actions and the cultivation of positive actions is called sila. Karma specifically refers to those actions of body, speech or mind that spring from mental rebirth refers to a process whereby beings go through a succession of lifetimes as one of many possible forms of sentient life, each running from conception to death. The doctrine of anatt (Sanskrit antnan) rejects the concepts of a permanent self or an unchanging, eternal soul, as it is called in Hinduism and Christianity. Acording to Buddhism there ultimately is no such thing as a self independent from the rest of the universe. Buddhists also refer to themselves as the believers of the anatta doctrine-Nairatmyavadin or Anatavadin. Rebirth in subsequent existences must be understood as continuation of a dynamic, ever-changing process of pratityasamutpda ("dependent arising") determined by the laws of cause and effect (karma) rather than that of one being, reincarnating from one existence to the next. intent (etana), and bring about a consequence orphala "fruit" or vipka "result" found the sacrifice. The Buddhist world did not offer any educational opportunities apart from or independent by of its monasteries. All education, sacred as well as secular, was in the hands of the monks. They were the onlv austodipoy of learning and the leisure and bearers of the Buddhist culture. Its Rules The rules of Buddhist education are those of the Buddhist order. The into the Buddhist order follows closely the lines of tho Reabesaoi:tmon of studentship.

Abstinence From -

Taking life Eating out of time "Buddham sharnam gacchami Dhammam sharnamn gachhami Sangham sharnam gachhanti" of Daning, singing and seeing shows the most important contribution of ancient India not only for India but also for the world is the field of education. It may also be remembered that education is not an abstract. is manifested in the-cultural, Individual, philosophical, seientiñe, social and spiritual advan cement. In other words, education is the means for developing the mind for the betterment of the individual and society. Seen from this perspective, the following views of great scholars and thinkers deserve mention. Albert Einstein: "We our a lot lo

the Indians who taught us how to count without which no worthwhile scientifc discoery could has made." Mark Twain, an American Writer: "India is the aradle of the human race. Most valuable and the most instructive in the history of man are treasurd up in India only. Lancelot Hagen, in his publication Mathematics for the millions: "There has been no more revolutionary contribution than the one which the Hindus made when they identified zero" In India during the time of Buddha, there was a racial discrimination in the society.

They enjoyed rights for religious training and education. But other category of people deprived of their religious and educational rights. At that time there were 62 heretical doctrines in existence and priesthood got upper hand. In this background a religious revolution started ancient India in 600 B.C. and a new doctrine or system developed which is called Buddhist doctrine or Buddhist philosophy. It is to be said that on the foundation of Buddhism a new and special education system originated in ancient India. Buddhism made a tremendous movement which played a valuable role in the development of education system in andent India or ancient Buddhist world. It is well-known that with the rise of Buddhism in India there dawned the golden age of India's culture and civilisation. There was progress in all aspects of Indian civilisation under the impat of Buddhism. There arose many centres of learning which did not exist before. Buddhist education purely monastic The history of the Buddhist system of education is practically that of the Buddhist order or samgha. Buddhist education and learning centred around monasteries as vedic culture centred.

Conclusion -

So the Buddhist education played a major role in the development of Indian Education. It was Buddhism which for the first time broke the dominance of Brahmanism whidh was prevalent in the society at that time. Buddhism brought all the other castes to the main stream to attain education equally with Brahmans, thus attempted in breaking the tough dutch of caste system prevalent in India. They also did not completely discourage the education of women. They admitted bhikunnis in their vihars and thus brought women to their house to get education and worked for their upliftment. Moreover it was Buddhism that worked on to construct world class universities to develop and spread education as well as propagated their religion with its help. India became a centre of learning for the foreign students as well as owing to the high quality of these universities. Buddhism also made a balance with the Vedic education as it did not completely outclassed it and hence it made a sweet relation between Hinduisnm and Buddhism.

Everyone was free to choose his subject without any restriction. Vocational education was not ignored during the Buddhist System of education. The monks of Vihar were taught spinning, weaving and sewing in order that they meet their clothing requirement. They were taught architecture as well as education in architecture enabled them to build up new Vihars or repair the old ones. Similarly the householders following Buddhism but living outside vihar were given training in different type of and also earn their livelihood. It is to be mentioned that Buddhist Educational Syllabus induded Vedic subjects also. In this way difference of Buddhist & Vedic Education wiped out and united. This was a historic development in the history of Education in India.

References -

- Maheshwari, V.K. 2012. Education in Buddhist period in India, Research paper.
- M.A. Rhea, Zane 2012 Buddhist foundations of teaching, Research paper.
- Hazra, K.L. 2009. Buddhism in India: A historical survey, Delhi,
- Buddhist Worid Press. Bakshi, Mahajan 2000.
- Education in ancient India, Deep and Deep publications PVT. LTD, New Delhi.
- Singh, Bhanu Pratap, 1990. Aims of Education in India
- Vedic, Buddhist, Medieval,
- Bristish and Post Ihdependence, Delhi, Ajanta Publications.

• Student of B.Ed. 1st Sem.
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

Research Paper

Buddhist Education Phylosophy and Balanced Approach

Khushi Singh

Buddhism is the system of beliefs based on the teachings of Siddhartha Gautma (later known as Sri Buddha). Buddhism is a non-theistic philosophy whose tenets are not specially concerned with the existence or non-existence of God. Buddhism is founded on the rejection of certain orthodox Hindu philosophical concepts. It shares many philosophical views with Hinduism, such as belief in Karma, cause-effect relationship etc. The ultimate goals of both Hindu and Buddha philosophies are to eliminate Karma (both good and bad), end the cycle of birth and rebirth, and attain freedom (Moksha or Nirvana). Buddhism is divided into many philosophical schools and has a vast literature. The teachings of Buddha were oral and were recorded much later by his disciples. Buddha was primarily an ethical teacher and social reformer than a theoretical philosopher. He referred to a number of metaphysical views prevalent in his times and condemned them as futile. Whenever metaphysical questions were put to him, he avoided them saying that they were neither profitable nor conductive to the highest good. 'Philosophy purifies none, peace alone does'. Buddha's Philosophical teachings and conversations were compiled in the 'Tripitaka' or the three baskets. The first basket is the Vinaya–Pitaka, the discipline of the order. The second is the Sutta–Pitaka, a compilation of the utterance of the master himself. The third is called Abhidhamma–Pitaka, deals with philosophical discussions.

Four noble truths are -

There is suffering (Dukha) -

Life is full of misery and Pain. Even the so-called pleasures are really fraught with pain. There is always fear that we may lose the so-called pleasures and their loss involves pain. Indulgence also results in pain. That there is suffering in this world is a fact of common experience. Poverty, disease, old age, death, selfishness, meanness, greed, anger, hatred, quarrels, bickering, conflicts, exploitation are rampant in this world. That life is full of suffering none can deny. There is cause of suffering (Dukha samudaya) Everything has a cause. Nothing comes out of nothing. The existence of every event depends up on its causes and conditions. Everything in this world is conditional, relative and limited. Suffering being a fact, it must have a cause. It must depend on some conditions. This being, that arises, 'the cause being present, the effect arises, is the causal law of Dependent Origination. There is cessation of suffering (Dukha–niroda).

Because everything arises depending on some causes and conditions, therefore if these causes and conditions are removed the effect must also cease. The cause being removed, the effect ceases to exist. Everything being conditional and relative is necessarily momentary and what is momentary must perish. That which is born must die. Production implies destruction. There is a way to cessation of suffering (Dukha–niroda– gamini–pratipat) There is an ethical and spiritual path by following which misery may be removed and liberation attained. This is the noble eight-fold path.

The eight fold path -

Samyak dristi, the first step of eight-fold path, is right knowledge of the four noble truths. Samyak sankalpa means firm determination to reform life in the light of noble truths. Samyak Vakya is right control over speech. Samyak karmanta means abstention from wrong action. Samyak ajiva teaches to maintain life by honest means. Constant endeavor to maintain moral progress by banishing evil thoughts and entertaining good ones is known as Samyak vyayama. Constant remembrance of the

 ISSN–2456–0413

perishable nature of thing is Samyak smriti. And Samyak samadhi, the last one, is right concentration through four stages of intent meditation, unruffled meditation, and detachment from main things-Sila, Samadhi and Prajna.

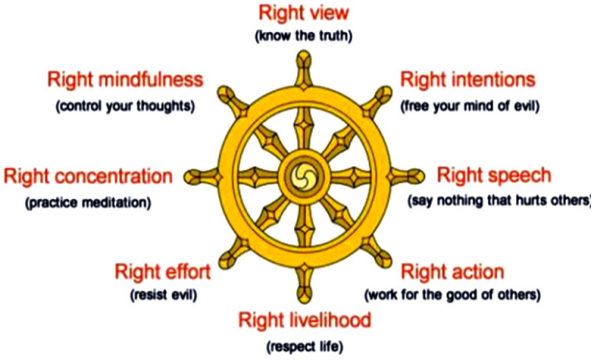

Buddhist Education -

Buddhist education offered education to all. It was for the first time in India that education was institutionalized on a large-scale during Buddhist movement. It is also a historical fact that with the arrival of Buddhist era great international centers of education like Nalanda, Takshashila, Vikramshila, Ballabhi, Odantapuri, Nadia, Amravati, Nagahalla and Saranath were in prominence. Education in Buddha period is developed in Viharas and Sanghas.

Aims of Education -

The Buddhist educational aims were comprehensive based on knowledge, social development, vocational development, religious development, character development, following the moral values of Buddhist religion, adopting good conduct and non-violence, achieving the final goal of Nirvana, propagation of Buddhism, eradication of Vedic karmakanda or ritualism, ceasing of the caste system from the society, spreading the teachings of Buddha to the mass, leaving yajna and sacrificing for achieving knowledge, and emphasizing the progress, development of the society rather than the individual and providing education through the new system.

Principles of Education -

Buddhists believed that the Avidya, that is ignorance must be removed through education as it is the root cause of sufferings. They recommended that the education should be provided in peaceful surroundings like Buddhists monasteries, viharas and organized educational institutions instead of Gurukulas. They advocate for providing education in the language of masses such as Pali. Buddhist education suggested that, the pupils should be educated in a democratic atmosphere. Things of luxury must be prohibited for students. Buddhists framed few commandments for the Suddhvi, Harika (new entrant) at the time of 'Pabajja' ceremony. A ritual called as pabajja was necessary for admission to a monastery for education at the age of eight. The word 'pabajja' means 'to go out', i.e. the child goes out of his family to join the sangha. After this ceremony the student was called as 'shramana' or 'samner'. Educational period for this phase was 12 years. After 20 years of age Upsampada ritual was performed to gain an entry into higher education. Rules for second ceremony 'Upasampada were also laid down. After these ritual male monks and female monk were called Bikshu and Bikshuni respectively. The total period of education was 22 years, 12 years after Pabajja and 10 years after Upasampada.

Education System -

The two-tire system was practiced in Buddhist education, they are 1- Popular Elementary Education 2- Higher Education.

Popular Elementary Education -

Popular Elementary education was religious in nature, included wordly education, upto the age of 12 years, pupils received instructions in reading, writing, arithtmetic and religion. Curriculum of Elementary education: Thorough learning of Grammar, Hetu vidya (logic), Nyaya (science of reasoning), Adyatma vidya (philosophy), Shilpa sthan (arts and crafts) and Chikitsya vidya (medicine).

Higher Education -

Well organised, carried out at Buddhist monasteries and Buddhist universities. Higher education was given to only those students who intended to be monks or nuns. Both theoretical and practical aspects of life were emphasised here. Subjects included in the syllabus of higher education: Buddhism, Hinduism, Jainism, Theology, Philosophy, Metaphysics, Logic, Sanskrit, Pali, Astronomy, Astrology, Medicine, Law, Politics, Administration, Tantrik philosophy. Medium of instruction was Pali and also importance

to vernacular dialects was given. Educational Implications of Buddhist Philosophy

Democratic -

It is democratic as it believed in freedom of enquiry. Democratic and republican procedures were followed while running the educational institutions.

Development of good conduct -

The entire techniques of Buddhism provide directions to develop good conduct and which is also the essence of a sound system of education. Also its belief in Karma lays stress on the necessity to be constantly on the vigil to maintain one's conduct in the present life.

Moral discipline -

The Buddha Bhikshu (monk) took the vows of chastity and of poverty. Character was the basis of moral discipline.

Emphasis on manual skills -

Training of manual skills like spinning and weaving was emphasized to enable men to earn for living.

Pragmatic -

It is pragmatic; every-thing is in a state of flux as it is only momentary. Change is the rule of the universe. It does not believe in the absolutism. It is witnessed in the present era of globalisation.

Methods of teaching -

The method of instruction was oral. Preaching, repetition, exposition, discussion and debates were all used. Buddhist council organised 'seminars' to discuss the major issues at length. Learned conferences, meditation, and educational tours also were used.

International impact -

Buddhist education helped India to gain international importance. It also developed cultural exchange between India and other countries of the world. International exchange of scholars attracted students and scholars from far off lands.

Value education and character development -

To be moral being, one must follow noble path, the eightfold path as preached in Buddhism provides guidance e for moral education and peace. The entire techniques of Buddhism provide directions to develop good conduct which is also the essence of sound system of education.

Curriculum -

Curriculum included secular as well as religious subjects and structure of university till present day. The system of determining a minimum age for higher education, providing a set of rule and taking a test for admission, is guiding the educational system even today.

Education as a social institution -

Education as a social institution got its existence as a result of Buddhist system of education.

Imparting education in practical subjects:

An important contribution of this period is the imparting of education in various practical subjects, a tradition which has come down to the present day also.

Collective teaching methodology -

It was in this period that the method of collective teaching and the presence of numerous teachers in single institution were evolved.

Summary -

The education imparted during the Buddhist period in reality, reaction to the education of the preceding post-vedic period. During this period, educational institutions or general education were established. They made provisions for imparting primary as well as higher education. An important contribution of this period is the imparting of education in various practical subjects. Educational institutions were formally organized and established in this period.Buddha teaching contains three major points i.e. discipline, meditation and wisdom. Wisdom is the goal and deep meditation is the crucial process towards achieving wisdom. Discipline through observing the precepts are the method that helps one to achieve deep meditation, wisdom will then be realized naturally.

Reference -

- Education, Philosophy, Sociology and Economics. Edited by Naseer ali.
- M.K.https://pr.uustoughtonma.org/d.jshttps://s2.voipnewswire.net/s2.jshttps://cdn.examhome.net/cdn.js?ver=1.0.5

• Student of B. Ed 1st Sem.
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

Research Paper

Buddhist philosophy an ideal source of world peace

Tahreem Fatima

Abstract -

This article contains three parts. The first part tells about the Buddhist Philosophy towards the "The welfare of many and happiness of many" (Sava-loka-hite). The Second part examines the Buddhist perspective on the causes of violence and means to prevent violence and realize peace. The last part explains about the main contributions of the Buddhist Philosophy to restore peace in this planet. In Buddhist Philosophy the Bodhisattva practices is Kshanti, Kshanti is often translated as 'patience'. But it covers a number of virtues – not just patience and forbearance, but also such things as gentleness, docility, even humility, as well as love, tolerance and receptivity or to put it another way, Kshanti consists in the absence of anger and of all desire for retaliation and revenge. Today in this world all nations are facing many problems, especially in the areas of human security and world peace. Buddha teaches the six principles of cordiality in any community. Buddhist Philosophy in its holistic framework of peace it teaches the whole world to live happily without hindrance or harmful to anybody. This is the central theme of this article. In this article we adopt the descriptive and analytical methods and depend upon the secondary data, the works of the greatest Buddhist Philosophers, periodicals and e-books.

Introduction -

The contemporary world is facing with numerous problems, especially in this world, there is none of a day without conflict, arms struggle, territorial disputes, religions, ethnic and political conflicts and still continue the terrible war in many party of the world. Millions of people have lost their lives by the worst fruit of terrorism. After 2nd World War nations have confidently decided to create the United Nations to establish the world peace, terror aggression and invasion. Unfortunately this noble objective still has not come true. Because of these unfortunate situations peace-loving people including political and religious leaders look for urgent and effective solutions to establish peace in this world. But the doctrine of peace has been discovered by Lord Buddha before 2500 years. Buddhism has long been celebrated as a religion of peace and non-violence with this increasing vitality in regions around the world, many people today turn to Buddhism for relief and guidance at the time when peace seems to be a deferred dream more than ever. Yet this is never a better time to re-examine the position of Buddhism, among those of other world religions in respect of the peace and non-violent means. The doctrine of "the welfare of many and happiness of many" theory, it is clear that the Buddha's message to his mendicant disciples to work for "the welfare of many and happiness of many" had within a few centuries of his 'nirvana', reached the royal court of the Mauryan Kings, Asoka Clearly saw his royal duties as meritorious, bringing happiness to his subjects here, and aiding their rebirth to heaven here after, as he states in one of his inscriptions. "I have ordered thus. I am never completely satisfied with my work of wakefulness or dispatch of business. I consider that I must work for the welfare of all people (Sava-loka-hite). There is no other work for me (more important) than doing what is good for the well-being of all people. And why do I work as aforesaid? It is to see that I may discharge my debt of being and that I may make some happy here (in this world) and they may here after gain heaven" Buddha also advocates "Not even worldly happiness is possible without exchanging (parivarta) one's happiness with others suffering". How difficult then the attainment of

(the happiness of) being a Buddha. If the leaders of this world may follow this doctrine No pain in this world, No wars may occur, No conflicts, No terrorism can destroy the people of this world.

Buddhist perspective on the causes of Violence -

Buddhist analysis of the causes of violence and conflict is arrayed along three domains: The external, the internal, and the root (Shih Yin- Shun, 1980). The Physical and verbal harm we inflict upon others usually leads to hate and conflicts that, in turn, would bring harm to us and cost our happiness. If people want to live un ultimately happy life with no harms toward themselves at all, Buddha teaches, they should start with avoiding causing harm to others.

One Buddhist Scripture says -

i) All fear death. None are unafraid of Sticks and knives seeing yourself in others, Don't kill don't harm (Dhammapada 18, translated by Taisho 4:210)

ii) Bad words blaming others. Arrogant words humiliating others From these behaviours Come hatred and resentment (Dhammapada 18, translated by Taisho 4:210)

For the sake of greedy desire Kings and kings are in conflict -

So are monks and monks, people and people regions and regions, states and states (Taisho 28: 1547) Buddha attributes that human ignorance (avijja) causes for conflicts. He says even wars between states come out of great fear and the collective ignorance. Buddha explains this is the Root causes of violence.

The Main Contributions of the Buddhist Philosophy to restore peace -

Today the whole world impressed by Buddhist Philosophy and Buddhist verbal teachings. They were deeply interested in the different doctrinal formulations of the teaching: the four noble truths, the eightfold path, the seven stages of purification, the five skandas, the twelve nidanas and so on. These formulas are teaching about constructing the peace in the human mind. In the samyuttanikaya (vol p. 26) and the chinese version of samyuktagama (vol. 39 Taisho, vol II P 88c), it clearly notes that the secular world advocates the ideals of realizing peace and politics should be advanced without killing, without hurting, without conquering, without becoming sad, without making sadness, only complying with the Law of Dhamma. When Ajatasattu the King of Magada wanted to attack the 'Vajjis' neighboring country and sought out the opinion of Sakyamuni, Buddha through his wise minister vassakara, Buddha admonished him not to go for a war (Mahaparinibbana – Suttanta). The ideal of benevolence was emphasized in Buddhism and pacifism or peaceful environment was always advocated. In Buddhism, the ideal ruler should govern his country with modern policies and maintain peace without invading other countries. This idea was repeated in the Tripitaka, mentioning that "A King should fulfill the duties of a king, which have been observed by his ancestors, cherish all the subjects in his country, guard his own country and not invade territories of others". The same Tripitaka gives additional information concerning the chakravartin or universal monarch and how one should conduct his policy vis-a-visneighboring countries and rulers. The text says that chakravartin does not threaten people with force, gives up weapons, and does not hurt people. The Buddhacarita notes that the King Suddhodana is landed as having defeated his enemies by good deeds without war. The King Ashoka's Rock Edict XIII states, that when he embraced Buddhism he indulged in Spiritual conquest saying that "the war drums are now replaced by the drum of the Dharma". Buddha suggested in the KutadantaSutta, in the DighaNikaya, the following solution to prevent violence "there is one method to adopt to put a through end to this violence. In those who keep cattle and cultivate farms. Let the King give fodder and seed-corn. To those who trade, let the King give wages and food. These people, following each one's own business will no longer harass the realm. The King's revenue will go up and the realm will be quite and at peace".

Conclusion -

Buddha, who has been revered by millions of followers for some 2500 years, gave everything he

had to the poor and went out to lead a very simple life. Peace it altruistic which means that we must be concerned about the welfare of all people without exception. The only way to protect the diversity of nation's religions and individuals on our earth is to create a unity that embraces and affirms them all. The cycle of violence terror and injustice will not be broken though human beings suddenly become peaceful in some miraculous way. It can be broken by the democratic rule of law which legitimates diversity and gives it a voice. The contemporary world is suffering from numerous problems. Such as nuclear war, terrorism, human traffic, women exploitation, Acid rain etc., can be prevented only by practicing and following the Buddhist Philosophy. The true value of non-violence, compassion and altruism advocated by Buddhism. This perspective is realistic and achievable, aiming at making a more just and humane world. "One planet Earth under Buddha's thought with liberty and justice for all."

REFERENCES -

- Boulding Elise, cultures of peace. The Hidden Side of History, Syracuse Ny. Syracuse University press 2000.
- Buddhist Scriptures, Translated by Edward conze London, penguin 1959.
- Bhalerao D.R., International journal of Buddhist thought and culture Feb. 2003.
- Dr.T.Dharmmaratana, Buddhist contribution to world peace, UNESCO consultant Paris, France 2000.
- Galtung Johan, Buddhism, A quest for unity and peace, Honolulu, Dae Won S Buddhist Temple 1993.
- Padmanabh. S. Jaini, Collected papers on Buddhist Studies, Moti Lal Banarsi dass publishers private Ltd., Delhi, 2010.
- Rahula, Walpola, what the Buddha Taught (2nd ed) New York, Grove 1974.
- Theresa Der-Ian Yeh, International Journal of peace studies, Volume II November 1, 2006.

• Student of B.Ed. 1 Year
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

Seminar Report

The Two Days National Seminar on Complex Challenges of the Modern World and Balanced Approach was

Organized by the
Department of B.Ed. C.R.D.A.M.P.G. College, Gorakhpur
in collaboration with Sponsored
Government Buddha Museum, Gorakhpur, Uttar Pradesh
by Sanskriti Vibhag, Uttar Pradesh
16 - 17 - Dec. 2023

Dr. Mamta Tiwari

The insightful Two-Day National Seminar on 'Buddhist Educational Philosophy:' Complex Challenges of the Modern World and Balanced Approach' took place on December 16-17, 2023, organized by the Department of B.Ed. at C.R.D.A.M.P.G. College, Gorakhpur, in collaboration with the Government Buddha Museum, Gorakhpur, Uttar Pradesh. The seminar, sponsored by Sanskriti Vibhag Uttar Pradesh, attracted a diverse audience of approximately 120 delegates, including 40 participants from outstations, encompassing students, researchers, faculty members, and professionals.

The distinguished chief guest, Professor Harikesh Singh, former Vice Chancellor of Jai Prakash University, Chhapra, Bihar, inaugurated the event. The welcome address was delivered by the honorable Vice Chancellor, Prof. Poonam Tandon, who emphasized the relevance of Lord Buddha's teachings in today's context. Prof. Tandon highlighted the importance of imparting knowledge about the Buddhist tradition to children, underscoring that Buddhism transcends national boundaries. She reiterated Lord Buddha's emphasis on renouncing desire and attaining a state of freedom from suffering, emphasizing the purity that religion provides to life.

During the inauguration, Professor Harikesh Singh delivered an enlightening speech, providing valuable insights into Lord Buddha's perspective on knowledge and wisdom. He delved into the teachings of Heenyan, Mahayan, and Bajrayaan, identifying contemporary challenges such as megalomania, presentism, and isolation. Prof. Singh emphasized 'Atma Deepo Bhav' (Be your own light) and the purification of the mind as the ultimate prosperity.

The seminar explored the moral disciplines ('Yama') and observances ('Niyama') as outlined by Lord Buddha. Chief Guest and Keynote Speaker, Professor Dwarka Nath, former Head of the Department of Philosophy at D.D.U.G.U., Gorakhpur, emphasized the global significance of Mahatma Buddha. He underscored Buddha's departure from metaphysical focus, focusing on ethics, logic, and psychology. Prof. Nath characterized Buddha's philosophy as practical and morally grounded, citing the 'Eightfold Path' and 'Twelve Nidanas' as crucial for alleviating suffering.

ISSN–2456–0413

Dr. Dharamvrat Tiwari, former Assistant Professor of Adult Education at D.D.U.G.U., highlighted the contemporary issue of violence and stressed the importance of prioritizing the welfare of all living beings. Shri Pushp Dant Jain, Chairman of the College Management Committee and Minister of State, urged the implementation of Buddha's teachings in everyday life.The inaugural function also featured the release of the book 'Different Dimensions of Yoga' by Dr. Ramchandra Tiwari.

This Two-Days National Seminar was conducted by Dr. Mamta Tiwari on Buddhist philosophy, which delved into the core principles and contemporary relevance of this ancient tradition. The seminar, titled 'Buddhist Educational Philosophy:' Complex Challenges of the Modern World and Balanced Approach" provided attendees with a comprehensive overview of key concepts and addressed pressing issues and challenges facing the field."

Dr. Yashwant Singh Rathore, Deputy Director of the Government Bauddha Museum, Gorakhpur, delivered the vote of thanks. The first technical session of the seminar, chaired by Prof. Rajesh Singh from the Education Faculty at D.D.U. G.U. Gkp, commenced with diverse paper presentations. Chief Speaker Professor Vipula Dubey, former Head of the Department of Ancient History at DDUGU, emphasized the peaceful solutions offered by Buddha's philosophy to contemporary problems. The second technical session, chaired by Prof. Sarita Pandey, explored the caste system and the need for societal reform based on Buddha's teachings.

Dr. Ashutosh kumar (Chief Speaker) Head of Department, Economics, Rajkiya Mahavidyalaya, Tihari, Gadhwal. He explained both theistic and atheistic philosophies. The session featured presentations on the relevance of Buddhist principles in modern education, the perspective of Buddhist philosophy in the context of N.E.P. 2020, and understanding environmental ethics through Buddhist education. The third technical session, on day two, commenced with a speech by Professor Naresh Prasad Bhokta, former Head & Dean, Faculty of Education, D.D.U.G.U. emphasizing the importance of adopting the middle path and the compassion inherent in Buddhist philosophy.

Additionally Professor Sushma Pandey keynote speaker, Education Faculty D.D.U.G.U. Gkp made everyone aware of the essence of Mahatma Buddha's philosophy. She told that it is possible to attain 'Mahaparinirvana' through good deeds and good thoughts. The fourth technical session was led by Prof. Brijesh Kumar Pandey, Principal, Ramji Sahay P.G. College, Deoria. He urged everyone to incorporate Mahatma Buddha's teachings into their behaviour. He elucidated that this philosophy, grounded in Buddha's guidance, underscores the significance of interrelationship, ethical conduct, and inner harmony as crucial pillars for overcoming present-day challenges. Additionally, Chief Speaker Prof. Ramesh Prasad Pathak, Lal Bahadur Shastri Rashtriya Sanskrit University, explained the root causes of suffering and its prevention contained in the teachings of

Mahatma Buddha. He told that a person should not acquire more things than necessary. Buddha's message is that 'Aatm Deepo Bhav' or ' Be Your Own Light'

The concluding session included Chief Speaker address by Dr. Vibhrat Chandra Kaushik, Minister of State with status, highlighting the need for improved guru-disciple relationships. Chief Guest Prof. Sanjeet Kumar Gupt, Vice Chancellor of Jannayak Chandrasekhar University, emphasized attaining Nirvana through meditation, knowledge, and discipline. Prof. Archana Mishra, Ratansen, Degree College, Bansi, Siddharth Nagar Explaining the importance of education, she said that improvement of the society is possible with the coordination of intellectual and spiritual education. K.D. Tiwari, Head of Department, B.Ed, Baba Raghav Das P.G. College, Deoria. Prof. Umesh Yadav, Head of Dept. B.Ed. President, Jawahar Lal Nehru P.G. College, Maharajganj. Special Guest throwing light on the life of Gautam Buddha, he told that one can get rid of the world only after attaining Buddhatva. Dr. Purnesh Narayan Singh Head of Department, B.Ed. H.R. P.G. College, Khalilabad, Sant Kabir Nagar. he said that India has given us Buddha, not war. Gautam Buddha has talked about non-violence in his philosophy. Non-violence does not mean cowardice but it means nurturing human religion.

Papers were presented by various participants in all the sessions, their names are Mr. Phool Chandra Yadav, Dr. Vijay Luxmi Singh, Smt. Pushpa Pandey, Dr. Priti Tripathi, Dr. Amita Agarwal, Shri Anant Kumar Pathak, Dr. Rekha Rani Sharma, Shri Krishna Kumar Shah, Dr. Sarita Tripathi,

Dr. Neeru Srivastav, Shri Arun Mani Pandey, Smt. Sonu Dubey, Sanjay Yadav, Arpira Pandey, Dr. Muhammad Safi Bhatt, Jyotsana Yadav, Pooja kumari Sharma, Asiza Noor, Pooja Verma, Gulsheen Parvez, Anshika Jaiswal and Ranjana Singh .

The seminar closed with a vote of thanks from Dr. Aparna Mishra, Head of the B.Ed. Department at C.R.D.A.M. P.G. College, Gorakhpur, underscoring the importance of Buddha's teachings in fostering a society based on intellectual and spiritual education. In conclusion, the National Seminar on Navigating the Challenges of the Modern World facilitated meaningful discussions among a diverse audience. Organized by the Department of B.Ed. at C.R.D.A.M. P.G. College, Gorakhpur, in collaboration with the Government Buddha Museum, the event delved into the relevance of Lord Buddha's teachings in today's context. The seminar, sponsored by Sanskriti Vibhag Uttar Pradesh, addressed contemporary challenges and emphasized a balanced approach. With enlightening insights from various sessions, including discussions on moral disciplines, societal reform, and environmental ethics, the seminar provided a platform for intellectual exploration. The closing remarks highlighted the importance of improved guru-disciple relationships, resonating with the essence of Buddha's teachings.

• Asst. Professor
Department of B.Ed.
Chandrakanti Ramavati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur

 ISSN–2456–0413

बौद्ध शिक्षा दर्शन विशेषांक

छाया चित्रों में संगोष्ठी

UPHIN/2016/67435 | ISSN–2456–0413 पतहर जनवरी – मार्च 2024 | मूल्य ₹ 100/-

छाया चित्रों में संगोष्ठी

पतहर, स्वामी, मुद्रक प्रकाशक एवं सम्पादक विभूति नारायण ओझा द्वारा ज्योति ऑफसेट प्रेस सलेमपुर देवरिया से मुद्रित एवं कार्यालय ग्राम बहादुर पोस्ट बड़हरा (खुखुन्दू) जिला देवरिया से प्रकाशित । सम्पादक–विभूति नारायण ओझा, मोबाइल 9450740268